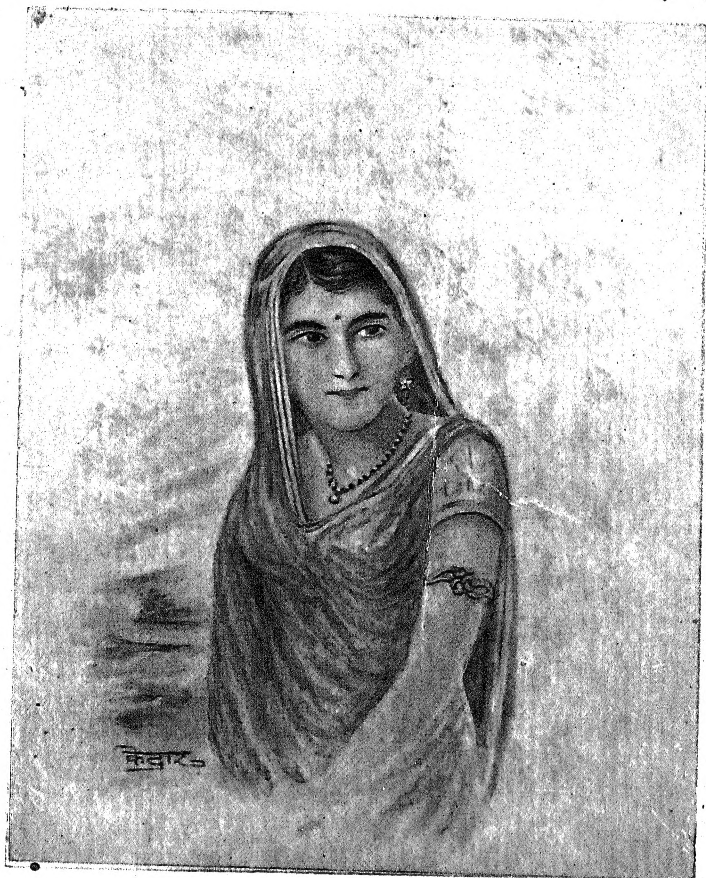
मनोरमा



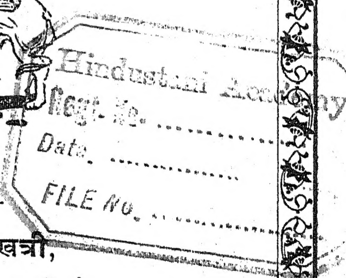
अनुवादक—बा० गोपालराम
गहमर निवासी

मनोरमा

एक जादूगरनी
का रहस्यपूर्ण विचित्र हाल।

बा० गोपालराम गहमर निवासी लिखित।





प्रकाशक—
दुर्गाप्रसाद खत्री,
प्रोप्राइटर लहरी बुकडिपो,
बुलानाला, काशी।

तृतीय बार] १९२७ [मूल्य—।।।)

केवल ४ पृष्ठ

मैनेजर श्रीसुखदेवलाल द्वारा सर्वहितैषी प्रेस, हौजकटोरा काशी में मुद्रित।

भूमिका

यह जादूगरनी मनोरमा वंगभाषा की " मनोरमा " का अनुवाद मात्र है। कामरूप देशवासिनी जुमेलिया की अद्भुत पैशाचिक लीला का इसमें ऐसा वर्णन है जिसको पढ़ कर लोग दाँतों उँगली दबावेंगे। इसके पढ़ने वाले यह भी जानेंगे कि कामरूप देश की स्त्रियों में कितना साहस और कैसा अमानुषिक पराक्रम होता है। इस अमानुषिक साहस और पराक्रम भरे हृदय में जब प्रेम विकाश होता है तब वह वांञ्छनीय प्रेम भी कितना भयानक, कितना आवेगमय, कैसा दिग्विदिक ज्ञान शून्य हो उठता है और उस पैशाचिक प्रेम के लिये अतृप्त लालसा से प्रेमोन्मादिनी होकर वह स्त्रियाँ कैसे कैसे भयानक कार्य कर डालती हैं इसमें उसका बहुत कुछ परिचय मिलेगा। पुस्तक के पढ़ने वाले एक ही रात में एक हत्यारिणी के हाथ से पाँच गुप्त नर नारी हत्या का हाल जानेंगे।

अनुवादक—

गोपालराम गहमर निवासी।

मनोरमा

पहला बयान

स्वामी और स्त्री

"बाबू कब आवेंगे ?" देवेन्द्रबाबू की सजी सजाई कोठरी में कई मिनिट बैठने बाद उनकी स्त्री रेवती से दूसरी एक घूंघटवाली सुरूपा ने नम्र स्वर से पूछा। रेवती ने कहा—"अभी आते हैं, वह आज कहीं बाहर नहीं गये इसी महल्ले में किसी से मिलने गये हैं।"

घूंघटवाली ने लम्बी सांस ली और कहा—"भगवान करे जल्दी लौटें, बड़ी बात हुई जो आज गये नहीं।"

रेवती ने घूंघटवाली को आतुर देखकर पूछा—"क्यों ऐसा क्या काम है ? क्या हुआ है ?"

घूंघटवाली बोली—"क्या हुआ है की बात मत पूछो। बड़ी आफत में पड़ी हूं। उनके विना मेरा निस्तार नहीं है।"

रेवती ने कहा—"अच्छा वह भी अब आते ही हैं। पहिले तुम अपना यह लम्बा चौड़ा ओढ़ना उतार घूंघट खोलो। मैं तो स्त्री हूं। यहां कोई मर्द मानुस नहीं है। ऐसी गर्मी में कब तक मुंह ढाँपे रहोगी ?"

"इसके वास्ते आप हमको माफ करना!" कह कर घूंघटवाली

चुप हो गई। इतने में बाहर से किसी के आने की आहट मिली। "लो बाबू आते हैं।" कहकर रेवती उसी ओर को चली गई जिधर से आने की आहट मिली थी।

जीने से चढ़कर देवेन्द्रबाबू ऊपर दालान में कदम रखते हैं कि रेवती सामने आई और मुस्कुरा कर बोली—"आज तुम्हारा एक मवक्किल आया है।"

देवेन्द्रबाबू ने भौंहें सिकोड़ कर कहा—"खैर कहाँ है?"

रेवती०। भीतर जाओ अन्दर तुम्हारे शयनागार में है।

देवेन्द्र०। भीतर शयनागार में मवक्किल है! दिल्लगी करती हो क्या?

रेवती०। दिल्लगी नहीं! सच्चे एक बढ़िया मवक्किल आया है। अलबत्ते मवक्किल की बात झूठी है; वह मवक्किल नहीं मवक्किलानी है। तुम्हारे शयनागार में बैठी है। जाओ देखो, लेकिन मवक्किल को देखकर अन्न जल नहीं छोड़ देना, उसके रूप में भूल कर हमको नहीं भूल जाना, जाव जल्दी जाव, बड़ी देर से बैठी है।

रेवती चली गयी। देवेन्द्रबाबू ने शयनागार में प्रवेश किया।



दूसरा बयान

घटनाप्रसङ्ग-पूर्व्वांश

देवेन्द्रबाबू को देखकर घूंघटवाली जल्दी से उठ खड़ी हुई और ताबरतोर उनसे पूछा—"क्या आपही जासूस देवेन्द्रबाबू हैं ?"

देवेन्द्र०। हां हमी हैं, बैठो।

घूंघट०। बाबू जी! मैं बड़ी बिपत्ति में पड़ी हूं, ऐसी बिपत्ति ऐसी घटना सदा नहीं घटती। मेरी घटना बड़ी गोलक धन्धे की है।

देवेन्द्र०। हां ?

घूंघट०। हां, कहिये तो मैं अपनी दुःख की कथा कहूं।

देवेन्द्र०। उसको सुनने से पहले हमें यह जानना है कि इस काम में मुझे कौन नियत करेगा ?

घूंघट०। क्यों ? इसके वास्ते तो मैं खुद आई हूं। मैंही आपसे सहायता मांगती हूं।

देवेन्द्र०। तुम कौन हो ?

घूंघट०। मेरा नाम मनोरमा है।

देवेन्द्र। व्याह हुआ या नहीं ?

घूंघट०। नहीं मैं कुँवारी हूं।

देवेन्द्र०। खैर, तो मैं जिसके साथ इस वक्त बातें करता हूं उस को पहले पहचान लेना बहुत जरूरी है। पीछे तुम्हारा हाल सुनना है। हमारे सामने तुमको घूंघट खोलने में कुछ लज्जा नहीं चाहिये, हमको तुम अपने भाई बाप के समान जानो।

मनो० । नहीं ! ठीक नहीं कह सकती ।

देवे० । अच्छा उनमें कोई तुम्हारी रिश्तेदारिन है कि नहीं ?

मनो० । हां उनमें से एक हमारी मौसी की लड़की मौसेरी बहन है, लेकिन दूसरी नातेदार नहीं बैरिन है ।

देवे० । अच्छा तो उन तीनों में से तुम एक हो । भला तीनों की उमर बराबर ही है ?

मनो० । मैं और मेरी बहन एक ही दिन एक ही समय पैदा हुई थी । मेरी बहन का जन्मस्थान चेतला गोपालनगर और मेरा खिदिरपुर । मैं अपने बाप के मकान खिदिरपुर आनन्दकुटीर ही में पैदा हुई थी । लेकिन तीसरी के जन्म या उमर का ठीक हाल मुझे मालूम नहीं है ।

देवे० । तो वही मानो सब अनर्थों की जड़ है । अच्छा तुम्हारी मौसेरी बहन का नाम क्या है ?

मनो० । उसका नाम है कुमोदिनी ।

देवे० । तुम खूब जानती हो कि कुमोदिनी तुम्हारी सगी मौसी की बेटी है ?

मनो० । हां कुमोदिनी की माँ मेरी माँ की जौंआ बहन है ।

देवे० । अच्छा देखो अभी तुमसे हमें बहुत सी बात पूछने की है । तुम लोगों में कहीं गोलमाल न हो इस डर से नम्बर देना ठीक है । तुम अपने को नम्बर एक जानियो, कुमोदिनी को नंबर दो और वह बेजान पहचानवाली नंबर तीन है । अब यह बतलाओ तुमने नंबर तीन का हाल कब से जाना है ?

मनो० । आज बारह बरस के नीचे ऊँचे हुआ भू कैलाश में हमारे एक घर नातेदार थे । किसी प्रयोजन से नेवते में मैं एक दिन उनके घर गई । वहीं नम्बर तीन को देखा था ।

देवे० । ऐसी मुलाकात में फिर कैसे परिचय हुआ ?

मनो० । परिचय क्या हुआ बिलकुल जाल हुआ । वह परिचय बड़ा भयङ्कर है । तीन नम्बरवाली हमको देखते ही बहन कहकर पास आके खड़ी हो गई और ऐसा भाव दिखाने लगी जैसे हमारी नंबर दो वाली बहन कुमोदनी ही हो ।

देवे० । जब तुम लोगों में रत्ती भर भी फरक नहीं था तब तु मने कैसे जाना कि यह तुम्हारी बहन नहीं है ?

मनो० । उस वक्त कुमोदनी बहुत बीमार थी, खाट पर से उठकर बैठने की भी उसको ताक़त नहीं थी ।

देवे० । तुम्हें ठीक मालूम है कि कुमोदिनी को उठकर बैठने की ताक़त नहीं थी ? तुम फिर लौट कर उसको देखने गई थीं ?

मनो० । मैं तो नहीं गई लेकिन उस वक्त जो मेरे पास नौकर था उसको भेजा था । वैसा भरोसे का आदमी संसार में बहुत कम होगा ।

देवे० । अब वह कहां है ?

मनो० । तीन बरस हुआ उसका देहान्त हो गया । मुझे विश्वास है कि वह जहर देकर मार डाला गया है ।

देवे० । तुमको ऐसा विश्वास क्यों हुआ ?

मनो० । उसका एक दम देहान्त होने का समाचार सुनने से

ऐसा विश्वास हुआ। उसका मरना भी बड़ी भेद भरी घटना है।

देवे०। तुमने उसके मरने का कारण नहीं जांचा?

मनो०। वह मरती बेर मेरे पास नहीं था। इससे मैं कुछ खोज जांच नहीं कर सकी, वह नं० २ या नं० ३ के पास था।

देवे०। यह कैसे? वह तो तुम्हारा नौकर था न?

मनो०। नौकर था लेकिन वह भी भूल गया था, वह जानता था कि मेरे ही पास है लेकिन था दूसरे के पास।

देवेन्द्र०। वह तुम्हारा पुराना नौकर था? उमर में बूढ़ा था? वह तुम्हारेही खानपान से पला था?

मनो०। हां।

देवेन्द्र०। फिर ऐसा पुराना नौकर होकर कैसे ठगा गया?

मनो०। यह उसकी पहली भूल थी। इसी भूल में वह खतम भी हो गया।

देवे०। कैसे?

मनो०। कैसे कि वह कभी भूलता नहीं था, लेकिन मरने से पहले उसको भी अपनी भूल मालूम हो गई थी। उसने अपना ठगा जाना समझ लिया था। मरने से थोड़े समय पहले उसने यह भी समझ लिया था कि क्यों उसको बैरी ने ठगा था। फिर घात विचार कर वह मार डाला गया।

देवे०। उसने यह सब समझ लिया था यह बात तुझको कैसे मालूम हुई?

मनो०। उसने मरने से कुछ समय पहिलेएक चीठी भेजी थी।

देवे० । वह चीठी तुमको डाक से आई थी ?

मनो० । नहीं, एक आदमी दे गया था । उस चीठी को मैंने बड़े जतन से रक्खा है । इस वक्त भी मेरे पास है । यह देखिये ।

देवेन्द्र बाबू मनोरमा के हाथ से वह चीठी लेकर पढ़ने लगे । उसमें लिखा था:—

श्री कालीजी सहाय

"बहन ! मैं बेढब ठगा गया हूं । तुम्हीं मेरी मालिकिन हो यह अब मैंने ठीक समझ लिया है और इसके बारे में मैंने बहुत से सबूत जुटाये हैं । क्या जानें रास्ते में खो जाय इसी डर से उसको चीठी के साथ नहीं भेजता । सुभीता मिलने पर अवसर पाकर वह सब मैं तुम्हारे हाथ में दूंगा । कल मुझे बुखार हुआ था । आज उससे कुछ जोर का है, अगर कल मैं अच्छा न रहा और बुखार कुछ और बढ़ा तो मैं कल आदमी के हाथ सब काग़ज़ पत्र भेज दूंगा । अन्त में तुमको न पहचान कर जो मैंने भारी अपराध किया है उसको माफ कराने के वास्ते हाथ जोड़ता हूं ।

तुम्हारा चाकर—

रामगुलाम ।

विशेष—मेरे पास से उन सब प्रमाण पत्रों के चोरी जाने का डर नहीं है । मैंने उनको एक पुलिन्दे में बाँध कर ऐसी जगह रक्खा है जहां से कोई उन्हें निकाल नहीं सकता और पहचानने के लिये उस पर '१७ क' निशान लिख दिया है ।

चीठी पूरी पढ़ कर देवेन्द्र बाबू ने मनोरमा से पूछा--"इसके बाद भी रामगुलाम की कोई चीठी तुमको मिली थी ?

मनो०। नहीं ! उसी रात को उसका देहान्त हो गया।

देवे०। यह कैसे ? एक ही रोज के बुखार में वह मर गया ?

मनो०। बुखार नहीं मिरगी से मरने की बात सब जगह कही गई।

देवे०। अच्छा तो तुमको यह विश्वास है कि उसे जहर खिला कर मारा है। अच्छा उसके बाद '१७ क' पुलिन्दे की कुछ खोज तुमने की थी ?

मनो०। नहीं मैं कुछ भी नहीं कर सकी। करने की राह ही बन्द कर दी गई। उसके मरने के बाद ही मैं पागल बना कर कैद कर दी गई। मैं उस मामिले को कहूंगी तो जैसे सब लोग मेरी बात पर विश्वास नहीं करते वैसे आप भी नहीं करेंगे।

देवे०। अगर तुम आप नहीं बताओगी तो मैं खुद पता लगा-लूंगा। तुम बताओ चाहे न बताओ लेकिन जान रक्खो मुझे राई रत्ती सब प्रगट हो जायगा।

मनो०। जो हमारा धन दौलत हथिया कर चैन कर रही है उसी ने मुझे पागल बना कर एक कविराज के यहां कैद कर दिया था।

देवे०। कितने दिन से वह तुम्हारी जायदाद की मालकिन बनी है ?

मनो०। आज तीन बरस से।

देवे०। कितने दिन हुए तुमने कविराज के हाथ से छुट्टी पाई है ?

मनो० । आज दो दिन से ।

देवे० । अच्छा उस कविराज का मकान कहाँ और नाम क्या है ?

मनो० । मकान शिवपुर और नाम गोविन्दप्रसाद सेन है ।

देवे० । तो तुमको मालूम है कि नहीं कि तुम पागल हो और कैद से भाग आई हो इसलिये हम तुम्हें पकड़ कर फिर उसी के पास भेज सकते हैं ।

मनो० । अरे बापरे ! हे भगवान ! बाबूजी ! आप यह क्या कहते हैं ? मैं तो आपही की शरण आई हूं, आप जो चाहें करें, लेकिन कविराज के पास मुझे भेजने से मार डालना अच्छा है ।

देवे० । नहीं नहीं ! तुम पागल हो, तुम्हें पकड़ना ही हमको मुनासिब है ।



तीसरा बयान

घटना प्रसङ्ग-मध्यांश

मनोरमा को देवेन्द्रबाबू ने ऐसे रूखेपन और कर्कश कण्ठ से ये बातें कहीं कि कई मिनिट तक डर के मारे मनोरमा के मुंह से बात नहीं निकली। चुपचाप बिना हिले डुले माथ नवाये बैठी रही। कई मिनिट बाद सिर उठा कर डबडबाई आंखें दिखाती हुई मनोरमा बोली, "मैंने जो आपसे इतनी बातें कहीं उनको आपने सच समझा या मुझे पागल ही समझते हैं?"

देवेन्द्रबाबू ने कहा, "मनोरमा! ज़ब तक मैं '१७ क' नं० पुलिन्दे का पता न लगा सकूं तब तक मैं तुम्हारा किसी तरह से विश्वास नहीं कर सकता। तुम मन में खूब जान रक्खो, हमारा नाम देवेन्द्रविजय है!"

नवीना घूंघटवाली ने बहुत बिनीत होकर कहा, "बाबू जी! मैं आपको इस काम में हाथ डालने के पहिले यह बताना चाहती हूँ कि मैं इस वक्त बहुत गरीबी में हूं। मेरे पास सौ या बहुत करे तो सवा सौ रुपया से अधिक नहीं होगा। मैं आपको सच्ची बात कह देती हूं। आप जो मिहनत करेंगे उसकी मुनासिब भेंट मैं नहीं दे सकूंगी। अगर नहीं तो—"

देवे०। नहीं तो क्या?

मनो०। अगर आप '१७ क' नं० पुलिन्दे का पता नहीं लगा सकें.........

देवे०। क्यों ?

मनो०। क्योंकि उसी पुलिन्दे से मैं अपनी जायदाद पा सकूंगी। मेरे बाप मरती बेर आज चार बरस हुए मेरे वास्ते कम से कम दो लाख की रकम छोड़ गये हैं।

देवे०। अच्छा! तो मैं समझता हूं तुम्हारी माँ भी जीती नहीं हैं।

मनो०। मेरी माँ को मरे तो आज दस बरस हुए! इस वक्त मैं अट्ठारह बरस की हूं।

देवे०। तुम्हारी अब तक शादी क्यों नहीं हुई ?

मनो०। हमारे बाप ब्रह्मसमाजी होने के कारण बालविवाह पसन्द नहीं करते थे। जब वह मरे तब मैं तेरह बरस की थी, उसके बाद ही मैं इस चक्र में पड़ गई और बरसों तक कविराज की कैद में रही।

देवे०। अच्छा तो इस वक्त जो तुम्हारी जगह जायदाद की मालकिन बनी हुई है वह तुम्हारी बहन कुमोदिनी नं० २ है या बेजान पहचानवाली नं० ३, सो तुमको कुछ पक्का मालूम है ?

मनो०। नहीं मैं ठीक नहीं जानती, न अन्दाज से ही कुछ कह सकती हूं।

देवे०। बड़ा पेचीला मामिला है। भला तुम्हारा मकान कहां है ?

मनो०। खिदिरपुर में गङ्गा के किनारे राजमहल के समान बड़ी अटारी है। उसके चारों ओर फल फूल का बागीचा लगा है,

बागीचे के चारों ओर ऊंची चहारदीवारी से घिरा हुआ है। उस चहारदीवारी के पास पास देवदार और झौआ कतार से लगे हैं। बाबा ने बड़ी लालसा से घर का नाम आनन्दकुटीर रक्खा था।

देवे०। अच्छा तो तुम तीनों में से जो मरी है वह तुम्हारी बहन कुमोदिनी है यही समझ कर न हमको काम चलाना होगा ? अच्छा तुम्हारी बहन को मरे कितने दिन हुए ?

मनो०। मुझे पागल बना कर जब कविराज के हाथ में कैद किया तब से दो हफ्ता पहले ही वह मर गई थी।

देवे०। उसका देहान्त कहां हुआ ?

मनो०। आनन्दकुटीर ही में।

देवे०। किस रोग से ?

मनो०। जिस रोग से रामगुलाम मरा।

देवे०। मिरगी से ?

मनो०। नहीं जहर से। जब मेरी बहन का देहान्त हुआ तब मैं खिदिरपुर में अपनी जगह जायदाद पाने की कोशिश कर रही थी। एक हमारे वकील थे। बाबा का सब मामिला मुकद्दमा वही करते थे। मैंने उन्हीं को अपना सब हाल कह कर अपनी जायदाद दिलाने के लिये बिनती की। उन्होंने मेरा हाल सुनकर दुःख जाहिर किया और मुझे भरोसा दिया कि मेरे लिये वह कोई बात उठा नहीं रक्खेंगे। यहां तक उन्होंने जताया मानो मेरे वास्ते वह आकाश पाताल सब छान डालेंगे। उसके बाद

ही उन्हों ने मुझे पागल कह कर कविराज के यहां कैद कर दिया।

देवे०। अरे हां, समझा, वह वकील तुम्हारे वैरी की ओर था, अच्छा उसका नाम क्या है ?

मनो०। तुलसी बाबू लोग कहते हैं, नाम है तुलसीदास बसु।

देवे०। अच्छा हम उसकी भी खूब खबर लेंगे। भला तुम्हें पागल कहने का विशेष कारण क्या था ?

मनो०। उस बारे में मैं कुछ नहीं कह सकती। न जाने वकील साहब ने कई कागजों पर अंगरेजी में क्या क्या लिख कर हमारे हाथ में दिया और आनन्दकुटीर को ले जाने के वास्ते कहा और यह बताया कि उन कागजों में हमारी जायदाद के प्रमाण में बहुत सी बातें हैं। मैंने उनका कहना किया। उन कागज़ों को मैं आनन्दकुटीर में लाई। उनको देखकर सब हंसी करने लगे।

देवे०। फिर ?

मनो०। फिर यही ठहरा कि उसका विचार किया जायगा।

देवे०। विचार कहां होगा ?

मनो०। वहीं आनन्द कुटीर ही में विचारक मजिष्टर बुलाये जांयगे।

देवे०। हां समझ लिया। तुम्हारे वकील ही ने तुम्हें खन्दक में गिराया। इसमें शक नहीं कि वह बड़ा ठग है। पहले ही से तुमको ठगना शुरू किया था। अच्छा फिर विचार से क्या हुआ ? इतने ही में तुम्हारी बहन नं० २ का देहान्त सुना गया ?

मनो० । हां ।

देवे० । अच्छा तो फिर ?

मनो० । वहां दो आदमी बैठे थे । मैं मन में समझती थी कि वही विचारपति हैं । मैंने उनसे अपनी बातें कहीं । मेरा वकील भी वहीं था, उसी ने उन दोनों के कान में न जानें धीरे धीरे क्या कहा। पहले मैं जानती थी कि वह मेरे बारे में उनसे कुछ कह रहे हैं, लेकिन वह जानना झूठ हुआ । वकील की एक बात मेरे कान में पहुंची । उसने कहा—'महापागल' उसको सुन कर मेरा कलेजा तक कांप गया । उसको सुनकर उन दोनों ने कहा, "हाँ पागल तो है ।" उसी वक्त उन दोनों ने दो कागज़ पर "मैं पागल हूं" सो लिख कर अपनी सही करके वकील के हाथ में दिया । इतनी देर तक मैं जिनको बिचारपति समझे हुई थी वह दोनों मजिष्टर नहीं मशहूर डाक्टर थे । उन्होंने मेरा पागल होना साबित करके रसीद लिख दी । हमारे वकील ने ही हमारा सब सत्यानाश कर दिया ।

देवे० । खैर तो उस वक्त तुमको पागल साबित किया गया, फिर ?

मनो० । फिर तो मैं कविराज के यहां कैद की गई, और वही शायद तीन नम्बरवाली हमारी पोशाक पहन कर हमारे ही साज-बाज और नाम से आ कर मानो हम पर दया जाहिर करने लगी । उसने कविराज को हमारे खर्चे का रुपया देने का वादा किया और कविराज से कहा कि मुझे कुछ तकलीफ न होने पावे ।

इस तरह बात करके और ऐसा भाव दिखाया मानो मुझे जानती ही नहीं आजही मुझे देखा है और मेरी दीन दशा पर बहुत दया कर बड़ा उपकार किया है। उस वक्त उसको जिसने देखा यही समझा मानो अभी स्वर्ग से कोई देवी आई है जो गरीब दुखिया पर दया करती फिरती हैं। उसके धर्ममय सारे शरीर में पाप का नाम तक नहीं है। उसको देख कर सब चकपका गये। उसका ऐसा भाव देख कर सब हमको कोसने और कहने लगे कि मैं पागल नहीं जाली हूं। दूसरे का नाम जोल करके पराई जायदाद लेने की तरकीब कर रही थी, इससे मुझे इसी हालत में रखना ठीक है।

देवेन्द्र०। उस वक्त तुम इस बात का कुछ प्रमाण नहीं दे सकीं कि आनन्दकुटीर ही में तुम्हारा सदा का निवास था और वह सब तुम्हारा है।

मनो०। प्रमाण तो बहुत था और मैं बता भी सकती थी, लेकिन उन सभों ने कुछ भी नहीं सुना। मैंने यह भी कहा कि घर में एक चोरकोठरी है उसको कोई नहीं जानता यहां तक कि ३ नं० वाली को भी उसका रास्ता नहीं मालूम है, मैं उस घर को भी दिखा सकती हूं, मैं ही आनन्दकुटीर की मालकिन हूं।

देवेन्द्र०। तो भी उन सभों ने नहीं माना और तुमको पागल ही बताते गये?

मनो०। हां कुछ भी नहीं माना। तब मैं बहुत ही अकुलाई और सब खो जाने से मेरी दशा पगली सी हो गई। हमारे बाप ने पसीना चुआ कर अपनी जिन्दगी में कमाई करके जो धन बटोरा

था उसे एक बिलकुल बेजाने पहिचाने का हथिया लेना कैसे सहा जाता ? सब तरह से मैं घबरा गई लेकिन नाउम्मेद नहीं हुई, कभी न कभी इसका भण्डाफोर होगा मेरे मन में इसका भरोसा रहा। अब संयोग वश कविराज के हाथ से छूट कर आप की शरण आई हूं। आपका नाम बहुत दिन से मैं सुनती थी। बहुत लोगों के मुंह से आपकी बड़ाई सुन चुकी हूं। बङ्गाल हाते में आपके बराबर जासूस दूसरा नहीं है यह बात भी मैंने सुनी है। आप के सिवाय मैं और किसी को नहीं देखती जो मेरा इस बिपत में सहाय हो।

देवेन्द्र०। कुछ परवाह नहीं मैं तुम्हारी बिपत दूर करने के लिये जी जान से कोशिश करूंगा।

खुश होकर मनोरमा बोली—"बाबू जी! आपकी इस बात से मुझे बहुत कुछ भरोसा हुआ। भगवान की दया से आप की मिहनत जरूर फलेगी। आप की बातों से मेरे मन में जो भरोसा हुआ है उसे मैं बता नहीं सकती।

देवेन्द्र०। सकती हो।

मनो०। आप ही कहिये कैसे बता सकती हूं ?

देवेन्द्र०। ऐसे कि मैं जो कहूं उसको भला बुरा बिचारे बिना मान लो।

मनो०। बहुत अच्छा इसी घड़ी से मैं इस बात का वादा करती हूं कि आप जो कहेंगे मैं तुरन्त उसको पूरा करूंगी।

देवेन्द्र०। बहुत अच्छा, हमको तुमसे कई बातें पूछने की हैं। नं० ३ का ब्याह हुआ है या नहीं?

मनो० । तीन बरस पहले ऐसे ही थीं लेकिन आज कल की बात नहीं जानती ।

देवे० । और तुम्हारी बहन कुमोदिनी !

मनो० । उसका ब्याह नहीं हुआ था ।

देवे० । तुम्हारे मा बाप से कभी तुम्हारी मौसी मौसा का कुछ झगड़ा फसाद हुआ था ?

मनो० । वह बात भी मैं आपसे संक्षेप से कहूंगी ।

देवे० । हां वह सब भी हमें अभी से जान लेना जरूरी है ।

मनो० । हमारे बाप थे एक धनी आदमी और कुमोदिनी के बाप हमारे मौसा बहुत गरीब थे । कुमोदिनी की माँ मेरी मां की जौंआ बहन थी । जब तक मेरी मां जीती रही तब तक मेरी मौसी भी मेरे ही घर आनन्द कुटीर में रही । उन दिनों जब मेरी मौसी मेरे घर रहती थी मेरी और कुमोदिनी की उमर आठ ही नव बरस की रही होगी ।

देवे० । उस वक्त भी तुम लोगों के चेहरे में कुछ फरक नहीं था ?

मनो० । नहीं कुछ भी फरक नहीं था । मौसी भी हम लोगों को पहचान नहीं सकती थीं । इस लिये वह रोज हमारे लिलाट पर चन्दन का टीका दे दिया करती थीं । जब हम लोग दोनों एक तरह की पोशाक पहनती थीं तब नौकर चाकर भी बड़ी आफत में पड़ जाते थे ।

देवे० । एक तरह की पोशाक पहनने में किसका मन अधिक लगता था तुम्हारा या कुमोदिनी का ?

मनो० । कुमोदिनी का इरादा एक रंग की पोशाक पहनने का बहुत था । वह सदा हमारा जामा पहना करती थी । कभी कभी हमारी ही पोशाक सी अपनी भी तैयार कराती थी ।

देवे० । ऐसा करने का क्या कारण था ?

मनो० । कुमोदिनी बड़ी हँसी ठट्ठा करनेवाली थी । छन भर भी बिना मसखरी के वह नहीं रहती थी । वह नौकर चाकरों के साथ भी दिल्लगी करती थी और हमारा भेष धर कर सदा उन लोगों के साथ हँसी मसखरी करती और उन हुकुम पर जारी करती थी ।

देवे० । ओहो, ठीक, इसमें भी कुछ पेंच है । अच्छा ठहरो मैंने अब इसका भेद समझा है । उस बेजान पहचानवाली ३ नं० का ही देहान्त हुआ है और जो इस वक्त तुम्हारी जर जायदाद भोग रही है, वह और कोई नहीं तुम्हारी बहन नं० २ ही है ।

चौथा बयान

घटनाप्रसङ्ग-शेषांश

मनोरमा कहने लगी—"हमारे बाप हम लोगों को ठीक पहचान सकते थे। उनको एक दिन का भी भ्रम नहीं हुआ। वह कहते थे कि हम दोनों के चेहरे में जो फरक है उसको वह समझते थे।

यह कह कर मनोरमा कुछ देर तक चुप रही, न जानें क्या कुछ देर तक सोचती रही। फिर बोली—"एक दिन बाबा ने हमको अकेले में बुला कर कहा—कुमोदिनी को ऐसी हँसी मसखरी अच्छी नहीं है। एक तदबीर मैंने ऐसी की है जिससे किसी को यह सब गड़बड़ी नहीं सहनी पड़ेगी। मैंने सब नौकरों से कह दिया है जब तुम उन पर हुकुम करो तब यही अँगूठी दिखा देना। तब वह पहचान कर तुम्हारा हुक्म मानेंगे। बिना अंगूठी के जो उनपर हुकुम करेगा उसको वह लोग नहीं मानेंगे। तुम इस अंगूठी को अपने बायें हाथ में सदा पहने रहो। इतना कह कर उन्होंने हमारे बायें हाथ में अंगूठी पहना दी। उसमें बहुत बढ़िया बेल पत्ती नक्कासी की हुई थी। उसी अंगूठी के कारण हमारा नौकर रामगुलाम ठगा गया था।"

देवेन्द्रबाबू ने पूछा, "ओहो! तुमने मालूम होता है उस अंगूठी को खो दिया।"

मनोरमा बोली, "हां।"

देवे०। कैसे खोया ?

मनो०। सो मुझे मालूम नहीं। मेरे होश में तो वह चोरी नहीं गई। मैं जानती हूं सोते में किसी ने उसको निकाल लिया होगा।

देवे०। खैर तो भला अंगूठी कैसी थी ?

मनो०। अंगूठी सोने की थी, उसपर बेल बूटे भी सोने ही के बने थे। बीच बीच में हीरे की कनी लगी थी। कनियों के बीच में एक पन्ना बिठाया हुआ था। उस पन्ने पर ओ३म् लिखा था। बाबा ने जब उसको मेरे हाथ में पहना दिया तब कहा था कि उस अंगूठी में यह गुण है कि जिसके पास रहेगी वह बहुत सी सम्पत्ति का मालिक रहेगा। जो पहन कर फिर हाथ से उतारेगा उसकी गरीबी और आफत की सीमा नहीं रहेगी।

देवे०। तो तुम्हारी इस समय की दशा से तुम्हारे बाप की वह बात बहुत ठीक मालूम होती है।

मनोरमा बोली, "वह बहुत दिन पहले एक बार द्राविड़ देश को गये थे। वहीं एक ज्योतिषी ने उनको वह अंगूठी दी थी। मैंने कई बार बाबा से अंगूठी का हाल पूछा था लेकिन उन्होंने पूरा भेद नहीं बतलाया। इसके बाद मेरी बहन कुमोदिनी ने समझ लिया कि हम दोनों में कुछ भेद आ पड़ा है जिससे वह नौकरों को अब फन्दे में नहीं ला सकती। इस भेद को जानने की उसने बड़ी बड़ी कोशिशें की लेकिन जानने नहीं पाई। मेरी माता के मरने बाद बाबा मुझे दिल्ली ले गये उस समय भी मेरी मौसी कुमोदिनी के साथ आनन्द कुटीर ही में थी।

में बाबा के साथ दिल्ली में दो बरस रह गई । मैं जानती हूं उन्हीं दिनों कुमोदिनी को अंगूठी का हाल नौकरों से मालूम हो गया। घरेलू झगड़ा कलह की बात तो मुझे कुछ भी मालूम नहीं है। दिल्ली से लौटने के एक बरस बाद बाबा ने मौसा को बाल बच्चोंके साथ आनन्दकुटीर से बाहर चले जाने को कहा। बाबा बड़े कड़े मिजाज के थे, एक बार जो बात मुंह से कह देते थे उसको कोई उलट नहीं सकता था। जब मौसा मौसी कुमोदिनी के साथ आनन्दकुटीर से चले गये तब मुझे बहन बिना उदास लगा, लेकिन क्या करती कुछ बस नहीं था। तभीसे कुमोदिनी का और हमारा साथ रहना छूट गया। उसके दो बरस बाद कुमोदिनी के पिता का देहान्त हो गया और बाबा के मरने से कुछ महीने पहले कुमोदिनी की माँ भी मर गई।

देवे०। लेकिन तुम इतने में अपनी जायदाद से कैसे हटा दी गईं? जायदाद भी कुछ बहुत कम नहीं, दो दो लाख की जायदाद, फिर कानून का मामिला, उस जायदाद को तुम कैसे खो बैठीं?

मनो०। बड़ी सुगमता से दुश्मनों ने हमको अपनी जायदाद से अलग कर दिया। वह बात भी बड़े अचरज की है। साहनगर में मैं एक नातेदार के घर न्योते में गई थी। नातेदार के यहां ब्याह था—-

बात काट कर देवेन्द्रबाबू ने कहा, "अच्छा ठहरो, एक बात बता लो, उस वक्त तुम्हारी बहन कुमोदिनी कहां थी?

मनो०। यह मैं नहीं जानती, उसका मकान चेतला गोपाल नगर

में है लेकिन उसको न्यौता गया था कि नहीं सो मालूम नहीं।

देवे०। जिनके घर तुम न्योते में गई थी उनकी अवस्था कैसी थी?

मनो०। वह बहुत बड़े आदमी हैं। उनके यहां सिर्फ मैं ही आई न रही। जिस दिन उनके यहां सुहाग रात्रि की धूम थी, उसी दिन एक आदमी ने मुझे एक चीठी लाकर दी जिसमें लिखा था कि बाबा का एक पुराना नौकर बहुत बीमार है, उसके बचने का भरोसा नहीं है, वह मरती बार हमको एक बार देखना चाहता है। उसका मकान बेलतला में है। उस चीठी को पढ़ कर मुझसे रहा नहीं गया और उसी दिन लौट आने के इरादे से चीठी लाने वाले आदमी के साथ ही उस बीमार नौकर को देखने के वास्ते गई।

देवे०। फिर वहां से उस दिन नहीं लौट सकी?

मनो०। नहीं, मैंने देखा तो उसकी दशा बहुत ख़राब थी, उसके कहने से मैं उस दिन रात को वहीं ठहर गई। दूसरे दिन शाहनगर लौटी।

देवे०। तुम अकेले बेलतला को गई थीं?

मनो०। हां।

देवे०। ओह बड़ा अन्याय हुआ!

मनो०। हां बाबूजी उसी अन्याय से तो मैं आज भिखारिनी बनी फिरती हूं। जब मैं शाहनगर को लौटी तब तीन बज गये थे। मैं लौट कर और किसी से बिना कुछ कहे उसी घर में सीधे चली गई जो हमको ठहरने के वास्ते मिला था और जिसमें मैं ठहरी थी। वहां पहले अपनी नौकरानी से मिलने गई।

देवे० । तो उससे भेंट नहीं हुई ?

मनो० । भेंट क्या होती वहां एक बड़ा गोलकधन्धा देखा । देखा तो एक और बड़े आदमी की लड़की उसमें ठहरी है जिसको मैंने जिन्दगी में पहले कभी नहीं देखा था । मैंने मन में समझा कि मैं भूल कर दूसरे घर में आ गई हूं और उससे बिना कहे सुने भीतर चले आने की माफी मांग के मैं तुरत बाहर चली आयी । लेकिन बाहर आते ही मेरा सन्देह दूर हो गया क्योंकि जिस कोठरी में मैं ठहरी थी उसके दरवाजे पर राधाकृष्ण की तसवीर लटकी थी सो देखा तो अब भी लटक रही है । तब तो मेरा जी सूख गया । मन में सोचने लगी मालूम होता है नौकरानी सब सामान लेकर घर चली गई । जब मैं सुहागरात को नहीं लौटी तब उसने शायद समझा होगा कि मैं बेलतला से बाहर ही बाहर अपने घर खिदिरपुर को चली गई । जब घर के मालिक से मिली, जिसके बेटे की शादी थी और उनसे सब हाल पूछा तो उन्होंने मुझे पहचाना ही नहीं, बल्कि यह कहा कि मनोरमा तो उसी दिन शाम को बेलतला से लौट आई और जरूरी काम बता कर पालकी करके उसी दिन सब सामान ले दे विदा विदाई होकर खिदिरपुर चली गई ।

देवे० । तब तो तुम चकराई होगी ?

मनो० । चकराना क्या ऐसा तैसा, मैं उस वक्त का हाल कह कर नहीं बता सकती ।

देवे० । तब तुमने क्या किया ?

मनो० । तब मैं गुस्से से भरी हुई खिदिरपुर पहुंची ।

देवे० । वहां जाकर तुमने देखा कि कुमोदिनी मनोरमा बनी बैठी है और तुम माता पिता हीना उसकी मौसेरी बहन कुमोदिनी हो ?

मनो० । हां बाबूजी ठीक यही बात हुई ।

देवे० । तो तुमको फिर आनन्दकुटीर में जाने दिया ? तुमसे पहले किससे भेंट हुई ?

मनो० । पहले ही रामगुलाम मिला । लड़कपन से ही वह कुमोदिनी को घृणा की दृष्टि से देखता था । उस वक्त मुझे ही उसने कुमोदिनी समझा और कुमोदिनी नाम से पुकार कर कहा, "तुम्हारी बात हम नहीं मानेंगे । मालकिन का हुक्म है !" तब मैं उसको अंगूठी दिखाने चली तो सब अक्की बक्की बन्द हो गई । देखा तो उँगली खाली है, न जाने कब किसने अंगूठी चुरा ली ।

देवे० । और कभी तुमने उस अंगूठी को नहीं भुलाया था ?

मनो० । नहीं ।

देवे० । तब तुमने कुमोदिनी को मिलने के लिये बुलाया ?

मनो० । नहीं मैं खुद उससे मिलने के लिये अन्दर महल की ओर चली इतने में रामगुलाम ने रोक दिया और कहा, "भीतर जाने देने का हुक्म नहीं है ।" तब मैं मारे लज्जा और ग्लानि के बदहवास सी हो गई । उस वक्त मैंने क्या किया क्या नहीं किया सो खबर नहीं है ।

देवे० । उस वक्त कुमोदिनी तुमसे मिली थी ?

मनो० । नहीं, उसने मुझसे मिलने से इन्कार कर दिया ।

देवे० । तब तुमने क्या किया ?

मनो० । तब रामगुलाम से बहुत सी बेमतलब की मैंने बातें कीं ?

देवे० । तुम खुद मनोरमा और उसकी मालकिन हो यह बात किसी तरह रामगुलाम को नहीं समझा सकीं ?

मनो० । ना, किसी तरह नहीं ।

देवे० । तब रामगुलाम ने क्या कहा और क्या किया ?

मनो० । पहले उसने मेरी सब बातें ध्यान से सुन लीं पीछे बड़ा नाराज हो कड़क कर बोला—"कुमुद ! तुम चालाकी करके हम से नहीं निकल जा सकती हो, मेरा नाम रामगुलाम है, मेरे पास ठगपना नहीं चलेगा । मैंने मनोरमा बहिन से सुना है तुम अपने को मनोरमा कह के बहुत जगह चालाकी से लोगों को ठगती फिरती हो । वह चालाकी हमसे नहीं चलेगी, जाओ अपना रास्ता देखो, तुमको भीतर जाने देने का हुक्म नहीं है" । तब मैं बहुत व्याकुल हुई और पागल की तरह विक्षिप्त हो पड़ी । क्या करूं उस तीन नम्बरवाली कुमोदिनी को अपना सब राज पाट सिंहासन देकर लौट आई ।

देवे० । इस मामिले के कितने दिन पहिले तुमने भूकैलास में नंबर तीन को देखा था ?

मनो० । कई महीने पहले ?

देवे० । वह क्या तुमसे तुम्हारी बहन कुमोदिनी बन के मिली थी ?

मनो० । हां ।

देवे० । वह तुम्हारी बहन है या नहीं इसी बात की जांच के लिये न तुमने रामगुलाम को कुमोदिनी के घर भेजा था ?

मनो० । इसी के लिये ।

देवे० । उसने लौट कर क्या कहा कि कुमोदिनी घर पर है ? वह अपनी आँखों से कुमोदिनी को देख आया था ?

मनो० । हां ।

देवे० । रामगुलाम पर तुमको कभी किसी तरह सन्देह हुआ था ?

मनो० । नहीं कभी नहीं ।

देवे० । जब रामगुलाम लौट आया और तुमको कुमोदिनी का सच्चा हाल सुना गया और तुमने भी नं० ३ का जाल अच्छी तरह समझ लिया तब तुमने क्या किया ?

मनो० । तब मैंने नं० ३ को पुकार कर उसके मुंह पर कह दिया कि तू जाल करके आई है, लेकिन वह बड़ी चालाक है । मैंने बहुत सी टेढ़ी सीधी उसको सुनाई उसने कुछ नहीं कहा केवल हैं हैं करके हंस दिया । मैंने रामगुलाम को बुला कर उसका जाल-करम उसके आगे भी कह दिया लेकिन नं० ३ ने उसकी तरफ भी मुंह करके हंस देने के सिवाय और कुछ नहीं कहा ।

देवे० । यही हंसना मानो उसका जवाब था ।

मनो० । हां खाली हंसना ही ।

देवे० । वही हंसी तो इस वक्त जुलम कर रहा है, वह हंसी बड़ी भयंकर थी !

मनो० । हां बाबूजी बड़ी भयंकर थी ।

देवे० । फिर क्या हुआ; उसने बातों का कुछ भी जवाब नहीं दिया ?

मनो० । जवाब दिया था, कहा कि "बहन, आज तुम हमको ऐसी बात कहती हो । अच्छा कह लो, रामगुलाम की बात कह कर हमको जालसाजिनी बनाती हो सो ठीक है, दिन बिगड़ने से सबकी ऐसी ही गति होती है । तुम इस वक्त राजरानी हो और मैं समय के फेर से भिखारिनी हूं फिर हमारा तुम्हारा वह भाव कैसे रहेगा ? वह लड़कपन की सब दया मया तुम्हें इस वक्त भूल जाना कुछ अचरज की बात नहीं है लेकिन इसका अलबत्ते मुझको दु:ख है कि मैं तुमको इस संसार में अपनी भरोसे की समझ कर बहुत कुछ आशा करती थी सो सब आज दिल से दूर कर देना पड़ा ।"

देवे० । लेकिन तुम तीनों का एक सी होना भी बड़े आश्चर्य की बात है । भला फिर उसकी बात सुन कर रामगुलाम क्या बोला ?

मनो० । वह तो सुनते ही बहुत बिगड़ा लेकिन जब तक वह जालसाजिनी खड़ी रही तब तक हमारे दबाने से चुप रहा । जब चली गई तब हमसे कहा कि अगर आप नहीं दाबतीं तो इस कमानी को मैं मजा दिखा देता और उसे यहीं खतम कर देता

फिर चाहे फांसी होती तो हो जाती। जब मैंने पूछा कि तुम इतना क्यों बिगड़ते हो तब कहने लगा कि तुमको मालूम नहीं है यह ठगिनी कुमुदिया के साथ मिल कर आपका धन दौलत सब ले लेना चाहती है।

देवे०। रामगुलाम होशियार आदमी है।

मनो०। फिर मैंने रामगुलाम को उसकी बात बिसार देने के लिये कहा।

देवे०। जिनके घरमें यह काण्ड हुआ था उनमें से किसी को तुमने यह सब बातें बताई थीं?

मनो०। नहीं इस बारे में मैंने किसी से कुछ नहीं कहा।

देवे०। अच्छा तो तुम पर जो चक्र चला रहा है उसकी यह भूमिका है। उनका जाल फैल गया है। उन दोनों दुश्मनों में से एक मिर्गी रोग से मर गई है। तुम्हारी बहन कुमोदिनी और नम्बर ३ ने मिल कर यह सब चक्र चलाया होगा। उन दोनों ने मिलकर तुम्हारी सम्पत्ति बांट लेने की सलाह की होगी। उन दोनों में से एक अधिक चतुर साहसी और चालाक है। मालूम होता है उसने सब अकेले हथियाने के लिये दूसरी को मार डाला है। जब उसने समझा कि रामगुलाम भी उसकी चतुराई समझ गया तब उसको भी मार डाला।

मनो०। हां बाबूजी! यही हमको भी मालूम होता है।

देवे०। पाप पाप के पीछे दौड़ता है। एक पाप करके उसको छिपाने के लिये आदमी को उससे बड़ा पाप करने की इच्छा



होता है और उसका पाप उमर के साथ ही बढ़ता है। मैं अब समझ गया जिसने रामगुलाम को मारा है उसी ने उसको भी मारा है जिसका नाम कुमोदिनी जाहिर किया गया है। मैंने बहुत सी घटनायें देखी हैं, बहुत से खून खराबी के मामिले हाथ में लेकर उसके अपराधी का पता लगाया है, लेकिन तुम्हारे मामिले के ऐसा पेचदार मामिला हमको पहले कभी नहीं मिला।

मनो०। हाँ बाबुजी, यह मामला है तो ऐसा ही।

देवे०। अच्छा इस मामिले का निबटेरा करके तुम्हारी जायदाद तुमको दिलायी जायगी।

मनो०। हां बाबूजी! मैं भी इसी उम्मेद से आपकी शरण में आई हूं।

देवे०। कुछ परवाह नहीं मैं सब दूध का दूध पानी का पानी अलग कर दूंगा। मेरा नाम देवेन्द्रविजय मित्र है। मेरी मेहनत कभी निष्फल नहीं जायगी।

मनो०। आपकी बातों से हमको बहुत आशा हुई है।

देवे०। लेकिन हम लोगों को एक बात का हमेशा ख्याल रखना होगा।

मनो०। किस बात का ?

देवे०। इस वक्त तुमको कदम कदम पर आफ़त है।

मनो०। हम पर जो आफत आने को थी सो तों आ चुकी अब उसमें और क्या बाकी है ?

देवे०। सुनो, तुम जो भाग आई हो सो इस वक्त सर्वत्र जाहिर

हो गया है। अब तुमको फिर पकड़ने के लिये वह सब जगह तुमको ढूंढ़ते हैं। अबकी अगर तुमको उन सबों ने पकड़ा तो जानती हो क्या होगा ?

मनो०। नहीं बाबूजी मैं तो नहीं समझती।

देवे०। मैं उसको समझता हूं। अबकी अगर तुम किसी तरह से उनके फन्दे में आई तो तुम्हारा निस्तार नहीं है। वह तुम्हारी जान नहीं छोड़ेंगे। तुमने अपने बचाव के लिये कोई उपाय किया है या नहीं ?

मनो०। नहीं बाबूजी ! उपाय तो मैंने कुछ नहीं किया है न मेरे पास कोई उपाय है। जो है यही है कि इसी तरह बाहर ही बाहर रहूंगी।

देवे०। नहीं, नहीं, यह बात ठीक नहीं है। तुम्हारी उमर इस तरह बाहर ही बाहर घूमते रहने की नहीं है। ऐसा करने से तुम विपत्ति में गिर पड़ोगी और वह विपत्ति बड़ी भयानक है, वह विपत्ति या तो तुमको कविराज के कैद में डालेगी या यमराज के हाथ में देगी।

मनो०। तो बाबूजी यम के हाथ में जाना हमको अच्छा है।

दे०। सुनो तुमको किसी के हाथ जाना नहीं होगा। एक उपाय है। तुमने अभी वादा किया है कि हमारा कहना सदा मानोगी। बस हमारा हुक्म है कि हमारे कहे बिना इस घर से कभी बाहर नहीं होना।

मनो०। यह तो बड़ी खुशी की बात है, मैं आपके बिना हुक्म

कहीं नहीं जाऊंगी।

देवे०। हां, यहीं हमारी स्त्री के पास रहो, वह तुमको अच्छी तरह से रक्खेगी, अपना समझ तुमसे स्नेह करेगी। तुम अपने साथ कुछ असबाब भी लाई हो?

मनो०। हां एक गठरी कपड़ों की है।

देवे०। कहां है?

मनो०। जग्गू बाबू की बाजार में एक दूकान पर रख आई हूं। मैं दो तीन दिन भूखी रह गई थी। यहां कोई हमारा नहीं था इससे उसी दूकान पर जाकर खा पी के वहीं गठरी रख आई हूं।

देवे०। उस गठरी में कोई बहुत दाम की चीज है?

मनो०। नहीं बहुत दाम की कोई चीज उसमें नहीं है।

देवे०। तो उसे लाने की जरूरत नहीं है तुम यहीं रहो तुमको सब चीजें यहीं मिलेंगी। जब तक तुम अपनी जायदाद न पाओ तबतक तुम्हें जो जरूरत हो वह हमारे घर से लो। इस वक्त उस गठरी को न लाना ही अच्छा है। तुम्हारे दुश्मन तुमको पकड़ने के लिये जरूर चारों ओर घूमते होंगे। जरूर किसी ने तुम्हारी उस गठरी का पता पा लिया होगा और कोई न कोई दूत वहां लगा होगा कि तुम वहां गठरी लाने जाओ तो वह पकड़े। इससे बेहतर है कि तुम हर्गिज उधर नहीं जाव। अच्छा एक बात बतलाओ, उस "१७ क" नम्बर पुलिन्दे में क्या क्या कागज पत्र है तुमको इसका कुछ अन्दाजा है?

मनो०। नहीं मुझे इसका कुछ भी अन्दाजा नहीं है।

देवेन्द्रविजय ने अपनी स्त्री को पुकारा। रेवती सामने आई। देवेन्द्र बाबू ने रेवती से कहा—"तुम इनको अपनी बहन के समान मान कर रक्खो, देखो इनको किसी तरह की तकलीफ न हो।"

दिल्लगीबाज रेवती ने मुस्कुरा कर कहा—"तो फिर आप इनको क्या मान के रक्खेंगे?"

देवेन्द्र बाबू ने भी मुस्कुरा कर कहा—"तुमको हर घड़ी हंसी ही सूझती है। जितनी ही तुम्हारी उमर बढ़ती जाती है उतनी ही तुम बालक बनती जाती हो। अच्छा तुम इनको हमारी बहन जान के सेवा करो।

रेवती०। बहुत अच्छा हजूर सर्कार श्री जासूस महाराज बहुत अच्छा !!

देवे०। अच्छा अब दिल्लगी बन्द करो, हंसी ठट्ठा का समय नहीं है। शचीन्द्र कहां गया?

रेव०। आपका शचीन्द्र तो अभी बाहर खड़ा कान लगाये आप दोनों भाई बहन की बात सुन रहा था, जब मैं भीतर आई तब बाहर गया है।



पांचवां बयान

सर-सलाह

शचीन्द्र देवेन्द्रविजय की बहन का लड़का है। देवेन्द्रविजय का सहकारी और उमर में उन्नीस बरस का है।

बाहर आकर देवेन्द्रविजय ने शचीन्द्र को पुकारा और उसके पास आने पर पूछा, "शचीन्द्र ! तुमने सब सुन लिया ! मामिला क्या है सो सब समझा ?

शची०। हाँ बहुत सा समझ लिया है।

देवे०। क्या समझा है कहो तो ?

शची०। बड़ा बिकट मामला है !

देवे०। बिकट तो है ही लेकिन तुम मनोरमा को पागल समझते हो या नहीं ?

शची०। मनोरमा वैसे ही पागल है जैसे हम।

देवे०। अच्छा खिदिरपुर में आनन्दकुटीर की कौन मालकिन बनी बैठी है, मनोरमा की बहन कुमोदिनी या नम्बर तीन वाली ?

शची०। यही तो जानना बोहड़ है।

देवे०। खैर बीहड़ तो हैं ही, लेकिन तुमसे हमको एक बात पूछने की है।

शची०। पूछिये ?

देवे०। तीनों में से कौन मरी है, कुमोदिनी या नंबर तीन ?

शची०। यह भी टेढ़ी बात है।

देवे० । अच्छा जहर के मामिले में क्या समझते हो ?

शचो० । मनोरमा की बात ठीक है ।

देवे० । मैंने भी यही विचारा है । इस बारे में हमारी तुम्हारी राय एक ही ठहरी । लेकिन किस डाक्टर ने रामगुलाम और उस स्त्री को दवा दी थी इसकी जांच करनी चाहिये ।

शची० । हां यह भी अच्छा है ।

देवे० । अच्छा इस जांच का भार तुम पर रहा । कोशिश करके पता लगाओ । कल शाम को आनन्दकुटीर में हमसे मिलना ।

शची० । बहुत अच्छा, वहीं मुलाकात होगी ।

शचीन्द्र इतना कह कर भीतर चला गया । थोड़ी ही देर में एक मैला कपड़ा पहन पश्चिम देश वासी बन कर वह बाहर आया और अपना नाम अपने ही मन में बुलाकीलाल रख कर घर से चलता हुआ ।

देवेन्द्र बाबू भी वेष बदल कर अपने काम को रवाना हुए ।



छठवां बयान

वकील तुलसीदास बसू

वकील तुलसीदास बसू का मकान भवानीपुर केसारीपाड़ा में है। मकान में वकील साहब अकेले बैठे हैं। सामने से एक बूढ़ा किसान आकर बोला—"आप ही का नाम वकील बाबू तुलसीदास है?" तुलसीदास ने जवाब में कहा—"हां मैं वकील हूं। मेरा ही नाम तुलसीदास बोस है।"

किसान०। अच्छा बाबूजी! मैं बड़ी अच्छी साइत में घर से चला था कि आपसे भेंट हो गई। मैं बड़ी जरूरत बस आपकी सेवा में आया हूं। आपको देख कर हमारे मन में भक्ति हो रही है, बड़ी श्रद्धा होती है। मैंने अपने एक साथी से आपकी बहुत बड़ाई सुनी है।

तुल०। अच्छा खैर सुना होगा, तुम्हारा नाम क्या है?

किसान०। मेरा नाम मेलाराम है, जब मेरा नाम मेलाराम हुआ तो मेरे बाप का नाम है ठेलाराम और मेरे दादा का नाम ढकेलाराम और ऐसा हुआ तो आप समझ लीजिये कि—

बात काटकर वकील साहब बोले, "बस बाबा! बस! माफ करो, तुम्हारी वंशावली हमको दर्कार नहीं।"

किसान०। क्या कहते हैं दर्कार नहीं है? अच्छा दर्कार नहीं तो नहीं सही। आप ही न सुनते हैं कि पागलों की दवा दारू का बन्दोबस्त करते हैं? आपके हाथ कौन तो एक ठो बड़े कविराज

कि कविराज हैं, सो सुनते हैं पागल रोग के बड़े ओस्ताद हैं? बहुत से पागलों को साइत आपने उनके यहां भेज कर आराम कर दिया है? धन्य महाराज धन्य बाबूजी आपको! आपकी जांघी जवानी सलामत रहे, भगवान् आपको दिन दिन दोबर करे, आप बड़े दयावान हैं।

किसान की बात सुनकर वकील साहब न जाने क्यों चौंक उठे और कड़क कर बोले—"इसमें तुम्हारा क्या नुकसान होता है!!"

किसान०। बाबूजी नुकसान की बात क्या आप जानते नहीं, इसमें हमारा मतलब है। हमारी एक लड़की है सो महा पागल एक दम पागल बिलकुल ही पागल है। हमारे संघाती जीअन बाबा ने कहा है कि आप बहुत......

तुल०। (बात काट कर) अरे तो तू रहता कहां है?

किसान०। बाबूजी बहुत दूर नहीं मटियाबुरुज में रहते हैं। जीअन बाबा कहते रहे कि कोई पगली आ के आनन्दकुटीर को अपना कह के चारो ओर रोती फिरती थी आपने दया करके अपने उसी ओस्ताद कविराज के यहां भेज दिया। सो बाबूजी हमारी भी बात मानों, गायगोहार बाबूजी गायगोहार तिरियागोहार में बड़ा धरम है, आप हमारी लड़की को भी......

बात काट कर फिर वकील ने कहा—"चुप रहो जी! जाव हमसे कुछ नहीं होगा।"

किसान०। कुछ नहीं होगा! बाबू जी कहते क्या हैं? होगा नहीं कि करेंगे नहीं? क्यों? भला नहीं होगा क्यों?

तुल० । वह हमारा काम नहीं है ।

किसान० । काहे ? मैंने जीअन बाबा से सुना है यह आपही का काम है आपही की दया है ।

तुल० । जीवन झूठ बोलता है । तुमको अगर ऐसी ही जरूरत है तो खुद डाक्टर बुला सकते हो । वह लोग तुम्हारी लड़की की दवा का बन्दोबस्त कर देंगे । मैं वकील हूं, मुझे इन बातों की कुछ खबर नहीं है ।

किसान० । अरे ! तो क्या जीअन बाबा झूठा आदमी है ? वह बूढ़ा तो बड़ा झूठा निकला ।

तुल० । बेशक ।

किसान० । तो वकील बाबू आप उस लड़की को......

बात काट कर वकील साहब बोले-"मैं काहे को किसी लड़की को भेजूं ? उसका हाल डाक्टर लोग जानते हैं । वह लड़की पागल हैं या नहीं इसी के बारे में मैंने केवल गवाही भर दी थी ।"

किसान० । हो ! हो ! ठीक, वह पागल है या नहीं इसी का आपने विचार किया था ? अच्छा तो बाबूजी वह सचमुच पागल थी ?

लापरवाही से वकील ने कहा—"नहीं जी ! बहुत पागल तो नहीं थी लेकिन—"

किसान० । लेकिन क्या ? जब पागल नहीं थी तब आपने कैसे उसको पागल कह कर गवाही दी ?

तुल० । अजी पागल तो थी ही, तुम इस वक्त यहां से चले जाव

हम दूसरी चिन्ता में हैं।

किसान०। सो तो बाबूजी! मालूम ही होता है! लेकिन साहब आप से एक और बात है।

तुल०। क्या काम है जल्दी बोलो। हमको फुरसत बहुत कम है।

किसान०। अच्छा तो उन डाक्टरों का नाम क्या है? अपनी पगली सन्तोखिया के मारे मैं बहुत तंग हो रहा हूं?

तुल०। तो मैं क्या करूं? मुझे उन डाक्टरों का नाम मालूम नहीं है।

किसान०। नहीं बाबूजी! आप दुखिया गरीबों के मा बाप हैं। जानते हैं और......

तुल०। भाई तुमने तो बहुत तंग किया। हमको तुम्हारे साथ बेफायदा बकबक करने की फुरसत नहीं इस वक्त तुम चले जाव।

किसान०। अच्छा जाता हूं तो लेकिन अगर......

तुल०। (क्रोध करके) अरे तू कहां का बक्की है! बार बार कहते हैं फुरसत नहीं है इस वक्त यहां से चला जा!!

इतना कहते कहते वकील साहब गुस्से के मारे उठ खड़े हुए। किसान उनको उठते देखकर बोला—"तो बाबूजी अभी चला जाऊं?"

तुल०। हाँ अभी। इसी घड़ी! इसी दम।

किसान०। तो चला ही जाऊं एक दम?

तुल०। हां बे हां, कह तो दिया, बेहया कहीं का, कितना कहूं?

किसान०। अच्छा साहब जाता हूं। इतनी देर तक आपके पास

खड़ा था मन में थोड़ा सा मोह हो आया है। इसी से जाते नहीं बनता। एक दम चले जाने से अनुचित कहलायगा इसी से जाता हूं, धीरे धीरे और जाते जाते जाऊंगा !

तुल०। देख अगर अभी नहीं चला जाता तो गरदनिया देकर बाहर कर दूंगा।

किसान०। अरे बाप रे ! आप एक दम इतना कड़ा हो जांयगे ? इतना कड़ा, इतना गरम ! पहले आप जितना नरम थे उतने दयालु थे, अब इतना गरम हो जांयगे कि धक्का देंगे, गरदनियां देंगे ? मैंने ऐसा क्या गुनाह किया है ?

तुल०। मैंने तुमको पचास बार कहा, "मैं इस वक्त काम में हूं फुरसत नहीं है" तुम यहां से चले जाव।

किसान०। अच्छा तो क्या हुआ ? इतनी देर तो रह चुका। थोड़ा और रहूं इससे आपका बहुत हरज नहीं होगा ?

तुल०। तो तुम बिना धक्का खाये नहीं जावगे ? गरदन पर हाथ लगाना ही पड़ेगा ?

किसान०। गरदन पर हाथ लगाने से आप आफत में पड़ जाँयगे।

तुल०। आफत में पड़ेंगे हम ? हम पर आफत लावोगे ?

किसान०। हाँ साहब ! हमको मिरगी आती है,रह रह के मूर्छा आजाती है इसपर से आप और धक्का देंगे तो बड़ी आफत होगी।

"दूर हो पाजी यहां से ! बदमाश लुच्चा कहीं का !!" कहते हुए तुलसी बाबू कूद के किसान पर जा पड़े। लेकिन किसान भी

गाफिल नहीं, ज्योंही उसकी गरदन पर वकील साहब ने हाथ लगाया कि किसान ने वही हाथ पकड़ कर तुलसी बाबू को जोर से खींचा और झटकार कर ऐसा फेंका कि वकील साहब का दीर्घ देह एक कोने में जाकर धम्म से गिरा।

बाबू को तलमला कर गिरते देख किसान ने कहा—"मैं तो बाबूजी पहले ही कहता था कि मुझे मूर्छा का रोग है जिसको लोग मृगवायी कहते हैं। आप तो कानूनी आदमी हैं रफा दफा देख के और बूझ सूझ कर चलना चाहिये, हम लोग किसान हल-जोते बिलकुल गँवार घोंघाबसन्त होते हैं। अच्छा अब राम राम दाग कर मेलाराम कूंच करते हैं।"

कहकर किसान वहां से बाहर चला गया।

भीतर वकीली बैठकसे निकलकर किसान ज्योंही बाहरी दालान में पहुंचा कि उसके बगल से एक स्त्री सामने से आकर भीतर चली गई। उसका मुंह लम्बे घूँघट में छिपा था।

किसान के चले जाने पर स्त्री सरासर भीतर चली, चलते चलते मन में बोली—"अरे बाप रे! यह देवेन्द्रबिजय जासूस बूढ़े किसान के रूप में यहाँ क्यों आया था?"

—:****:—

सातवां बयान

घूंघटवाली कौन है ?

घूँघटवाली ने भीतर जाकर किवाड़ बन्द कर लिया और वकील से पूछा,—"अभी कोई आपके यहां आया था ?

वकील साहब कोने से उठकर हांफ रहे थे। हांफते ही हांफते बोले,—"हां एक बुडढा आया था।"

घूंघ०। वह कौन था ?

तुल०। कोई किसान था, मटियाबुरुज में रहता है।

घूंघ०। आपसे उसका क्या काम था ?

तुल०। उसकी कोई लड़की पागल है उसकी दवा का बन्दोबस्त कराने को आया था। लेकिन मैं समझता हूं उसकी लड़की पागल हो या नहीं वह खुद उससे ज्यादा पागल है।

घूंघटवाली ने कहा, "और मेरी समझ में उन दोनों से ज्यादा आप पागल हैं।"

तुल०। क्यों तुम ऐसा क्यों कहती हो ?

घूंघ०। सो कारण मैं पीछे बताती हूं पहले आप कहिये उसने आकर आपसे क्या कहा ?

तुल०। यही तो जो मैंने तुमसे कहा।

घूंघ०। अच्छा वह अपनी लड़की की दवा कराना चाहता है तो आपके यहां आने का क्या मतलब ?

तुल० । उसके किसी हेती ने भेजा था जो मनोरमा का हाल जानता है ।

घूंघ० । ठीक है ठीक है । यही मैं भी समझती हूं । अब तुम जान लो इतना पूछने का मेरा यही मतलब है कि वह किसान दूसरा कोई नहीं खुद देवेन्द्रबिजय मित्र जासूस था ।

घूंघटवाली की बात सुनकर वकील तुलसीदास काँप उठे । अकचका कर उससे पूछने लगे,—"क्यों कैसे तुमने जाना कि वह देवेन्द्रविजय था ?"

घूंघ० । मैं खूब जानती हूं ।

तुल० । तुमने उसको कहां देखा ?

घूंघ० । अभी मुझे बाहर दालान में मिला था । एक दिन और मैंने उसको इसी रूप में देखा था ।

तुल० । तुम भूलती तो नहीं ?

घूंघ० । मैं क्या भूलूंगी ?

तुल० । अगर सचमुच देवेन्द्रबिजय कहो तो हो भी सकता है, वह जरूर वही है । तुमको भी जानता है ?

घूंघ० । नहीं ।

तुल० । तो हमारे पास क्यों आया था ?

घूंघ० । आपके पास क्यों आया था सो मैं क्या बताऊं ? बड़े अचरज की बात यह है आपने उसको कुछ भी नहीं पहिचाना ? तौ भी मैं यह बता दूंगी कि आपके पास क्यों आया था ।

तुल० । कहो, कहो, जल्दी कहो ,तुम्हारी बातों से मैं बहुत

अकचका रहा हूं।

घूंघ०। मैं तो कहती ही हूं। लेकिन एक घण्टा पहिले मैं आ जाती तो आपको साफ उसके आने का कारण मालूम हो जाता और आप भी खुद खबर्दार हो जाते।

तुल०। मैं तुम्हारी इन बातों को कुछ भी नहीं समझता।

घूंघ०। वह आपको बेवकूफ बना गया है।

तुल०। तो कहो भी, कैसे?

घूंघ०। कहूं क्या, वह तो भाग गई है।

तुल०। कौन?

घूंघ०। मनोरमा।

तुल०। मनोरमा भाग गई? कब भागी? कैसे, भागी कैसे?

घूंघ०। उसको भागे आज चार दिन हुये, बड़ी चालाकी से भागी है।

तुल०। अरे यह तो सपने की सी बात मालूम होती है। गोविन्दप्रसाद कहां था?

घूंघ०। सोता था।

तुल०। वह उसको पकड़ने की तदबीर कर रहा है? अभी तक पकड़ी नहीं गई?

घूंघ०। अब तक पकड़ी नहीं गई। पता भर मिला है।

तुल०। कहाँ है।

घूंघ०। इसी भवानीपुर में है।

तुल०। और गोविन्द कविराज?

घूंघ० । भवानीपुर में ।

तुल० । कैसे पता मिला है ?

घूंघ० । जग्गू बाबू की बाज़ार में एक दूकान पर उसकी गठरी मिली है, लेकिन मनोरमा नहीं मिली ।

तुल० । तो वह गठरी लेने जरूर वहाँ आवेगी ।

घूंघ० । नहीं ।

तुल० । क्यों ?

घूंघट० । देवेन्द्र विजय यहां आया था ।

तुल० । आने से क्या हुआ ?

घूंघ० । आप वकील होकर इतना भी नहीं समझते ? वह देवेंद्र-विजय के यहां गई है । देवेन्द्र ऐसा कच्चा आदमी नहीं है कि उसको गठरी लाने के वास्ते आने देगा ।

तु० । तो क्या तुम समझता हो कि देवेन्द्रविजय ने मनोरमा का यह मुकद्दमा अपने हाथ में लिया है ?

घूंघट । बेशक ।

तुल० । मनोरमा को छिपा रक्खा है ?

घूंघट० । जरूर ।

तुल० । कहां ?

घूंघट० । अपने घर ही में रक्खा होगा ।

तुल० । उसका मकान कहाँ है जानती हो ?

"जानती हूं ।" कहकर घूंघटवाली मुसकुराई और बोली, "हमारे जानने से यहाँ बाकी क्या है ? अगर न जानती तो इस

तरह राज करने पाती ? अब तक जेल में जा चुकी होती । देवेन्द्र चक्कवेड़े में रहता है ।"

तुल० । तो भला अब क्या करना चाहिये ? क्या उपाय है ?

घूंघट० । उपाय तो एक ही है, उसके घर से मनोरमा को बाहर घसीट लाना ।

तुल० । कठिन है ।

घूंघट० । कठिन है ! आप देखना कल उसे जरूर ही पकड़ लाऊँगी । और अब की ऐसी जगह में भेजूंगी कि जहाँ से भाग नहीं सकती ।

तुल० । अच्छा तो क्या तुम ऐसा समझती हो कि मनोरमा ने सब हाल देवेन्द्रविजय से कह दिया है ?

घूंघट । बिना कहे देवेन्द्रविजय यहाँ क्योंकर आता ?

तुल० । देवेन्द्र बड़ा मजबूत आदमी है ।

घूंघट० । वह सदा का मजबूत है ।

तुल० । लेकिन मनोरमा के उसके यहाँ से एक बार बाहर निकाल लाने पर उसको फिर डर नहीं रहेगा ।

घूंघट०। हाँ अगर उसके खून की वह जाँच न करे तब ।

तुल० । किसका खून ! मनोरमा का ? मनोरमा का खून करोगी क्या ?

घूंघट०। हाँ ऐसा किये बिना देवेन्द्रबिजय के हाथ से निस्तार नहीं है। अगर मनोरमा जीती रही तो वह उसे ढूँढ़ कर बाहर कर लेगा और हम लोगों को आफत में डालेगा । जब यह मर जायगी

तब किसके जरिये से अपना काम चलावेगा ?

तुल०। अगर मनोरमा को देवेन्द्र के हाथ से बाहर न कर सके तो क्या हो ?

घूंघट०। इसके सिवाय एक और उपाय है जिससे हम लोग बेखटके हो सकते हैं। लेकिन उस उपाय में बहुत अक्ल और जोर दर्कार है।

तुल०। क्या, साफ बोलो।

घूंघट०। देवेन्द्रविजय को ही मार डालना।

इतना सुनते ही वकील साहब आसन छोड़ उठे और बोले, "हां यह तो हम लोग बेखटके कर सकते हैं लेकिन तुमने क्या करना विचारा है?"

घूंघट०। पहिले मनोरमा को हाथ में लाना।

तुल०। कैसे हाथ में लावोगी मुझे बता सकती हो ?

"अभी नहीं, जब जरूरत पड़ेगी तब मैं खुद बता दूँगी।" कह कर घूंघट वाली उठ खड़ी हुई।

तुल०। इस वक्त तुम जाती हो ? तो अब कब मिलोगी ?

घूंघट०। एक घण्टे बाद भी हो सकता है और एक हफ्ते तक नहीं हो सकता। लेकिन आप अब होशियार हो जाइये। सब से खबरदार होकर बात करना सीखिये। किसी का विश्वास न किया कीजिये।

तुल०। क्यों ऐसी खबरदारी क्यों ?

घूंघ०। आप इतना भी नहीं समझते ? मैं कहती हूं कोई मुसल-

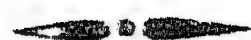
मान साहेब भोजपुरिया या मारवाड़ी बेजान पहिचान का आपसे मिलने आये तो खूब जानना वह देवेन्द्रविजय के सिवाय दूसरा कोई नहीं है, याद रखना।

तुल०। अब हमको खूब याद रहेगा। कहो अब इस काम में क्या नवीन की मदद लोगो?

घूंघट०। हां लेनी ही पड़ेगी।

इसके पहले घूँघटवाली ने एक बार भी अपना मुँह घूंघट से नहीं उघारा था। चलते समय घूंघट और खींचकर बड़ा कर लिया। उसके वास्ते बाहर दर्वाजे पर एक गाड़ी खड़ी थी। उसी में बैठकर चारो ओर से खिड़की बन्द कर दी। कोचवान ने घोड़े की पीठ पर चाबुक छुला दी, घोड़े घूंघटवाली से भरी गाड़ी को लिये बड़े बेग से खिदिरपुर की ओर रवाना हुए।

पाठकों ने किसान और इस स्त्री दोनों को शायद न पहचाना हो। किसान तो वही देवेन्द्रविजय बाबू थे जो शचीन्द्र के बाद भेष बदल कर बाहर हुए थे और स्त्री वही ३ नम्बर वाली बनावटी मनोरमा थी जो असल मनोरमा की सम्पत्ति हथिया कर रानी बनी बैठी है।



आठवाँ बयान

कविराज गोविन्द प्रसाद सेन

खिदिरपुर में गङ्गा के किनारे एक सेहमञ्जिला मकान है। मकान बड़ा भारी और बहुत से खण्डों में बटा है। नाम है उस का आनन्दकुटीर, आनन्दकुटीर के चारो ओर फलफूलों का बगीचा चहारदीवारी से घिरा हुआ है।

ठीक समय पर गाड़ी उस घूंघटवाली जाली मनोरमा को लिये हुए आनन्दकुटीर के दर्वाजे पर आ पहुंची। गाड़ी से उतर स्त्री घर के अन्दर चली, पहले ही एक नौकर को पुकार कर पूछा—" कोई बड़ा आदमी हमसे मिलने को आया था ?"

नौकर०। हाँ आये हैं ?

घूंघ०। चले गये कि हैं ?

नौकर०। ऊपर के बैठके में हैं।

स्त्री०। अच्छा उनको जाकर बोलो कि मैं अभी उनसे आकर मिलती हूं।

"बहुत अच्छा।" कहकर नौकर वहाँ से चलता हुआ। स्त्री अपने शयनागार में गई और घूंघट निकाल कर बिछौने पर लेट गई। थोड़ी देर तक लेटने के बाद जैसे कोई भूली हुई चीज याद आ जाय इस प्रकार बैठक में आये आदमी से मिलने को चली।

उस आदमी की उमर चालीस वर्ष की होगी। रङ्ग काला, शरीर बहुत बड़ा और मोटा, आँखें बहुत छोटी और लाल लाल नाक के

आगे का भाग मोटा, काले मुखमण्डल पर छोटे छोटे थोड़े और बिखरे बालों की दोनों भौंहें जिनका दूर से देखना कठिन है। इसी आदमी का नाम है गोविन्दप्रसाद सेन कविराज।

स्त्री ने आकर मुसकुराते हुए गोबिन्दप्रसाद से पूछा—"क्यों कविराज जी, कोई अच्छी खबर लाये? तुम्हारे रोगी का पता मिला?"

कविराज०। नहीं अब तक तो कुछ मालूम न हुआ।

स्त्री०। उस दूकान से गठरी लेने कोई नहीं आया?

कवि०। ना!

स्त्री०। अब मैं समझ गई, कोई नहीं आवेगा। तुम्हारा रोगी कहाँ है सो भी मैं जानती हूं।

कवि०। क्यों तुमने क्या उसको देखा है?

स्त्री०। आँखों से नहीं देखा लेकिन कहाँ छिपा है सो जानती हूं।

कवि०। अच्छा तो तुम बतलाओ मैं अभी उसे गिरफ्तार कर लाऊँगा।

स्त्री०। नहीं कविराजजी बातों से कहना जितना सहज है काम से कर लेना उतना नहीं है। वह बड़ी बेढब जगह में है।

कवि०। चाहे कहीं हो, है तो वह हमारा असामी! हमारा रोगी है। पागल होना उसका डाक्टरों से साबित हो चुका है। तब किसी का ऐसा कलेजा नहीं है कि हमारे रोगी को रोक रक्खे। सर्कार के यहां से भी यहां हमारे पास बहुत से पागल आया करते हैं, हमारा नाम राजदर्बार में भी है, मैं किसी को डरता थोड़े ही

हूं। किसी की ऐसी हिम्मत नहीं हो सकती कि हमारे काम में रोक टोक डाले। तुम जल्दी बतलाओ वह कहां है?

स्त्री०। देवेन्द्रविजय के घर पर है।

कवि०। देवेन्द्रविजय कौन है?

स्त्री०। देवेन्द्रविजय को आप नहीं जानते?

कवि०। मैं नहीं जानता, न जानने की जरूरत है, मुझे केवल उसका घर कहां है इसी का पता दर्कार है और कुछ नहीं चाहिये।

स्त्री०। आप उसके घर पर जाकर अपने रोगी को पकड़ लाने के लिये दावा करना विचारते हैं सो ठीक नहीं, आपको समझना चाहिये कि देवेन्द्रविजय आज कल बङ्गाल हाते में प्रधान जासूस है।

कवि०। वह एक नहीं दस जासूस हो तो भी कुछ चिन्ता नहीं है।

स्त्री०। तो सचमुच वह अकेले दस जासूस के बराबर है।

कवि०। वह चाहे जो हो उसके मकान का हमको पता भर बता दो, हम अपने रोगी को उससे छीन लावेंगे।

स्त्री०। उसका मकान पद्मपोखर चक्रबेड़े में है। एक बात और भी मैं आपसे कहती हूं, अगर तुम अपने रोगी को उसके हाथ से ला सको तो ५०० रुपया सिवाय इनाम पावोगे।

कवि०। बहुत अच्छा। कल सबेरे आकर तुमसे यह पांच सौ रुपया अदा करूंगा।

स्त्री० । कुछ पर्वाह नहीं, उसी वक्त पावोगे । लेकिन यह तो कहो क्या अभी उसके घर जाते हो ? अगर जाते हो तो उससे पार नहीं पावोगे यह मैं कह देती हूं । तुम्हारी मेहनत विफ़ल होगी । मैं देवेन्द्रविजय को अच्छी तरह से जानती हूं ।

कवि० । कुछ हरज नहीं एक बार मैं भी उसको देख आऊँगा ।

स्त्री । अच्छा अब कल खबर मिलेगी, दस बजे सवेरे तुम खुद आ जाना ।

कवि० । बहुत अच्छा अब मैं जाता हूं ।

स्त्री० । अच्छा ठीक है जाओ ।



नौवां बयान

कविराज का उद्यम

देवेन्द्रविजय अपने शयनागार में सेज पर पड़े पड़े एक अंगरेजी अखबार पढ़ रहे थे इतने में बालक नौकर शिव ने आकर उनके हाथ में एक छोटा सा पुर्जा दिया।"

देवेन्द्रविजय ने उसे पढ़कर मन में कहा—"कबिराज गोविन्दप्रसाद खुद आ गये ? अच्छा हुआ हमको उनसे मिलने के लिये उनके घर जाने की तकलीफ उठानी नहीं पड़ी।

गोविन्दप्रसाद सेन से मुलाकात करने के पहले ही जहां रेवती और मनोरमा बैठी बातें कर रही थीं वहाँ पहुंच कर मनोरमा से बोले, "मनोरमा ! गोविन्दप्रसाद कविराज आये हैं।"

मनो०। कहाँ ? गोविन्दप्रसाद ?

देवे०। हां यहीं आया है !

मनोरमा०। यहां काहे को आया है, क्या काम उसको यहां आने का ?

देवे०।मालूम होता है तुम्हारे ही वास्ते,तुमको लेने आया होगा।

डर कर मनोरमा बोली, "ऐं बाबू क्या कहते हैं ? बाबूजी बचाइये ! यह तो बड़ा अनर्थ हुआ। आपकी शरण में हूं। आपके पाँव पड़ती हूं हमारी रक्षा कीजिये। उसको हमें न सौंपियेगा।"

देवे०। नहीं, नहीं। तुम इस बात के वास्ते तो नाहक डरती हो। तुम्हारा यहां होना इसको कैसे इतना जल्दी मालूम हुआ

यही मैं सोच रहा हूं। मालूम होता है तुम्हारे वहां गठरी लाने न जाने के कारण तुम्हारे वैरियों ने कोई भेदिया तुम्हारे पीछे छोड़ा था उसी ने पता दिया होगा।

मनो०। नहीं नहीं ऐसा कभी नहीं हो सकता।

देवे०। अच्छा तुम्हारे मन में क्या आता है?

मनो०। या तो दुश्मन खुद हमारे पीछे आये होंगे या और किसी तरह से उन्होंने जान लिया कि मैं आपकी शरण में आई हूं। नहीं तो उनमें ऐसा साहस नहीं हो सकता कि आप से जासूस के पीछे जासूसी करें।

"खैर जो हो। अब देखें गोविन्दप्रसाद किस इरादे से यहां पधारे हैं?" कहकर देवेन्द्रविजय वहां से बाहर आये।

दसवां बयान

उद्यम का फल

बाहर दालान में गोविन्दप्रसाद कविराज बैठे थे। देवेन्द्रविजय के आने पर उन्होंने पूछा, "क्या आप ही देवेन्द्रविजय मित्र हैं?"

देवे०। हां साहब मेरा ही नाम देवेन्द्र है। देवेन्द्रविजय से जो कहना करना विचार कर आये हैं वह आप हमसे कह डालिये इससे आप जानियेगा कि उचित ही व्यक्ति से आपने कहा।

कवि०। आपने एक पगली लड़की को अपने घर रक्खा है?

देवे०। ओः बस इसी के वास्ते?

कवि०। हां इसी के वास्ते।

देवे०। आपको किसने यह खबर दी?

कवि०। किसी ने नहीं दी मैंने खुद जाना है। मैं कविराज हूं। जिस रोगी को आपने अपने घर में रक्खा है वह हमारे ही ताबे की है।

देवेन्द्र०। खैर होगी, तो इससे क्या हुआ?

कविराज०। होगा क्या? मैं अपने रोगी को लेने आया हूं। आप उसे छोड़ दीजिये।

देवेन्द्र०। अच्छा घबराइये नहीं। आपके रोगी का नाम क्या है?

कविराज०। नाम? नाम तो उसका अज्ञात है।

देवेन्द्र०। फिर कैसे उसको हमलोग पहचान सकते हैं।

कविराज०। चेहरा देख के।

देवेन्द्र० । और उसके पागलपन से नहीं ?

कवि० । हाँ ! पागलपने से भी ।

देवे० । उसमें पागलपन क्या है ?

कवि० । पागलपन तो बड़ा भारी है। लोगों से कहती फिरती है कि खिदिरपुर आनन्दकुटीर की मालकिन मैं हूं, मेरा नाम मनोरमा है।

देवे० । अच्छा कविराज जी ! आप खूब बिचार कर देखिये तो इसमें कुछ भेद है या नहीं ?

कवि० । हम यहाँ आपके सवालों की जवाबदेही करने नहीं आये बल्कि अपने रोगी को ले जाने के वास्ते आये हैं ।

देवे० । वह आपका रोगी है इसका कुछ सुबूत लाये हो ?

कवि० । हाँ बहुत से हैं ।

देवे० । कहाँ, देखें ?

कवि० । पहले आप यह बतलाइये कि वह यहां है या नहीं ?

देवे० । हाँ जरूर है, आपको सच्ची खबर मिली है ।

कवि० । मैंने एक विश्वासी आदमी से पता पाया है ।

देवे० । वह विश्वासी आदमी कौन है ?

कवि० । जिसने हमारे रोगी को इस घर में जाते हुए अपनी आंखों देखा है । उसी ने हमको खबर दी है ।

देवे० । तो वह आदमी रोगी को जानता है ?

कवि० । हां जानता है ।

देवे० । उस आदमी से आपके रोगी की कैसे जान पहचान हुई थी ?

कवि० । मैं आपको इन व्यर्थ बातों का जवाब नहीं देना चाहता ।

देवे० । तो आपका रोगी मेरे घर में है इस बात को मैं भी मंजूर करना नहीं चाहता ।

कवि० । तो जैसे आपको मंजूर करना पड़े वही मैं करूंगा ।

देवे० । बहुत अच्छा ! कहिये कैसे क्या करेंगे, मैं भी सुन सकता हूं ?

कवि० । अब हमको कानून से काम करना पड़ेगा ।

देवे० । उसमें तो कुछ समय लगेगा ।

कवि० । तो उसमें कुछ नुकसान नहीं है ।

देवे० । इतने में तो जिसे आप अपना रोगी कहते हैं उसको हम कहीं और छिपा सकते हैं ।

कवि० । तो क्या आप उसकी रक्षा नहीं करेंगे ?

देवे० । क्यों ? रक्षा क्यों नहीं करेंगे ?

कवि० । चाहे आप जहां छिपा रक्खो वह हमारे हाथ से निकल नहीं जा सकती, अन्त को हमारे ही हाथ में उसको आना होगा ।

दे० । खैर होगा । अच्छा वह यहां है इसका कुछ सुबूत आपके पास है ?

कवि० । उसका यहाँ होना हम जानते हैं ।

देवे० । जानते तो आप भी हैं हम भी हैं । आप नहीं जानते सो बात नहीं । वह जानने की बात दूर कीजिये । कुछ सुबूत है या नहीं । अगर है तो दिखाइये ।

कवि० । जब हम जाबिते से चलेंगे तब दिखावेंगे । इस वक्त

हम आपसे यह पूछते हैं कि आप उसको छोड़ देंगे या नहीं ?

देवे०। शायद जबतक आप मुझे दो बातों का पूरा सुबूत न देंगे तब तक मैं आपका कहना नहीं कर सकूंगा। पहले यह कि वह यही है दूसरे यह कि वह सचमुच पागल है।

कवि०। हां इसका सुबूत तो आप अभी लीजिये। आप इन दोनों कागजों को पढ़ लीजिये मालूम हो जायगा।

देवेन्द्रविजय ने कविराज के हाथ से दोनों कागज ले लिये और उनपर जिन डाक्टरों के दस्तखत थे उनका नाम अपने नोट-बुक में लिख कर फिर वह कागज कविराज को लौटा दिया।

कविराज जी ने कागज वापस पा कर कहा, "क्यों आपने पढ़ा क्यों नहीं ?"

देवे०। और कुछ काम नहीं है। जो जरूरत की चीज थी वह मैंने देख ली।"

गो०। क्या डाक्टरों के नाम ही की जरूरत थी ? अच्छा खैर अब हमारे रोगी को हवाले कीजिये।

देवेन्द्र०। मैं हवाले कर सकता हूं अगर मेरे कुछ सवालों का ठीक ठीक जवाब दे दें।

गो०। पूछिये।

देवेन्द्र०। आपको यहां किसने भेजा है ?

गो०। यह बात मैं आपको बता नहीं सकता, किसी प्रतिष्ठित स्त्री का नाम कहना उचित नहीं है।

देवेन्द्र०। अच्छा ठीक वही प्रतिष्ठित स्त्री न जिसको आज

कल आप मनोरमा कह के जानते हैं ?

गो० । नहीं, मैं वह सब कुछ नहीं जानता ।

देवेन्द्र० । अच्छा आपके इस रोगी का खर्च कौन देता है ?

गो० । इस बात से आपको क्या काम है ?

देवेन्द्र । हाँ काम है । बिना काम के पूछ कर आपको मैं तकलीफ देने वाला नहीं हूं ।

गो० । आपने जिसका नाम लिया वही ।

देवेन्द्र । मनोरमा ?

गो० । हाँ ।

देवे० । आपका रोगी यहां है, यह बात आपने उसी से सुनी है?

गो० । नहीं उसने नहीं कहा । उनसे तो अभी मेरी मुलाकात नहीं हुई ।

देवेन्द्र० । सच कहिये सच, झूठ नहीं कहना ।

गो० । क्यों ? हमको क्या आप झूठा बनाते हैं ?

देवेन्द्र० । हां आपकी बातों से तो यही जान पड़ता है ।

गरज कर गोबिन्दप्रसाद बोले—"नास्तिक, बदमाश कहीं का ! हम झूठे हैं ? हमको झूठा बनाता है ? याद रक्खो यह अगर तुम्हारा मकान न होता तो अभी......

बात काट कर जासूस देवेन्द्रविजय ने कहा—"बस, बस ! कविराज जी ! घबराइये मत । रंज न हूजिये । अगर यह हमारा मकान न होता तो हम अभी आपको मजा दिखा देते । हमारे घर आये हैं इसी से आप बचे जाते हैं ।"

गो० । बस हम कुछ नहीं जानते हमारे रोगी को अभी बाहर कर दो ।

दे० । अच्छा पहले अपना कपड़ा संभालिये, क्यों बेजरूरत का गुस्सा करके अपना बदन जलाते हैं, यह सब बन्दर भबकी देवेन्द्र के यहां नहीं चलेगी ।

गोवि० । तो क्या आप एक दम इनकार करते हैं ?

देवे० । क्या अबतक आपने नहीं समझा ?

गोवि० । क्यों अभी तो आपने वादा किया था कि सवालों का जवाब देने पर रोगी को छोड़ देंगे ।

देवे० । यह कुछ मैंने पक्का करके थोड़े कहा था ? इरादा था कि अगर आप मेरे सवालों का ठीक ठीक जवाब देंगे तो हम छोड़ देंगे, लेकिन मालूम होता है कि आपके रोगी को आपके हाथ देना उचित नहीं है ।

गोवि० । तुम नहीं दोगे तो मैं छोड़नेवाला नहीं हूँ । जैसे होगा तैसे लेकर जाऊंगा !

देवे० । ओहो ! कविराज जी ! आप कैसे ले जांयगे बतलाइये तो सही ।

गो० । जैसे पावेंगे वैसे ले जायंगे ।

देवे० । कब ?

गोबि० । अभी ।

देवे० । अभी कैसे ?

गोबि० । जोर से, बल करके ।

देवे० । आप आदमी हैं या तमाशा ! बात करते हैं या तमाशा करने आये हैं ? आपकी बातों से तो हंसी नहीं थम्हती ।

कोप के मारे कविराज जी गरज कर बोले, "मैं और कुछ नहीं सुनना चाहता । मुझे अपने रोगी की जरूरत है, देते हो या नहीं सो बताओ ।"

देवे० । नहीं देते ।

"अच्छा नहीं देते तो लो ।" कह कर गोविन्दप्रसाद ने हाथ की गुप्तो छड़ी का दस्ता दबाया, तुरत तेज धारदार छुरी निकल आई । कविराज ने देवेन्द्र की ओर ताक कर उन्हीं पर वह बरछा चलाया ।

अगर कविराज का वह वार खाली नहीं जाता तो देवेन्द्र-विजय अब तक छटपटा कर जमीन में गिर जाते । लेकिन देवेन्द्र ने सहज ही उस वार को निष्फल कर दिया । ज्योंही कविराज ने देवेन्द्र के सिर पर बरछा चलाया देवेन्द्र झट बैठ गये । बरछा खाली जाकर दीवार पर ठनाका बोल गया ।

इतने में देवेन्द्रविजय ने गोविन्दप्रसाद के कपाल पर वह बज्र-मूक मारा कि वह चक्कर खा कर गिर गये । कविराज फिर संभल कर उठे और कपड़े के भीतर से बड़ी भुजाली निकाल कर देवेन्द्र को मारने चले । देवेन्द्र कविराज की इस चोट के लिये पहले ही से तैयार थे । पहले दो कदम पीछे हटे, लेकिन भाग नहीं गये । देवेन्द्र की जन्मपत्री में पीठ देकर भागना लिखा ही नहीं । कविराज ने जिस हाथ में भुजाली पकड़ी थी उसी पर ऐसी समगताह लात मारी कि उनके हाथ से भुजाली गिर कर जमीन

चूमने लगी। इसके बाद देवेन्द्र ने कविराज का शरीर ऐसा सरिया कर पकड़ा कि कविराज को मालूम हुआ जैसे उनका सारा शरीर लोहे की सांकल से कस गया हो। कविराज ने छूट-ने के लिये बहुत कुछ हाथ पांव पीटा, लेकिन सब विफल हुआ। देवेन्द्रविजय के हाथ से छूट जाना सहज नहीं है।

नौकर शिबू इस हाथापाही की आवाज सुन कर दौड़ा आया। देवेन्द्रविजय ने शिबू से कहा—"शिबू! अच्छी तरह से दरवाजा तो खोल देना।"

शिबू ने आदेश पालन किया। देवेन्द्रविजय कविराज को जमीन से ऊपर उठाकर आगे चले, जैसे कोई सयाना आदमी बच्चे को गोद में लेकर जाता है। कविराज जी छटपटाने लगे और साथ ही गाली गुफ्ता भी करने लगे।

देवेन्द्रबिजय ने बाहर गोबिन्दप्रसाद को रास्ते पर गठरी की तरह फेंक दिया। कविराज जी धबाक से सड़क पर जा गिरे। देवेन्द्र बाबू ने झट भीतर से किवाड़ बन्द कर लिया।



ग्यारहवां बयान

ग्राम्य पथ

गोधूली बेला है। शाम होने को बहुत देर नहीं है। सोने की बड़ी थाल के समान आधा सूर्य्यदेव क्षितिज के पास लाल मुख दिखा रहे हैं। धूप की सुनहली आभा पेड़ों की चोटी और बसन्त के हरे लाल कचनार पत्तों पर अनोखी छबि दिखा रही है। थोड़ी ही देर में जगत पर बिभावरी छा गई। प्रफुल्लहृदया यामिनी हंसने लगी। दम्पती का मधुर हास्य देख कर फुलवाड़ियों की कलियां खिल उठीं, नवपल्लवावली हँस पड़ी, लतिकादल से हँसी छूटी, भागीरथी की छाती में माथे पर काञ्चनमुकुट धारण कर लहरी बालागण मुसकुरा उठीं। निशाविकाशिनी कमलिनीगण हँसने लगीं। स्वच्छसुनील नभमण्डल में शुभ्र श्वेत मेघमालायें हँस पड़ीं। चारों ओर हंसी की हाट बैठ गई। जिधर आंख फेरो उधर ही हंसी, जिधर कान धरो उधरही हास्य ध्वनि, ऐसी हंसी की हाट में किस अभागे का बिषन्न अन्तर प्रफुल्ल न होगा? कौन इस आमोद के समय चुपचाप बैठ कर अपने बदनसीब पर मलीनमुख चिन्ता करेगा? ऐसेही समय खिदिरपुर में आनन्दकुटीर के पिछवाड़े वाले छोटे रास्ते से एक बूढ़ा पीठ पर बड़ा सा कूबर लिये हाथ की रामसोटी पर सारे शरीर का भार दिये धीरे धीरे चला जा रहा था। बूढ़े की उमर बहुत हो गई थी। सिर और दाढ़ी मूंछ के बाल एक भी काले नहीं सब पक कर सफेद हो गये थे। एक

मलीन और पुराना फटा कपड़ा पहने था। दमे के मारे तंग था। दो कदम चलता था तो दस बार खोंखों करता था।

जब वह आनन्दकुटीर के पीछे फुलवाड़ी के छोटे दरवाजे पर पहुँचा तब पहले से और जोर से खोंखों कर स्वास लेने लगा, तुरंत ही दरवाजा खुला और मुसलमानी पोशाक पहने एक जवान आदमी धीरे से बाहर आकर बोला, "ओहो! मामा साहब आप आ गये?

बूढ़ा कूबरवाला धीरे से बोला, "हां शचीन्द्र।

पाठकों को समझने में अब बाकी नहीं रहा कि बूढ़े मामा देवेन्द्रविजय हैं और मुसलमानी पोशाक वाला उसी जासूस देवेन्द्र का भाञ्जा शचीन्द्र है।

शचीन्द्र बोला—"मामा! अच्छे मौके पर आये आप को बहुत सी बातें कहनी है।

देवेन्द्र। "अच्छा वह सब मैं और समय सुनूंगा। इस वक्त ठहरने का समय नहीं है। मैं अभी शिवपुर के कविराज गोविन्द प्रसाद के यहाँ जाता हूं।

शचो०। तो अब कब मिलेंगे।

वहां का काम करके जब लौटूंगा तब तुमसे यहीं मिलूंगा। यह कह कर देवेन्द्रविजय वहाँ से बिदा हुए।



सातवाँ बयान

शिवपुर।

जब देवेन्द्रविजय शिवपुर पहुंचे तब रात बहुत चली गई थी। रास्ते में लोगों का आना जाना बन्द था सारा जगत निन्द्रा की गोद में विश्राम कर रहा था।

आकाश निर्मल, मेघशून्य, परिष्कृत, कहीं कहीं तारे छिटके पड़े थे निष्कलङ्क आकाश के एक भाग में सकलंक चन्द्र हँस रहा था ऐसे सुहावने समय में देवेन्द्रविजय मित्र ने ढूंढ़ ढाढ़ कर गोबिन्दप्रसाद कविराज की ऊँची अटारी देखी। उस अटारी के ऊपर दालान में कुछ चिराग जल रहे थे। लेकिन कहीं से किसी की कण्ठध्वनि नहीं सुनाई देती थी। नीचे के मकान में भी रोशनी थी, यह रोशनी खिड़की से निकल कर बाहर चांदनी में मिल गई थी। नीचे के महाल से रोगियों की आह ऊह, रोदन शब्द और पागलों की बार बार हंसी सूनसान रात्रि की निस्तब्धता भंग करती थी।

देवेन्द्रविजय ने दरवाजे पर जाकर किवाड़ पर कई बार धक्का दिया। थोड़ी देर पर एक नौकर ने आ कर दरवाजा खोल दिया।

नौकर को देखकर देवेन्द्रबिजय ने कहा, "कविराजजी हैं?"

नौकर। नहीं, बाहर गये हैं।

देवेन्द्र। कहां गये हैं तुमको मालूम है? आज लौटेंगे या नहीं?

नौकर। किसी रोगी को देखने गये होंगे? आज लौटेंगे या नहीं सो हम ठीक नहीं कह सकते।

देवेन्द्र। घर से गये हैं कब ?

नौकर। शाम होने से पहले।

देवेन्द्र। तब तो बड़ी आफत हुई, इतनी तकलीफ सह के आने पर भी जब नहीं मिले तब भला मैं बूढ़ा आदमी इतनी रात को कहां जाऊं ?

नौक०। तो आपको क्या काम है कह जाइये मैं उनसे कह दूंगा।

देवेन्द्र०। काम तो भैया यही है कि हमने अपनी एक पगली लड़की को कबिराजजी के ताबे में दवा करने के वास्ते दिया था उसी का हाल जानने आया था कि कैसी है ?

नौक०। पगली लड़की कहां है। अब तो कोई नहीं है।

देवेन्द्र। अरे ! यह कहते क्या हो ? तो हमारी लड़की क्या मर गई ?

नौक०। अच्छा आपकी लड़की का नाम क्या था ?

देवेन्द्र०। नाम ? नाम तो वह सदा की पागल थी इससे हम लोग पगली पगली कह के पुकारते थे। बाकी भैया चेहरा बड़ा सुघर था। अट्ठारह उन्नीस बरस की थी। उसकी उमर के साथ जब उसका पागलपना भी बढ़ने लगा तब उसको कविराज के हाथ में दवा के वास्ते सौंप दिया।

नौक०। अरे हां, हां ठीक वही है चार पांच दिन हुए भाग गई।

देवेन्द्र०। क्या कहा भाग गई ? कब भागी ? कैसे भागी ? क्या इतने दिन पर भी उसका पागलपन नहीं गया ?

नौक०। ओहो रे ! वह लड़की क्या आपही की थी। बाकी जो

हो दादा लड़की तो बड़ी सुशील और दयावन्ती थी हमी लोगों पर उसकी रक्षा का भार था, लेकिन इतने दिनों में एक दिन भी उसका पागलपन नहीं देखा। न जाने आपने उसका क्या पागलपन देख उसको यहां भेजा था? अगर वह पागल हो तो आप उससे बढ़कर पागल हैं। और हम लोगों के कविराज जी भी हैं। कविराज ही क्या तब तो सारे संसार को पागल कहना चाहिये। वैसी गम्भीर और शान्त लड़की तो बाबा हमने कभी नहीं देखी। उसका पागलपन अगर कहें तो यही कि वह अपने दुःख से रोती थी इसके सिवाय और कुछ नहीं कहती थी। जो कोई उसको कुछ कहता वह तुरन्त उसे सुनती थी आप बड़े निठुर बाप हैं कि वैसी लक्ष्मी सी लड़की को पागल कह कर आपने यहां भेज दिया। आप तो बूढ़े होगये हो हिन्दू का बूढ़ा साठ पर पहुंचने से सठिया जाता है सा ही आपकी अकल सठिया गई है।

देवेन्द्र०। सुनो बेटा! बहुत हँसी अच्छी नहीं होती ऐसी दुष्ट लड़की का सुशील और शान्त कह के तुम हमारी हंसी करते हो! सो मुनासिब नहीं है। अभी कच्ची उमर के न हो? जवान पट्ठा हो बूढ़े से दिल्लगी करना अच्छा नहीं है। अच्छा सुना अब मैं जाता हूं। कल कविराजजी से भेंट करने आऊंगा। वह जब आवें तब कहना कि देवेन्द्रविजय अपनी पगली का हाल पूछने आया था बस वह जान लेंगे कि मैं कौन हूं और किस वास्ते आया था?

आठवां बयान

नई खबर

जब देवेन्द्रविजय शिवपुर से लौट कर शचीन्द्र से मिलने के लिये खिदिरपुर को चले तब सबेरा होने में बहुत देर नहीं थी।

पूर्वाकाश के प्रान्त भाग में लाली छा रही थी हंसती हुई ऊषा देवी धीरे धीरे पूर्व गगन के स्वर्णजटित सोपान से ऊपर चढ़ती आती थी।

देवेन्द्रविजय ने आनन्दकुटीर के पिछवाड़े खिड़की के पास आकर शचीन्द्र से एकान्त में भेंट की और पूछा—"क्या कुछ खबर पायी है ?"

शचीन्द्र। हां ! बहुत सी खबर मिली हैं।

देवेन्द्र०। बोलो।

शचीन्द्र। रामगुलाम और तीनों में से जो मरी है उसकी जिसने दवा की थी उस डाक्टर को देखा है।

देवेन्द्र०। वह कौन है ? क्या नाम है ? रहता कहां है ?

शचीन्द्र। नाम नवीनचन्द्र, इसी आनन्दकुटीर में रहता है। इस वक्त वही आनन्दकुटीर का मालिक है इस वक्त जो मनोरमा बन के सब सम्पत्ति दखल किये बैठी है उसी का स्वामी है।

देवेन्द्र०। कितने दिन से उनमें ब्याह हुआ है तुमने सुना है ?

शचीन्द्र। हां व्याह हुए एक महीना हुआ।

देवेन्द्र। तब तो हाल ही का ब्याह है।

शचीन्द्र। हां व्याह तो हालही में हुआ है लेकिन दोनों में मिलाप नहीं है। दिन रात झगड़ा कलह हुआ करता है।

देवेन्द्र। तुमको यह कैसे मालूम हुआ?

शचीन्द्र इसी बागीचे के माली से सब सुना है और नवीन-चन्द्र डाक्टर को तो मैंने अपनी आंखों देखा है। वह साधारण स्वभाव का नहीं बड़ा विकट आदमी है। और रूप रंग में जैसे दूसरा फूल साहब हो *।

देवेन्द्र। हमारा मित्र अरिन्दम जिस फूल साहब के हाथ से सत्यानाश हुआ वही? अच्छा उसके साथ तुम्हारी कुछ बातें हुई थीं।

शचीन्द्र। हाँ उसी ने तो हमको अपना कोचवान करके नौकर रक्खा है अब यहां मैं शचीन्द्र नहीं हूँ मेरा नाम करीम बक्स पड़ा हैं।

देवेन्द्र। हां खूब किया शाबाश। तुम्हारी बुद्धिमानी का हमको बहुत भरोसा है। देखो हमेशा होशियार रहना।

इसके उपरान्त देवेन्द्रविजय ने इस मामिले में जो कुछ पता पाया था वह सब शचीन्द्र से कह सुनाया। वह अपने सहकारी के साथ कोई बात छिपाते नहीं थे। जाती बार देवेन्द्रविजय ने कहा, "देखो शचीन्द्र तुम्हारे इस काम से मैं बहुत खुश हूं। मैं

* डाक्टर फूल साहब की अलौकिक घटनायें "मायावी" नामक पुस्तक में लिखेंगे। फूल साहब कैसा शठ और ठग था उसका हाल जान कर सब लोग बिस्मित होंगे। ग्रन्थकार।

भी यही चाहता था कि तुम आनन्दकुटीर के आस पास कोई काम ढूंढ़ लो सोही तुमने कर लिया। सदा अपने काम पर ख़याल रखना मानों आंख खोलकर मुंह बन्द किये देखते चलना। तभी काम जल्दी पूरा हो जायगा। '१७ क' पुलिन्दे का पता लेने की फिकर ज्यादा रखना। अब मैं जाता हूं।

शचीन्द्र०। कहां जायंगे ?

देवे०। घर जाऊंगा। मुझे ढंग से मालूम होता है कि वहां कोई घटना हुई होगी।

शचो०। काहे मामा साहब! आप ऐसा क्यों कहते हैं ?

देवे०। क्योंकि मनोरमा के वास्ते वह सब बड़ी फिकर में है। कबिराज भी घर में नहीं मिला। शाम ही का निकाला हुआ अब तक घर नहीं गया वह सब जरूर कुछ न कुछ चक्र चला रहे हैं।

शची०। अच्छा समय पर आप एक बार और मिलियेगा।

देवे०। खैर तुम होशियार रहो। देखो क्या होता है सब की खबर रखना मामिला बड़ा टेढ़ा पड़ा है। अब मैं चलता हूं।

सचीन्द्र उसी छोटे दरवाजे से भीतर गया और देवेन्द्र वहां से अपने घर को रवाना हुए।



तीसरा खण्ड

पहाड़ में लड़की।

I'll tell thee what my friend,,
He is very serpent in my way,
And wheresoe'er this foot of mine doth tread,
He lies before me—Dost thou understand me ?

Shakspeare—"King John.'

पहला बयान

सूना घर

सबेरे देवेन्द्रविजय पहुंचे। प्रभातकाल के थाल सरीखे सूर्य्य की सुनहली किरणें चारों ओर फैल रही थीं। सारा संसार निशा की गोद से उठकर राम नाम लेता हुआ अपने अपने अभीष्ट चिन्तन में लग रहा था।

अपने दरवाजे पर पहुंचते ही एक कु सगुन के डर से देवेन्द्र का कलेजा कांप गया। किसी तरह घर के भीतर गये तो किसी का कण्ठ स्वर नहीं सुन पड़ा। भीतर सर्वत्र सन्नाटा था। जान पड़ता था घर में कोई चिरई का पूत नहीं है, जल्दी से जीने पर चढ़कर ताबरतोड़ अटारी पर पहुंचे। शयनागार में जाकर चारो ओर देखा। कहीं कोई नहीं। तब जोर से "रेवती! रेवती!" फिर "मनोरमा! मनोरमा!" कह कर पुकारा। लेकिन खूब जोर से पुकारने पर भी जवाब नहीं मिला केवल देवेन्द्र की बातें दीवारों से टकरा कर उनके कानों तक पहुंचीं।

देवेन्द्र आपही आप कहने लगे, "बड़ा अचरज है कि यह सब कहां चली गयीं ? फिर शयनागार के पासवाले बरंडे में आये वहां देखा तो सब सामान जहां का तहां रक्खा है। आँगन की ओर नजर गई इधर उधर जो कुछ देखा उससे उनका सिर चकरा गया। देखा तो खून से भींगी एक अंगोछी आंगन में पड़ी है ? वह अंगौछी उन्हीं की स्त्री रेवती के ब्योहार में रही थी। क्या बात है सोचने लगे, सोचते सोचते एक दम बदहवास होने लगे। उनकी जिन्दगी में ऐसा बदहवास होना यही पहली बार था। और कभी देवेन्द्र का हृदय इतना उद्वेगित नहीं हुआ लेकिन इस समय अधीर होने से बड़ा अनर्थ होगा। यह देवेन्द्र सरीखे बुद्धिमान् आदमी को समझने में बिलम्ब नहीं हुआ। झट साहस बाँध कर तैयार हो गये और इस आफत के समय क्या करना चाहिये सो बिचारने लगे।

इस समय क्या करना उचित है इसके बिचारने में देर होने से बड़ी हानि होगी। और जिसने रात को सब उत्पात किया है उनको पकड़ना कठिन हो जायगा।

थोड़ी ही देर में देवेन्द्र के चेहरे का रंग बदल गया। जिस कूबर बेष से शचीन्द्र की मुलाकात को गये थे उसे बदल डाला। अब देवेन्द्र की सूरत देखने से बोध हुआ मानो चिन्ता के मारे उनका हृदय उथलपुथल हो रहा है, ओठ सूख गये हैं आँखें मँटरा गई हैं। मुखमण्डल गम्भीर होने पर भी नितान्त शोकाच्छन्न और अतिशय मलीन है।

देवेन्द्र ने आपही आप कहा—"देवेन्द्र! धैर्य्य धरो, अधीर मत हो। काम बिगड़ेगा ठहरो! थोड़ी देर ठहरो। फिर तो अपनी बिपद् तुम आपही दूर करोगे, कातर मत हो! अगर तुम अपनी पहली बुद्धिमानी, पहला साहस, पहला तेज पूर्व निपुणता फिर लेना चाहते हो तो जबतक तुम्हारा तुम्हारे मन से मिलान न हो तब तक प्रतीक्षा करो।"

इस प्रकार मन को प्रबोध देकर थोड़ी देर बाद देवेन्द्र के मुंह से यह निकला—"पाखण्डी पापी डाकुओं ने यहां आकर अनाथ असहाय स्त्रियों पर जुल्म किया है। इसी में उन्होंने अपनी बहादुरी दिखाई है। अच्छा कुछ परवाह नहीं, इसका बदला लूँ तभी मेरा नाम देवेन्द्रविजय नहीं तो नहीं। मैं जिन्हें प्यार करता हूं जिनको अन्तःकरण से चाहता हूं उनको हर ले जाकर इन चाण्डालों ने मेरे जी में आग लगाई है उससे उनका निस्तार नहीं होगा। पाखण्डियों ने अपनी आफत आप बुलाई हैं। देवेन्द्र साधारण आदमी नहीं है! पाखण्डी! पापी! तुमलोग अब खबरदार हो।

इसके बाद देवेन्द्र ने अपना शयनागार अच्छी तरह देखने बाद फिर आपही आप कहा—"मालूम होता है जब डाकुओं ने आक्रमण किया तब रेबती और मनोरमा दोनों यहीं सोती थीं। उनको सोतेही में यहां से दुष्ट उठा ले गये हैं। लेकिन यह खून भरी अंगोछी कहां से आई?

दूसरा बयान

सम्बाद।

जल्दी जल्दी जासूस देवेन्द्रविजय अपने नौकर शिबू के पास चले। मकान के पीछे एक छोटी सी कोठरी में उसका डेरा था उसी में शिबू रोटी बनाता खाता पीता और उसी में सोता था। उसी कोठरी में जाकर देवेन्द्रविजय ने देखा तो शिबू अपने कम्बल पर पड़ा है। लेकिन हाथ पांव उसके ऐसे बँधे हैं कि हिला भी नहीं सकता। उसकी अंगौछी फाड़कर उसके मुंह में इतनी भर दी गई है कि वह बोल भी नहीं सकता! देवेन्द्रविजय ने पहले उसके मुंह से कपड़ा बाहर करके उसका बन्धन काट दिया।

इस दुर्गति में शिबू की बुरी हालत थी। शरीर संज्ञाशून्य हो गया था। देवेन्द्रविजय उसको उठाकर बाहर लाये।

बाहर ला कर पूछने लगे। "शिबू! हाल तो बताओ क्या मामिला है?"

शिबू ने कहा। "मैं तो बाबूजी कुछ नहीं जानता।,,

देवेन्द्र०। तुम पर किसने पहले कहां कैसे चोट की?

शिबू०। मैं उस वक्त यहीं इसी बिछौने पर पड़ा था।

देवेन्द्र०। किस वक्त यह घटना घटी?

शिबू०। रात को; तीन बजा होगा।

देवेन्द्र०। हे परमेश्वर! मैं दो घण्टा और पहले आता तो यहीं सबको पकड़ लेता। अच्छा तुमने तो उनको देखा होगा वह थे कितने?

शिबू। चार आदमी थे।

देवे०। सब मरद ही मरद थे ?

शिब०। नहीं एक स्त्री भी थी।

देवे०। अच्छा उस स्त्री का चेहरा कैसा था सो तुम मुझे बता सकते हो ?

शिबू०। मैं उसका चेहरा देख नहीं सका, बड़े लम्बे घूंघट में अपना मुंह ढांके हुई थी।

देवे०। अच्छा उन तीन मर्दों में से किसी को पहचानते हो ? इस वक्त उनको पाओ तो हमें पहचनवा सकते हो ?

शिबू०। उन तीनों ने भी अपना मुंह कपड़े से बहुत सा ढाँक रक्खा था।

देवे०। वह तीनों लम्बे थे या नाटे ?

शिबू०। एक उन में बड़ा लम्बा था और एक मझोले कद का।

देवे०। उनके गले की आवाज तो तुमने सुनी होगी। कोई जान पहचानवाले से मालूम देते थे ?

शिबू०। नहीं उन सभों ने मुंह से एक बात भी नहीं निकाली। स्त्री ने ही बात की थी। सो भी केवल एक बार हमको देखते ही उसने उन तीनों को दबी आवाज से कहा। "जल्दी इसकी छाती में छूरी भोंक दो। देर का काम क्या है अभी खतम कर दो।"

देवे०। तो मालूम होता है वही स्त्री इस कुचक्र की जड़ है ! क्या ?

शिबू०। हां जरूर ! मैं भी यही समझता हूं।

देवे०। तुमको बांधने पर उन सभों ने क्या किया? तुमने और क्या देखा?

शिबू०। इसके बाद वह स्त्री मेरे मुँह के पास आकर झुकी, मैंने समझा कि पहले उनको मेरी छाती में छुरी भोंकने का हुक्म देकर अब आपही उस काम को करने आई है। लेकिन सो नहीं करके उसने हमारे कान के पास मुँह ला के कहा, "जब तेरा मालिक आवे तब उसे कहियो कि हम लोगों की शिकार की यह पहली चोट है! दूसरी चाट उनकी जान पर बीतेगी। मैंने प्रतिज्ञा की है कि चाहे जैसे बने देवेन्द्र की जान अपने हाथ से लूंगी?"

देवेन्द्रविजय ने आप ही आप कहा—"यह तो हम चाहते ही हैं कि वह आकर हमसे अपना बल जाहिर करें।"

फिर शिबू से पूछा—"अच्छा उनका मैं पता लगा सकूँ ऐसा कोई निशान तुमने उनमें देखा है?"

शिबू०। नहीं कुछ भी नहीं देखा।

देवे०। अच्छा तो इस वक्त हमारे साथ चल सकते हो? अगर चलोगे तो हमारे काम में कुछ सुभीता होगा।

शिबू०। क्यों नहीं चल सकते हैं। कहिये कहां चलना है?

देवे०। अच्छा और कहीं नहीं तुम इस वक्त खिदिरपुर को जाव वहां गंगा के किनारे एक बहुत बड़ा तिनमहला मकान है। वहां पर वही सब से बड़ा है उसके चारों ओर फुलवाड़ी और कल का बागीचा लगा है। बागीचा भी चहार दीवारी से घिरा है पिछवाड़े की खिड़की से होकर करीमबक्स से वहां जाकर तुम मिलो।

शिबू० । बहुत अच्छा ?

देवे० । वह करीम कौन है जानते हो ? हमारा भाञ्जा यही शचीन्द्र वहां करीम बना है ।

शिबू० । बहुत अच्छा यह तो मैं समझता हूं । आपका नौकर होकर इतना भी नहीं समझूंगा ?

देवे० । उससे मिलकर बड़ी खबरदारी से पूछना कि कल रात को आनन्दकुटीर में कौन कौन आदमी नहीं थे । और कौन कौन आदमी नये आये हैं ? उनपर खबरदारी से निगाह रक्खो । जाव चले जाव, अभी जाव, देर मत करो उससे मिलकर जो तुमको हाल मिले सो हमी से आकर कहना । जब हम तुमसे मिलेगे तब बताना और किसी को इन बातों का कुछ भेद नहीं देना ।

शिबू । अच्छा मैं अभी जाता हूं एक बात पूँछूँ ? क्या माँ के ऊपर कुछ ज़ुलम किया गया है ?

देवे० । सो तो शिबू हमको कुछ मालूम नहीं है । लेकिन बड़ी आफत आई है । मनोरमा के साथ उसको भी सब चाण्डाल लेते गये हैं । जबतक मैं उसका पता न लगा लूं जबतक उनको उन चाण्डालों के चंगुल से न बचा लूं तबतक भगवान् जाने उन पर क्या आफत आवे । उनको न जाने क्या २ दुःख भोगना पड़ेगा, जाव शिबू तुम देर मत करो ।

तीसरा बयान

नन्हकूसिंह

शिवू के चले जाने पर देवेन्द्रविजय पिछवाड़े की ओर गये उधर कुछ जमीन खाली पड़ी रहने से दीवार से घिरी थी। दीवार की चोटी पर धारदार काँच के टुकड़े लगे थे। वहां जाकर देखा तो दीवार पर एक कम्बल लटक रहा है। उसको देवेन्द्र ने दीवार पर से उतार कर देखा तो सात आठ परत करके लटकाया गया था। जासूस ने चट समझ लिया कि पहले इसी की मदद से एक ने ऊपर चढ़ कर भीतर प्रवेश किया है और बाहर का दरवाज़ा खोल कर तब सब के सब भीतर घुसे होंगे। कम्बल कई परत का कर देने से चढ़ने वाले के पांव में काँच नहीं गड़ा है। देवेन्द्र ने मन में विचारा कि "इन सब अनर्थों की जड़ वही स्त्री है और शेष तीन पुरुष उसके जरूरी हथियार हैं। मेरा इस रात को घर में न होना उन सभों को पहले मालूम हो गया है तभी उन्होंने ऐसा किया है नहीं तो उनका इतना मकदूर नहीं होता।

जबतक उन तीनों डाकुओं और चौथी स्त्री का ठीक पता न लग जाय तबतक उनके पीछे दौड़ना ठीक नहीं" यह देवेन्द्र बाबू ने समझ लिया। निशान में वही लोहू लगी अंगोछी और दीवार पर का लटकता कम्बल मिला जिसके भरोसे कुछ काम नहीं चल सकता, रही शिवू की जबानी जो कुछ मालूम हुआ उससे भी देवेन्द्र बाबू को कुछ सुभीता नहीं हो सका।

बहुत कुछ सोच विचार के बाद देवेन्द्रविजय पास के थाने में पहुंचे और उसके प्रधान कर्मचारी को बुला कर पूछा "हमारे महल्ले में कल रात तीन बजे के अमल में कौन पहरे पर था ?"

जिससे जासूस ने यह सवाल किया उसका नाम था राम-कृष्ण मुखोपाध्याय। उमर उसकी चालीस से टप गई होगी। वह देवेन्द्रविजय को अच्छी तरह पहचानते थे। मुखोपाध्याय जी ने झट पहरेवाले को हाजिर कर दिया, उसका नाम था ननकूसिंह।

ननकूसिंह को बाहर ले जाकर जासूस ने पूछा—"कल रात को तीन बजे तुम कहां थे ?"

ननकूसिंह ने कहा—"आपके मकान से दक्षिणी सीमा पर मैं पहरा दे रहा था।"

डाकू जरूर अपने साथ गाड़ी लाये रहे होंगे इसी ख़याल से जासूस ने कहा—"अच्छा हमारे दरवाजे के सामने जो गाड़ी खड़ी थी उसके बारे में तुम कुछ जानते हो ?"

ननकू०। कुछ जानते तो नहीं; लेकिन गाड़ी खड़ी देखी थी।

देवे०। जब गाड़ी खड़ी तुमने देखी थी तब कितनी रात गई होगी ?

ननकू०। तीन बजा रहा होगा।

देवे०। वह गाड़ी कबतक हमारे दरवाजे के सामने खड़ी थी ?

ननकू०। यह तो मैं नहीं कह सकता क्योंकि गाड़ी खड़ी ही थी कि मेरा पहरा बदल गया मैं थाने में लौट आया।

देवे०। गाड़ी से जो आदमी उतरा उसको तुमने देखा था ?

ननकू०। हां देखा था, गाड़ी में से तो एक औरत उतरी थी।

देवे०। वह कैसी थी ?

ननकू०। उसका मुंह तो नहीं नज़र आया क्योंकि बड़ा लम्बा घूंघट काढ़े थी।

देवे०। वह क्या गाड़ी से उतरते ही हमारे घर में चली गई ? उसके साथ कोई और आदमी था ?

ननकू०। नहीं।

देवे०। अच्छा गाड़ी कैसी थी, किराये की थी या घर की ?

ननकू०। गाड़ी तो बड़ी आब ताब की थी। चमक दमक देखने से किराये की नहीं मालूम होती थी। किसी बड़े आदमी के घर की गाड़ी थी।

देवे०। जब गाड़ा हमारे दरवाजे पर थी तब तुम्हारे मन में क्या खयाल हुआ था ?

ननकू०। मैंने तो बाबू जी समझा था कि इतनी रात को कोई आपका बड़ा भारी धनी मवक्कल आया है।

देवे०। बड़ा भारी मवक्कल तो था लेकिन अफसोस यह रहा कि कल रात भर मैं मकान में नहीं था और वह भी अपना नाम धाम नहीं कह गया।

अफसोस जाहिर करके ननकूसिंह ने कहा, "ओहो! बाबू जी, बड़ी चिड़िया हाथ से छूट गई। वह तो कोई रानी मालूम होती थी।"

देवे०। क्या कहा! रानी ?

ननकू०। रानी क्या ऐसी तैसी ? सारा बदन ढँका था और

पहनाव पोशाक देख के तो बाबू जी मैं अवाक हो गया! मैंने अपनी चोरधरनी लालटैन को उसकी ओर जो फेरा तो उसके हीरे मोती के गहने ऐसे चमके कि आंखें चौंधिया गयीं।

देवे०। उस गाड़ी पर एक कोचवान और दो सईस थे?

ननकू०। नहीं दो कोचवान और एक सईस था। दोनों कोचवान आगे बैठे थे और सईस पीछे था। जब गाड़ी आपके दरवाजे पर पहुंची तब तुरत सईस उतरा और दरवाजा खोलकर बगल में खड़ा हो गया। तब झट गाड़ी में से वह रानी उतर कर आपके मकान में चली गई।

देवे०। उस गाड़ी के घोड़े कैसे और कौन रंग के थे?

ननकू०। एक कुमैत था और दूसरा काला था।

देवे०। गाड़ी किधर से आई थी?

ननकू०। पूरब ओर के रास्ते से।

देवे०। और गई किधर?

ननकू०। जाने का हाल हमको नहीं मालूम है क्योंकि गाड़ी आपके दरवाजे ही पर खड़ी थी कि हम पहरा बदल कर थाने को चले गये।

देवे०। तुमने अपने बदलीवाले से गाड़ी के बारे में पहरा बदलती बेर कुछ कहा था? तुम्हारी बदली पर कौन पहरेवाला आया था?

ननकू०। हमने पहरा रघुबीर पांड़े से बदला था। वह भी थाने को लौट आया है।

देवेन्द्र०। अच्छा तो उसी से सब हाल मिलेगा।

ननकू०। बाबू जी क्या कुछ खराबी हुई है?

देवेन्द्र०। नहीं खराबी कुछ नहीं हुई।

बारहवां बयान

रघुबीर पांडे

ननकूसिंह को बिदा करके देवेन्द्रविजय ने रघुबीर पांड़े को बुलाया। रघुबीर पांड़े के आ पहुंचने पर जासूस ने पूछा, "जब आधीरात के बाद ननकूसिंह ने पहरा बदलाया तब मेरे दरवाजे के सामने कोई गाड़ी खड़ी थी?"

रघुबीर पांड़े ने जवाब में कहा—"हां बाबूजी! एक गाड़ी तो खड़ी थी। मैं उसी के बगल से होकर गया और आपके मकान के पास वाले मोड़ पर खड़ा हुआ था।"

देवेन्द्र०। उसपर दो गाड़ीवान थे?

रघुबीर०। नहीं, गाड़ीवान तो कोई नहीं था। एक छौंड़ा दोनों घोड़ों की रास पकड़े था।

देवेन्द्र०। उससे तुमने कुछ पूछा था?

रघुबीर०। हां कोचवान कहां गया यही पूछा था। छौंड़े ने कहा कि इसी घर में गये हैं। तब मैं वहां से चला गया और एक चक्कर लगा कर फिर आपके मकान के पास लौट आके खड़ा हुआ था।

देवेन्द्र०। लौट आने पर तुमने और कुछ देखा?

रघुबीर०। और क्या देखता! मेरे लौटने पर गाड़ी भी पूरब के रास्ते से होकर चली गई।

देवेन्द्र०। तब तुमने दो कोचवान और एक साईस को गाड़ी पर देखा था?

रघुबीर०। कहां? सईस तो कोई नहीं था, कोंचवान अलबत्तः दो थे।

देवेन्द्र०। अच्छा जो लड़का लगाम पकड़े था उसको तुम पहचानते हो? उसको हमैं दिखा दे सकते हो?

रघुबीर०। उसको तो आप जब कहें तभी हाजिर कर सकते हैं।

देवेन्द्र०। मैंने सुना है कि तुम अभी थाने को लौटे हो। अब कहो सोवोगे या दो रुपया चाहते हो? अगर दो रुपया चाहो तो अभी हमारे साथ चलो और उस लौंडे को दिखा दो।

"अच्छा चलिये" कहकर पाण्डे जी जासूस के साथ थाने से बाहर हुए। रास्ते में जासूस ने रघुबीर पाण्डे को दो रुपया दे दिया।

तेरहवां बयान

श्रीशचन्द्रराय

जो बालक रात को घोड़े की लगाम पकड़े खड़ा था पांड़ेजी ने आधे घंटे में उसको जासूस के आगे ला दिखाया। वह लड़का दोनों आंखें मलता जासूस के सामने आया। देवेन्द्र ने पूछा "तुम्हारा नाम क्या है?"

लड़का बोला, "मेरा नाम श्रीशचन्द्रराय है।"

देवेन्द्र०। इस वक्त तुम सोते थे क्या?

श्रीश०। हां बाबू आपने ठीक पहचाना, कल मैं बड़ी रात को सोया था, इसीसे अब तक नींद में था, आप लोगों ने हमको कच्ची नींद से जगाया है।

"अच्छा इससे तुम्हारी नींद छूटेगी या नहीं?" कह कर देवेन्द्र ने पांच रुपये का एक नोट श्रीशचन्द्रराय के हाथ में दिया।

श्रीशचन्द्र ने हाथ में नोट लेकर उत्साह से कहा, "खूब! नींद तो अब ऐसी भागेगी कि तीन रात तक पास नहीं आवेगी!!"

देवेन्द्र०। अच्छा हम जो जो पूछें सो बताते तो चलो। कल त को तुम एक गाड़ी के घोड़ों की लगाम पकड़े खड़े थे?

श्री०। हां खड़ा तो था।

देवेन्द्र०। तुम कितनी देर तक घोड़े की लगाम पकड़े थे?

श्री०। आध घण्टे तक।

देवेन्द्र०। कौन तुमको घोड़े की लगाम पकड़ने के वास्ते बोला था? उस वक्त रात कितनी गई थी?

श्री० । उसी गाड़ी का गाड़ीवान बोला था। रात को तीन बज गया था।

देवेन्द्र० । उतनी रात को तुम कहां से आते थे ?

श्री०।मामाके घर गया था, लौटते वक्त रात बहुत चली गई थी।

देवेन्द्र० । तुम्हें ठीक याद है कि उस वक्त तीन बजा था ?

श्री० । हां ! ठीक याद है, तीनही बजा था।

देवेन्द्र० । जब तुम उनकी लगाम पकड़ के खड़े हुए तब वह सब कहां गये ?

श्री० । जिस दरवाजे के सामने गाड़ी खड़ीथी उसी घर में वह सब घुस गये।

देवेन्द्र० । वह जो पोशाक पहने थे उसको बदल करभीतर गये या उसी पोशाक में ?

श्री० । नहीं उसी पोशाक में गये।

देवेन्द्र० । उनमें से किसी के हाथ में कपड़े की गठरी थी ?

श्री० । हां एक के हाथ में गठरी की तरह तो कुछ था।

देवेन्द्र० । जब वह सब घरमें से लौटे तब अपने साथ क्या क्या लाये थे ?

श्री० । उनके बाहर आने से पहले ही एक ने आकर हमको बिदा कर दिया।

देवेन्द्र० । फिर तुम उसके कहने से चुपचाप घर चले गये ?

श्रीशचन्द्र इसका कुछ जवाब न देकर देवेन्द्र की ओर चुपचाप देखता रहा। देवेन्द्र ने मुसकुरा कर कहा, "मालूम

हुआ तुम घर नहीं कुछ दूर जाकर खड़े खड़े सब देखते रहे, क्यों ? फिर उन सभों ने क्या किया ?"

श्री० । फिर बारी बारी से सब बाहर चले आये ।

देवेन्द्र० । बाहर आती बेर कुछ साथ में लाये थे ?

श्री० । हां ।

देवेन्द्र० । क्या क्या लाये थे ?

श्री० । पहले एक स्त्री लाये थे फिर दोबारा जाकर दूसरी स्त्री को लाये ।

देवे० । जब दोनों स्त्रियां बाहर लाई गयीं तब वे चिल्लाती नहीं थीं ?

श्री० । नहीं साहब चिल्लायेंगी क्या, वह तो मुरदे की तरह लदी आयी थीं । मैं तो समझता हूं वह दोनों मुरदा थीं ।

देवेन्द्र० । मुरदा कौन कहता है ! कैसे जाना कि मुरदा थीं ?

श्री० । कहता कोई नहीं देखने से ही मुरदा मालूम होती थीं । बड़ा डरावना मौका था । उतनी रात को दो दो मुरदे देख के मेरा तो जी सूख गया, मैं तो वहाँ ठहर नहीं सका ।

देवेन्द्र० । तो क्या भाग गये ?

श्री० । भाग न जाँय तो क्या करें ।

देवेन्द्र० । श्रीश ! अगर तुम उस वक्त उस गाड़ी के पीछे पीछे चले जाते और वह गाड़ी कहां गई इसका पता लगाते तो आज तुम्हारा नसीब फिर जाता । अच्छा अब तो वह मौका चला गया । बीती सो बीत गई, अच्छा तुम अच्छा अच्छा कपड़ा ओढ़ना और दस रुपया लेना चाहते हो ?

श्री० । मैं तो आपकी बातें सुन के जानता हूं कि सपना देख रहा हूं। आप खुलासा कहिये, आपकी बातें सुन कर तो मैं डर रहा हूं।

देवेन्द्र० । खुलासा यह कि तुम दो चार दिन के वास्ते हमारे साथ नौकर की तरह पर रहो जब जो हम कहेंगे तब उसे करना होगा।

श्री० । आज से ?

देवेन्द्र० । आज नहीं अभी से।

श्री० । बहुत अच्छा, जब आप बुलावेंगे तभी मैं हाजिर हूंगा।

देवेन्द्र० । हाजिर की बात नहीं अभी तुमको हमारे साथ चलना होगा।

श्री० । कहां ?

देवेन्द्र० । कई जगह चलना है।

श्री० । बाबू जी ! मुझे डर लगता है कि कहीं ऐसे खन्दक में न पड़ जांय कि इसी उमर में जान गँवाना पड़े।

देवेन्द्र० । नहीं नहीं ! डर की कोई बात नहीं है। अच्छा तुम उस पहरेवाले को पहचानते हो ?

कह कर जासूस ने पास के खड़े पहरेवाले को बताया। श्रीशचन्द्र ने कहा, "हां इनको तो हम पहचानते हैं, इनका नाम रघू-पाण्डे है।"

देवेन्द्र० । अच्छा तो पहले तुम उससे पूछ लो तब हमारी बातों पर विश्वास करना।

श्री० । नहीं बाबूजी ! आपका क्या मैं अविश्वास करता हूं आप बड़े आदमी हैं, आपको क्या......

बात काट कर जासूस ने कहा, "अच्छा तो हमारे साथ तुम चलने को तैयार हो?"

श्री०। हां अभी तैयार हैं।"

देवेन्द्र०। तो चलो।



चौदहवां बयान

वकील का मोहर्रिर

श्रीशचन्द्र को साथ लेकर देवेन्द्रविजय अपने मकान को लौटे। खुद भी बेष बदल लिया और श्रीशचन्द्र को भी दूसरे रूप में सजाया। इसके बाद श्रीशचन्द्र को जो कुछ बतामा समझाना था सो बता समझा दिया।

रविवार था। सन्ध्या के बाद देवेन्द्रविजय श्रीशचन्द्र को साथ लिये अन्धे बूढ़े के वेष में घर के बाहर हुए। सिर के बाल बिलकुल सफेद, मोंछ दाढ़ी और भौहों में एक भी काला बाल नहीं था, कपड़े बहुत सुफेद साफ, हाथ में दो हीरे की अंगूठी थी। श्रीशचन्द्र बूढ़े बेषधारी अंधे देवेन्द्र का हाथ पकड़ कर आगे चला। बूढ़े के साथी ने श्रीशचन्द्र का नाम फटिकचन्द रक्खा, उसका भी पहनावा पोशाक बड़े आब ताब का था।

इस बेष और इसी भाव में फटिकचन्द्र को साथ लिये देवेन्द्रविजय जासूस एक बड़े से दोमंजिले मकान में पहुंचे। उस मकान में कम से कम दो सौ आदमियों का निवास था। उनमें थोड़े वेतन के किरानी और स्कूलों के लड़के अधिक थे। कुछ डाक्टर और कई वकील मुख्तारों का भी उसी में डेरा था। वह मकान चार खण्ड का था। चारों खण्ड के लिये एक एक आंगन था। वैसा बड़ा मकान बहुत नहीं देखने में आता। उसको एक छोटा गांव कहना चाहिये। उसी के अन्दर एक ब्राह्मण का हिन्दू होटल था। उस घर के लगभग सभी आदमी उस होटल में खाते थे।

होटल की मालकिन एक ब्राह्मणी थी। वह भोजनबनाने में बड़ी निपुण थी। उसके बनाये भोजन की सभी बड़ाई करते थे। खास कर हमारे वकील बाबू तुलसीदास बसू उसके हाथ की बनाई चीजों को बड़े आनन्द और आदर से खाते हैं। उसके हाथ के बनाये भोजन से उनको इतना अनुराग था कि घर की बनाई रोटी बहुत कम उनके मुंह में पड़ती थी।

इस घर में वकील साहब ने तीन कोठरी अपने लिये किराये पर ले रक्खी है। एक ऊपर के महल में है, वकील साहब उसमें खुद बैठते हैं, उसी घर में उनसे मवक्कलों से मामिले मुकद्दमे की बातें होती हैं, और दो कोठरियां नीचे हैं, एक तीसरे खण्ड में और एक चौथे खण्ड में। जो घर तीसरे खण्ड में है उसमें वकील साहब का मुहर्रिर बैठता है, लिखने पढ़ने का सब काम उसी में होता है। चौथे खण्ड की कोठरी वकील साहब का आराम घर (विश्रामागार) है, आराम घर आरामही करने के लिये नहीं किन्तु उनको गुप्त मवक्कलों से मुलाकात और भेद की बातें या गुप्त सलाह आदि सब उसी में होती है। उसी में वकील साहब अपने गुप्त मवक्कलों को गुप्त सलाह और कूट मंत्र आदि देते थे।

अपनी कोठरी में बैठ कर तुलसी बाबू का मुहर्रिर एकाग्र चित्त होकर एक दस्तावेज़ की नकल कर रहा है। सामने एक लड़के का हाथ पकड़े अन्धा और बज़ू बूढ़ा आ पहुंचा। आतेही बूढ़े से बालक ने कहा, "वकील साहब के मुहर्रिर यही हैं!"

बूढ़े ने मुहर्रिर से कहा, "मुहर्रिर साहब! आप वकील

बाबू से जाकर इत्तला कर दीजिये कि किस्तानपाड़ा से रामगोपाल बाबू आया है, बहुत जरूरी काम है, मुलाकात करना चाहता है।"

मुहर्रिर ने सिर उठा कर कहा, "वकील साहब काम में हैं। इस वक्त उनको मुलाकात करने की फुरसत नहीं है।"

बूढा०। काम में होंगे लेकिन आप उनसे बोलिये हमको जरूरी काम है पांच मिनिट के वास्ते हमसे मिल लें। पांच मिनट से उनके काम में हरज नहीं होगा। हम बहुत देर नहीं करेंगे।

तब वकील का मुहर्रिर तुलसीदास बाबू को इत्तला करने चला। जिसमें वह बैठता था उसके दो दरवाजे थे एक तीसरे खण्ड के आंगन की ओर, दूसरा चौथे खण्ड के आंगन की ओर। चौथे खण्ड के दरवाजे से होकर मुहर्रिर साहब वकील से इत्तला करने गये। उसी दरवाजे के सामने चौथे खण्ड का वह वकील साहब वाला विश्रामागार था। ज्योंही मुहर्रिर ने जाने के लिये चौथे खण्ड की ओर वाला अपना दरवाजा खोला और बाहर बन्द किया त्योंहीं बालक वेषधारी श्रीशचन्द्र और बूढ़े बने देवेन्द्र की तेज नजर वकील के विश्रामागार पर पड़ी और इतने ही थोड़े समय में उन्होंने भीतर का सब हाल देख लिया। श्रीशचन्द्र जहां खड़ा था वहां से केवल वकीलसाहब को देख सकता था। जहां देवेन्द्र-विजय खड़े थे वहां से वकीलसाहब नहीं नजर आते थे। लेकिन देवेन्द्रविजय ने एक ऐसे आदमी को देखा जिसको पहले नहीं देखा था। शचीन्द्र के बताये अनुसार देवेन्द्र बाबू को उस अनजान आदमी का चेहरा नवीन डाक्टर सा मालूम हुआ।

पन्द्रहवां बयान

मुहर्रिर बन्द

श्रीशचन्द्र ने देवेन्द्रविजय के कान में धीरे धीरे कहा, "मैंने एक आदमी को देखा है।"

देवेन्द्र०। ठीक पहचाना है ?

श्री०। हां ठीक पहचानता हूं। ऐसा नहीं है कि पहचानना हमारा खाली जाय ! यह जरूर उन दोनों गाड़ीवानों में से एक है। जब गाड़ीवान बना था तब दूसरे का बाल और दाढ़ी लगा के गया था। लेकिन नाक के पास जो सुपारी के बराबर काला मसा है उसको बच्चा जी कहां मिटा सकते थे। वह तब भी था अब भी मौजूद है।

देवेन्द्रविजय जासूस ने कहा, "अब मैंने भी पहचान लिया, ज्यादा कहना नहीं पड़ेगा।"

इतने में जल्दी से वकील साहब का मुहर्रिर पहुंचा और बूढ़े से बोला, "आप थोड़ी देर ठहरिये, वह अभी आकर आपसे मिलते हैं।"

इतना कह कर मुहर्रिर पहले की तरह नकल करने लगा। उसकी नज़र बचा कर देवेन्द्रबिजय चुपचाप जाकर उसके पास खड़े हुए और बहुत करीब जाकर बोले, "क्यों यार देखते हो हमारे हाथ में क्या है !"

तब मुहर्रिर साहब ने सिर उठाकर देखा तो मालूम हुआ कि

उनकी नाक से थोड़े ही इञ्च के अन्तर पर जासूस पिस्तौल का निशाना लगाये हुए है। डर के मारे मुहर्रिर साहब का बदन सूख गया। चीरो तो देह में लोहू नहीं।

कांपते कांपते मुहर्रिर ने लगती जबान से कहा, "अरेरेरे! यह क्या? यह क्या साहब?"

देवेन्द्रबिजय ने कड़क कर कहा, "बस, बस! चुप! अगर अपनी जान सलामत चाहते हो तो चुपचाप रहो और हम जो कहते हैं सो करो। मुंह से कोई बात मत निकालो। मैं और कुछ नहीं कहता बस यही चाहता हूं कि तुम हमको अपने वकील साहब के गुप्त घर में अभी चले जाने दो।"

मुह०। तो आप क्यों जाते हैं वह तो खुद आ रहे हैं साहब!

देवे०। बस और बात करने का काम नहीं है। मैं उनको तकलीफ देकर यहां बुलाना नहीं चाहता। चुपचाप मेरी बात मान लो। मेरे काम में कुछ भी रुकावट मत करो।

मुहर्रिर सकपका कर चुप रहा। देवेन्द्र श्रीशचन्द्र के साथ बाहर आये और श्रीशचन्द्र ने जासूस के हुक्म से मुहर्रिरवाली कोठरी के दोनों दरवाजों की सांकल बाहर से बन्द कर दी।

सोलहवां बयान

स्त्री का साहस

इसके बाद देवेन्द्र बालक श्रीशचन्द्र के साथ वकील के उस गुप्त घर के द्वार पर खड़ा हुआ। कई मिनट वहीं खड़े खड़े बीत गये। भीतर की कानाफूसी देवेन्द्र के कानों तक पहुंची लेकिन साफ नहीं जान सके कि क्या बात हो रही है। तब हाथ में पिस्तौल लिये हुए देवेन्द्रविजय ने धड़ाम से किवाड़ खोलकर भीतर प्रवेश किया। पीछे पीछे श्रीशचन्द्र भी वहीं जा खड़ा हुआ।

वहां तीन आदमी थे। देवेन्द्रविजय को देखतेही तीनों आसन छोड़ कर खड़े हो गये। उन तीनों का नाम पाठकों को जानना चाहिये। वकील तुलसीदास बोस, कविराज गोविन्दप्रसाद सेन और डाक्टर नवीनचन्द्र।

गरज कर वकीलसाहब बोले, "यह क्या? तुम क्या करता है? तुम कौन है? क्यों भीतर चला आया? तुमने किस हिम्मत पर ऐसा काम किया? दूर हो लुच्चा! चला जा घर में से, अभी निकल जा! इस तरह बेहुकम चले आने का क्या मतलब है?"

लाल लाल आंखों से वकील को घूर कर देवेन्द्रबाबू ने कहा, "मतलब इसका यह कि मैं पुलिस का आदमी हूं। तुम लोग हमारे असामी हो, हमने तुम लोगों को गिरफ्तार किया। जो जहाँ है वहीं जैसे का तैसा बैठा रहे, जो अपनी जगह से हटेगा वही गोली खाकर जमीन में गिरेगा।"

इतना कह कर अपना बनावटी भेष जासूस ने अलग कर दिया।

"अरे यह बड़ा जुल्म है ! तुम कौन हो ?" इतना तुलसीदास बड़ी मिन्नत से बोले, लेकिन एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सके।

देवे०। तुम जानते हो मैं कौन हूं।

तुल०। कौन हो तुम ? किसका इतना कलेजा हुआ जो तुलसीदास का अपमान करना चाहता है ?

देवे०। देवेन्द्रविजय का।

जासूस की गर्वोक्ति से उनके मुंह पर विषाद की छाया लग गई। उपहास की हँसी हँस कर खल मिष्टभाषी नवीन डाक्टर बोला, "ओहो बड़ी बात हुई जो आज आपका दर्शन मिला। नाम तो बहुत दिनों से सुनता आता था लेकिन दर्शन से आजही कृतार्थ हुआ। आप ऐसे चतुर और योग्य जासूस का यह काम उचित नहीं हुआ।"

देवे०। उचित होने बिना देवेन्द्र इस काम में हाथ नहीं डाल सकता। रात को बात याद करनेही से उचित अनुचित सब बूझ पड़ेगा।

अन्तस्मित होने का भाव दिखा कर नवीनचन्द्र डाक्टर बोला, " रात की बात कौन सी ! मैंने आपका कहना नहीं समझा ?"

देवे०। अभी नहीं थोड़ी देर बाद समझियेगा।

न०डा०। आप खुलासा बतलाइये आप का मतलब क्या है ?

देवे०। मतलब हमारा बड़ा बीहड़ है। (श्रीशचन्द्र से) श्रीशचन्द्र ! इधर आके भीतर खड़े हो।

श्रीशचन्द्र जासूस के हुक्म से सामने आया, देवेन्द्रविजय ने कहा, "इन तीनों आदमियों में से किसको किसको तुम पहचानते हो बोलो।"

श्री०। यही दोनों आदमी जो पास पास बैठे हैं।

देवे०। जिससे मैं बात कर रहा था वह नहीं?

श्री०। नहीं।

ननकू०। हमलोगों पर आप क्या चार्ज लगाते हैं?

देवे०। चोरी करना, हर लेना।

ननकू०। ओह! दोष तो आपने भारी लगाया है, लेकिन वारण्ट लाये हैं?

देवे०। नहीं वारण्ट की जरूरत नहीं है।

ननकू०। तो ऐसा जबानी काम कैसे होगा, वारण्ट लाना चाहिये।

देवे०। बड़े घर में चल के वारण्ट देखो। अगर लोहे का कंकन पहनने या बेकिराये के घर में रहने को जी न चाहे तो उन दोनों स्त्रियों को छोड़ दो जिनको रात हर ले गये हो। नहीं तो याद रक्खो देवेन्द्र के हाथ से नहीं बचोगे।

तुल०। हमलोग इस मामिले में कुछ नहीं जानते।

देवे०। झूठ क्यों बकते हो?

ननकू०। झूठ हमलोग कहते हैं या आप, सो समझना चाहिये। सचमुच हमलोगों को यह हाल कुछ भी मालूम नहीं है।

फिर पिस्तौल सँभाल कर देवेन्द्रविजय ने गरज कर कहा—

"जानते नहीं ? मैं खूब जानता हूं तुम्हीं लोग रात हमारे घर में घुसे थे। तुम में से दो कोचवान बने थे और एक सईस। तुम लोग एक गाड़ी में एक स्त्री को सवार करा के ले गये थे। उसको भी मैं जानता हूं। वही इस वक्त आनन्दकुटीर की मनोरमा है। मैंने अब खूब समझ लिया है कि तुम लोगों ने उसी की सलाह से यह काम किया है। तुम लोगों ने बड़ी बहादुरी की है। मेरी स्त्री और असल मनोरमा को क्लोरोफार्म से बेहोश करके लाये हो। ऊपर से हमारे नौकर शिबू को भी हाथ पांव जकड़ कर उसके मुँह में इस तरह कपड़ा ठूस दिया था कि वह कुछ भी बोल नहीं सका और न कहीं हिलजुल सका। लेकिन तुम लोगों को यह भी याद रखना चाहिये कि ये सब चालाकियां देवेन्द्र से नहीं चलेंगी। अबतक किसी की ऐसी चालाकी नहीं चली है और न आगे चलने का भरोसा है। हमको डराने के लिये तुम लोग शिबू के जरिये जो धमकी दे आये हो वह भी मैंने सुन लिया है। तुम लोगों की यह प्रतिज्ञा बिलकुल बेजड़ पैर की है। इस वक्त भी मैं तुमलोगों के सामनेही खड़ा हूं। अगर तुमको ताकत और हिम्मत हो तो अजमा देखो, इसके वास्ते मैं सदा सर्वत्र सब तरह से तैयार हूं, अपना वादा पूरा करो, तुम्हारा वैरी तुम्हारे सामने खड़ा है। फिर, ऐसा मौका हाथ से जाने देना तो बिलकुल डरपोक का काम है। और वह तुम्हारे ऊपर हुक्म करने वाली कृपाणकरा रमणी कहां है जो मेरे नौकर शिबू की छाती में छुरा भोंकने गई थी ? उसकी भी हमें बहुत जरूरत है।

"जरूरत है तो मैं भी यही हूं, कुछ परवाह नहीं।" कह कर पास की भीतरी कोठरी का दरवाजा खोलती हुई घूँघट लटकाये एक स्त्री निकली जिसने झट से देवेन्द्र की पीठ में किरिच भोंक दिया। उस स्त्री का पहनाव पोशाक मारवाड़ी स्त्रियों की तरह था। किरिच की चोट खाते ही देवेन्द्रविजय को चक्कर आगया। वह चोट बड़ी यन्त्रणाप्रद और सांघातिक थी। उनकी रगों का खून रुकने लगा। बैरियों के बीच वह बिलकुल निःसहाय हो पड़े।

जब चोट खाकर पीछे को मुंह फेरते हैं कि इतने में तुलसीदास ने ब्राण्डी का खाली बोतल उठा कर देवेन्द्र के सिर पर मारा। उस खाली बोतल का निशाना भी खाली नहीं गया, उसी समय देवेन्द्रविजय बेहोश होकर धरती पर गिर गये।

इसके बाद सब श्रीशचन्द्र की ओर दौड़े। वह चतुर बालक जी छोड़ कर भागा। जब घर से बाहर होकर रास्ते पर पहुंचा तब जोर से चिल्लाने लगा—"अरे दौड़ो, दौड़ो रे! दौड़ो! दौड़ो! खून! खून! खून!!"

उस घूंघटवाली ने नवीनचन्द्र डाक्टर से कहा, "यह देखो कि अभी यह मरा है कि नहीं?"

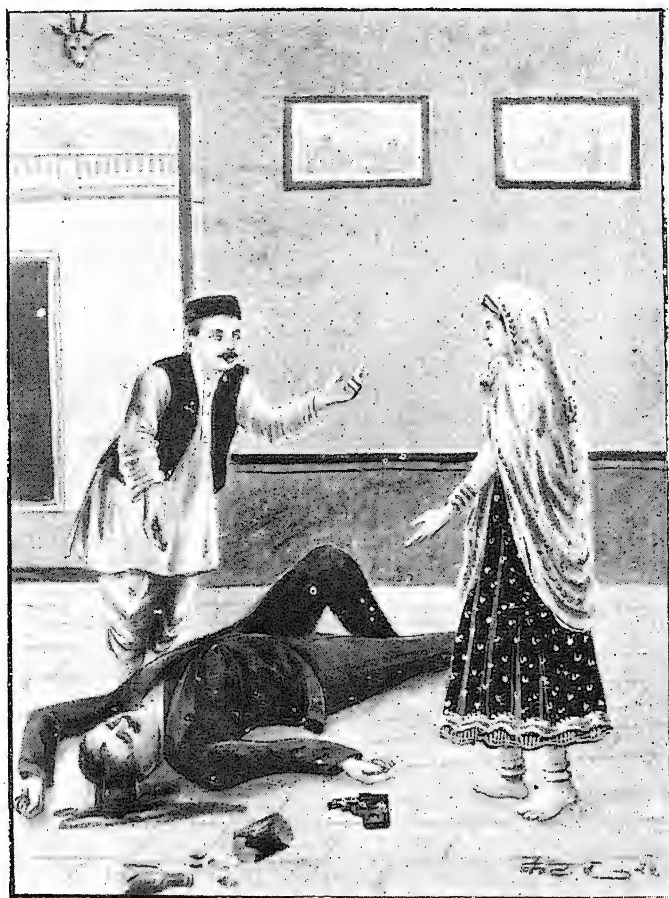
"तुम्ही देखो! मुझे तो मालूम होता है कि मर गया है। मैं जरूरी काम से दूसरी जगह जाता हूं, तुम देख लो!" इतना कह कर नवीनचन्द्र डाक्टर रङ्गभूमि छोड़ कर भागे। उस भयङ्कर स्थान में घूंघटवाली को अकेले छोड़ कर तुलसीदास और गोविन्द-प्रसाद भी नवीनचन्द्र डाक्टर के पीछे चलते हुए।

कड़क कर स्त्री बोली, "डरपोक, कादर कहीं के ! ! !"

फिर देवेन्द्रविजय का शरीर देख भाल कर कहने लगी, "नहीं, नहीं ! अभी मरा नहीं है । अब मारना चाहिये, इसको मार डालना मेरा काम है और यह मौका भी अच्छा है, ऐसा अवसर फिर नहीं मिलता । बच्चा जमपुर के आधे रास्ते पर पहुंचे हैं, आधा बाकी है वह भी अब पूरा हुआ जाता है । इसके मर जाने पर संसार में फिर कोई नहीं रहेगा जिससे मैं डरूंगी । इसके हाथ से छूट जाने पर मैं इन वकील डाक्टर और कविराजों के हाथ से सहज ही छूट जाउंगी । इन सभों को मैं रत्ती भर भी नहीं डरती । जो डर है उसे तो मैं अभी दूर करके सदा के लिये बेखटके होती हूं।"

इतना कह कर उस घूंघटवाली ने अपने कपड़े में से एक तेज छूरा निकाला, चिराग की रोशनी में वह चमचमा उठा । चारो ओर ताक कर उस कठिन हृदया ने छूरे की धार ज्योंही देवेन्द्रविजय के कण्ठ पर रखनी चाही कि पीछे से किसी ने ललकार कर कहा, "हां, हां ! हां !! क्या है ? कौन है ? क्या गोलमाल करता ।"

चट घूंघटवाली ने अपनी भुजाली अपने कपड़े में छिपा ली और अपने को खूब डरी हुई शङ्कित और विस्मित भाव में उसके सामने प्रगट करके चिल्ला उठी, "ओह क्या हुआ ? आप कौन हैं ? अच्छे आये, भगवान् ने बड़ी दया करके आप को भेजा ! हमारा तो सर्वनाश हो गया । आइये, जल्दी आइये, बाबूजी जल्दी !!" और इतना कह कर जल्दी से उसने अपना घूंघट उघार दिया ।



घूंघटवाली ने भुजाली कपड़ों में छिपा ली और अपने को खूब डरी हुई प्रगट कर बोल उठी, "ओफ क्या हुआ !!"

(पृष्ठ १००)

घूंघट क्या खोला मानो कपड़े के भीतर से चांद निकल आया। ऐसी सुघराई, ऐसा मनोहर रूप, कहां से आया! लेकिन भगवान, इस सुन्दरता में ऐसा निठुरपन, ऐसी कदर्यता! अमृत में हलाहल! कुसुम में कीट! गुलाब में भी कांटा होता है। आम की फांक सी यह मनोहर आंखें और यह मनोमुग्धकर चंचल दृष्टि! प्रशस्त ललाट, सुन्दर सुआ के ठोर सी नाक, गुलाबी गालों पर बिखरे हुए अतिकृष्ण केश, देखते ही बनता है। इस सुन्दर मुखमण्डल से मनोरमा के मनोहर मुखमण्डल में तिल भर भी अन्तर नहीं है, जो कोई मनोरमा को देखकर इसको देखेगा वह जरूर कसम खाकर कह सकेगा कि यह मुख मनोरमा का ही है।

वह मुख ऐसा सौन्दर्यमय, ऐसी श्रीयुत है कि जो आदमी चिल्लाता हुआ वहां पहुँचा था वह उसका रूप देख कर इस भीषण दृश्य को एकदम भूल गया और कई मिनट तक देखने बाद संभल कर उस स्त्री से उसने पूछा, "क्या हुआ है?"

पहले के समान रुकती सांस वह स्त्री बोली, "देखिये साहब यही!" इतना कह कर देवेन्द्र का धरती पर पड़ा शरीर दिखा दिया। इसके बाद हाँफ हाँफ कर कहने लगी, "यहां एक डाकृर रहते हैं। मेरे स्वामी इस समय बहुत बीमार हैं। मैं उनके लिये डाक्टर बुलाने आई थी। ज्योंही मैंने बाहरसे आकर भीतर पाँव रक्खा त्योंहीं चार आदमी इस घर से बाहर भाग गये। उनमें से एक लड़का सा था, उसके हाथ में एक छूरा था, उसी को घुमाता हुआ वह बाहर चला गया और तीन आदमी उसी के पीछे खून खून करते हुये भाग गये।

मैं उनकी चिल्लाहट सुनकर इस घर में आई तो यहां से गलबल की आवाज भी सुनी। उसी आवाज से इस कोठरी के अन्दर आई तो यह हाल देखा। और तो मैं कुछ नहीं जानती। इस आदमी को इसी हालत में यहां पड़ा देखती हूं। आप भी अच्छी साइत पर आये, देखिये बेचारा मरा या जीता है?"

उस आदमी ने देवेन्द्रविजय की नाक पर उँगली रख कर कहा, "नहीं मरा तो नहीं, साँस कुछ कुछ चल रही है !!"

स्त्री बोली, "भला भगवान ने रक्षा की। वह परमेश्वर अनाथों का नाथ है। निरवलम्ब और निःसहाय की सहायता वही करता है। मरते को जीव दान वही देता है। आप यहीं ठहरिये, मैं जिस डाक्टर के पास आई हूं वह बड़े लायक डाक्टर हैं, उन्हीं को मैं बुला लाती हूं। उस खण्ड में वह रहते हैं, जरा देर से पहुंचूंगी, लेकिन मैं दौड़ कर जाती हूं देर नहीं लगेगी।"

इतना कह कर स्त्री इतनी तेजी से बाहर हो गई कि वह आदमी उसे रोकने का समय न पा सका। जब वह घर से बाहर चली गई तब वह चिल्ला कर बोला, "ठहरो ठहरो, भागो मत, ठहरो।"

लेकिन वह स्त्री बाहर जाकर अँधियारी में गायब हो गई। उस नये आये हुए आदमी ने मन में कहा, "यह स्त्री न जाने कौन है? जैसी सुन्दरी है वैसीही दयावती भी जान पड़ती है!" तब वह देवेन्द्रविजय को होश में लाने की तदबीर करने लगा।



बाईसवां बयान

यह स्त्री कौन है ?

वह स्त्री कहां गई ? बाहर आकर सोचने लगी, "इस वक्त इस घर के बाहर जाना अच्छा नहीं है, क्योंकि वह लड़का पुलिस वालों को पुकार कर लाता होगा। अगर रास्ते में मिल जायगा तो आफत हो जायगी। अब कुछ देर तक यहां छिप रहना चाहिए जब वह लड़का लौट कर इस कोठरी में घुसेगा तब मैं सहज ही चली जा सकूंगी।" इसी प्रकार ठीक करके पहले खण्ड की अटारी पर चढ़ी। वहां एक डाक्टर रहते थे। उनके कमरे में जाकर उसने अपना घूंघट उघार लिया। डाक्टर उसको देख कर अकचकाये, तब स्त्री ने अपना दूसरा नाम और पता बता कर कहा, "मेरे स्वामी बहुत बीमार हैं, कै और दस्त जारी हैं, दो घण्टे में कोई ७० । ८० दस्त हो गये हैं। घर में कोई नहीं है इससे मैं खुद आप की सेवा में आई हूं।" इसके बाद उसने डाक्टर के पास अपनी बनावटी विपत्ति का ऐसा हाल बताया कि डाक्टर को उसकी बात पर कुछ भी शक नहीं हुआ। जब बातें करती थी तब उसकी आंखों से सचमुच आंसू की धारा बहने लगी थी। उसके भग्न स्वर और व्याकुलता के वचन सुनकर डाक्टर साहब को बड़ी दया आई। "भोजन करने के बाद ही आपके स्वामी को देखने आऊँगा!" यह कह कर उन्होंने स्त्री को सन्तोष दिया। इस बातचीत में आधा घण्टा बीत गया तब वह स्त्री डाक्टर साहब को झूठा पता ठिकाना और झूठा नाम बता कर वहां से चलती हुई।

डाक्टर साहब का भोजन तैयार ही था। जल्दी जल्दी चार छः दर्जन कवर गले के नीचे उतार कर संक्षेपतः हाथ मुँह पोंछ पांछ कर उठे और एक पालकी गाड़ी किराया करके उस स्त्री के बताए हुए पते पर रवाना हुए।

उस रोज सारा दिन बिना विज़िट का बीता था, किसी ने डाक्टर साहब को नहीं बुलाया था। अब रात को दूनी फीस मिलने की आशा में डाक्टर साहब फूल कर कुप्पा हुए जाते थे। मन में कहते थे कि दिन भर तो मालूम हुआ कि किसी महा कुकर्मी का मुँह देखा था कि एक भी फीस देनेवाले रोगी की बुलाहट नहीं आई लेकिन रात अच्छी फली, जरूर किसी भाग्यवान का मुंह देखा था। स्त्री ने जो पता ठिकाना बताया था वहां पहुंचने पर एक मुसलमान का घर मिला। वहीं आप पालकीगाड़ी से उतर पड़े। उतरते ही पड़ोसवालों ने उनके आने का मतलब पूछा, तब डाक्टर ने अपना काम कह सुनाया। डाक्टर साहब की बात सुन कर सब के सब हंस पड़े। अब तो डाक्टर का माथा ठनका। अपमानित और निराश होकर डेरे को लौटे। गाड़ी भाड़ा अपने पास से देना पड़ा। डाक्टर साहब ने अपनी इस भूल को किसी से जाहिर न किया। क्या करें हम भी डाक्टर साहब की यह बात सब लोगों से कहने में कुछ लाभ नहीं समझते थे, लेकिन प्रसङ्ग बस कहना पड़ा।

——:०:——

तेईसवां बयान

चेतन्य लाभ

देवेन्द्रबिजय ने होश में आकर जब आखें खोलीं तो अपने को चहुओर आदमियों से घिरा हुआ पाया। हम पहले कह चुके हैं कि उस मकान में छोटा गाँव सा बसा है। एक खण्ड में डकैती हो तौ भी दूसरे खण्ड में उसकी खबर कठनाई से पहुंचती थी। जिस खण्ड में यह बात हुई थी उसी खण्ड के अधिक आदमी जमा हो गये थे तथा दूसरे खण्डों के जिन दो चार आदमियों को खबर मिली थी वे और श्रीशचन्द्र तथा पुलिस के बहुत से कर्मचारी थे।

किरिच की चोट से देवेन्द्र को जो पीड़ा हुई थी उससे बहुत अधिक चोट तुलसीदास के फेंके हुए बोतल से पहुंची थी और उसी चोट से वह बेहोश हो गये थे। जब देवेन्द्रविजय होश में आये तब उनको किरिच की चोट का ख्याल नहीं था। किसी ने उनकी देह में लगे और धरती पर गिरे रक्त को दिखाया, तब देवेन्द्रने हँसकर उसे टाल दिया और कहा, "हां ठीक है, हमारी इसी देह से वह निकला है, लेकिन कुछ परवाह नहीं है अभी बहुत सा खून बाकी है, इसके निकलने से कुछ शक्ति में कमी नहीं हुई है।"

जहां यह घटना हुई थी वहां से एकही आंगन के फासिले पर वकील साहब के मुहर्रिर कोठरी में बन्द थे। वह सब मामिला शुरू से सुन रहे थे पर मारे डर के चुपचाप उसी कोठरी में सिकुड़े बैठे थे, यहां तक कि चिल्लाने का भी साहस नहीं हुआ था।

जब सब देखनेवाले एक एक करके वहां से चलते हुए तब देवेन्द्र ने वकील के मुहर्रिर को कोठरी से बाहर करने का हुक्म दिया। श्रीशचन्द्र ने सांकल खोल दी, मुहर्रिर बाहर निकल आया। मानों उसका डरा मन फिर हरा हो आया।

देवेन्द्रविजय ने मुहर्रिर को बिदा करने के बाद श्रीशचन्द्र से कहा, "श्रीश! तुम चालाक लड़के हो। अगर हमारी नौकरी पसन्द करो तो तुमको कुछ वेतन भी दिया करें। तुम होते होते जब काम सीख जाओगे तब एक चतुर जासूस बन सकोगे।"

श्रीशचन्द्र ने पूछा, "अच्छा तो इस वक्त हमें क्या करना होगा?"

देवे०। इस वक्त तुम चेतला को जाओ, वहां घाट पर हर खेवे में लोगों पर देख भाल रक्खो।

श्री०। तो मैं जाता हूं।

देवे०। ठहरो तो, जाते हो पर वहां क्या करोगे यह भी कुछ समझा या योंही?

श्रीश०। इन्हीं सब बदमाशों की खोज करेंगे।

देवे०। हां करना तो यही होगा लेकिन इधर भी उनके कई अड्डे हैं वहां से वह वेष बदल सकते हैं।

श्रीश०। चाहे जितना वेष बदलें मैं सामने पाते ही उनको पहचान लूंगा।

देवेन्द०। हां होशियारी ऐसी ही चाहिये। इस वक्त सब खिदिरपुर जावगे। वहीं उनका प्रधान अड्डा है। उस अड्डे में

जाकर वे सब अपने बचाव की तद्बीर सोचेंगे। अगर वह सब दक्खिन के रास्ते से जांयगे तो चेतला के खेवा घाट * से उतरेंगे, नहीं अगर पश्चिम की राह से जावेंगे तो उनको अलीपुर होकर जाना होगा। मैं जाता हूँ अलीपुर के पुल पर उनकी राह देखूंगा। वह जरूर इन दोनों में से किसी न किसी राह से जावगे, तीसरा रास्ता नहीं है।

इतना कहने बाद दोनों दो ओर तेज़ी के साथ रवाना हुए।

---

*जिस समय का हाल हम लिखते हैं उस समय चेतला (कालीघाट) में गङ्गा का पुल नहीं बना था।

चौबीसवां बयान

वही घूंघट वाली

जासूस देवेन्द्रविजय अलीपुर के पुल पर पहुंचे और वहां पुल के एक ओर छिप रहे। उनके सिर में जहां चोट लगी थी और पीठ में जहां किरिच गड़ी थी दोनों जगह पीड़ा होने लगी। लेकिन सब को कलेजा पोढ़ा कर के सहने लगे। किसी की परवाह नहीं की। उनकी स्त्री की क्या दशा होती होगी इस बात को विचार कर देवेन्द्रविजय को जो मानसिक दुःख हुआ था उसके आगे उनका यह शारीरिक दुःख किसी गिनती में नहीं था।

थोड़ी देर बाद एक गाड़ी पुल पार करके चली। देवेन्द्रविजय उसी गाड़ी के पीछे धीरे से चुपचाप बैठ गये।

गाड़ी का दोनों दरवाजा बन्द था, पीछे की खिड़की में झिलमिली लगी थी, उसी की राह देवेन्द्रविजय ने देखा कि गाड़ी में दो आदमी सवार हैं। एक बूढ़ा दूसरी बुढ़िया। बूढ़े के मुंह में चुरुट है। जब वह चुरुट खींचता है तब गाड़ी में कुछ रोशनी हो जाती है। उसी रोशनी में देवेन्द्र ने दोनों को देख कर अनुमान किया कि बूढ़ा और बुढ़िया जाली वेष में हैं। बूढ़ा वही नवीनचन्द्र डाक्टर है और बुढ़िया है वही बेजान पहचान की घूंघटवाली!

देवेन्द्रविजय ने विचारा—इस वक्त ये इस राह से आनन्द-कुटीर को जा रहे हैं। तो तुलसीदास और गोविन्दप्रसाद चेतला

के रास्ते से जरूर जाते होंगे, और श्रीशचन्द्र भी जरूर उनके पीछे लगा होगा। अगर न भी लगा हो तो कुछ हरज नहीं, जिनसे हमको मतलब था उनको तो पा लिया।

देवेन्द्रविजय अब उनकी बातें सुनने की फिकर में चुप चाप गाड़ी के पीछे सिकुड़े बैठे रहे।

पचीसवां बयान

अनुसरण

थोड़ी देर तक दोनों चुपचाप रहे। जब गाड़ी पुल पार करके दूर निकल गयी तब देवेन्द्रविजय ने वृद्धवेषधारी नवीन को बोलते सुना। उसने कहा, "जुमेला! तुमसे मैं एक बात पूछना चाहता हूं।"

"अरे चु—चु—चु—चुप!" कह कर दबे कण्ठ से वृद्धावेष-धारिणी ने जबाब दिया।

नवीन०। इस वक्त हम लोगों को डर काहे का है? अब तो आनन्दकुटीर के पास आ गये हैं।

जुमेला ने कहा, "सो तो मैं जानती हूं। लेकिन थोड़ी देर ठहरो। जब तक आनन्दकुटीर के भीतर न पहुच जांय तब तक चुपचाप रहो।"

नवीन०। चाहे जो हो लेकिन तुम उस वक्त पहुंची थीं ठीक मौके पर, तुम उसे चाहतीं तो खतम कर डालतीं, लेकिन फिर भी वह जीता रह गया इसका हमको बड़ा अफ़सोस है।

जुमेला०। चुप रहोगे या बकबक करोगे? हमारी बात नहीं मानते?

नवीन०। मानेंगे, लेकिन एक बात और है, अगर उसे बता दो तो फिर चुप हो जांयगे।

जुमेला०। अच्छा क्या है? कहो।

न० । जब तुमने उसकी पीठ में उतनी किरिच भोंक दी तब क्या कुछ दिन उसको खटिया नहीं लेनी होगी ?

जु० । हां जरूर । मैं जानती हूं कम से कम आठ दिन तो बचा जी को उठते नहीं बनेगा ।

कुछ देर तक दोनों के चुप रहने बाद नवीन डाक्टर ने कहा, "अच्छा अब हम लोगों का पहला काम क्या है ?"

जुमे० । क्या तुमको मालूम नहीं है ?

नवी० । क्यों नहीं मालूम है ?

जुमे० । फिर पूछते क्या हो ?

नवी० । तुम उन दोनों वैसी सुन्दर स्त्रियों को मार डालोगी ? बड़ी वेदर्द हो । तुमको कुछ दया नहीं आवेगी ?

जुमे० । चुप, चुप !

नवी० । प्यारी जुमेला ! वह दोनों सुन्दरी तो हैं लेकिन तुम्हारी सी सुघराई और सुहावना रूप उनको कहां नसीब हो ।

जुमे० । यह मैं समझती हूं, तुम अब खुशामद करने लगे हो, लेकिन निश्चय जान रक्खो आज उनका निस्तार नहीं है, खाली उन्हीं दो का नहीं और भी दो एक जनों का आज अन्त का दिन है ।

नवी० । एं ! और दो एक कौन ?

जुमे० । तुलसीदास और गोबिन्दप्रसाद !

नवी० । आज ही की रात ?

जुमे० । हां आज ही रात को; इससे बढ़ के अवसर नहीं मिलेगा ।

नवी० । क्यों ?

जुमे० । कल ज़रूर उनके नाम वारण्ट निकलेगा और वह दोनों देश छोड़ कर भाग जांयगे । कभी उनको यहां रहने की हिम्मत नहीं । वह तो हमारे समझाये बुझाये से ठहरे हैं नहीं अब तक कभी के भाग चुके होते ।

नवी० । प्यारी जुमेलिया ! ज़रूर तुम जादू मन्त्र जानती हो, तुम्हारे पास ज़रूर मोहनी है ।

"जुमेलिया" नाम सुनते ही देवेन्द्रविजय चौंक कर सोचने लगे, "ओहो ! यह जुमेलिया है ! ठीक है, जब मैं अपने मित्र अरिन्दम की मदद में था और जिन दिनों मैं उनके सहकारी का काम कर रहा था उन दिनों इसी ने मुझे घायल किया था, फिर आज इसने दूसरी बार हमको जमपुर पहुंचाने की चोट दी थी । बड़ी हिम्मत-वाली औरत है, जैसा पक्का बदमाश यवन फूल साहब था, वैसी ही पिशाचिनी उसकी उपपत्नी जुमेलिया है । इस वक्त नवीन डाक्टर के अधीन हो रही है । मैंने कभी जुमेलिया को आंखों से नहीं देखा था । यही जुमेलिया मनोरमा के समान है ? अच्छा रे जुमेलिया, तू ही इस मामिले में है ! तब तो तुझसे हमसे अबकी गहरी मुठभेड़ होगी ।"

नवीन डाक्टर ने कुछ देर तक चुप रहने के बाद पूछा, "क्यों जुमेला ! क्या आज की रात तुम इतना काम कर डालोगी ?"

जुमे० । क्यों न कर डालूंगी ?"

नवी० । हाँ कर तो सकती हो । जब मृगी रोग तुम्हारे हाथ

ही में है तब करना बहुत कठिन नहीं है लेकिन एक दम चार पांच आदमी पर यह मृगी रोग चलना तो जुमेला हमको सम्भव नहीं दीखता।

जुमे०। नहीं! अबकी मृगी रोग से काम नहीं चलेगा। अबकी मामिला और गहरा है। अबकी वह रोग हमारे हाथ में काम करेगा जिससे एक ही रात को हजारों आदमी खतम हो सकते हैं।

नवी०। हां यह तो हम जानते हैं कि तुम्हारे पास बहुत से छलछन्द हैं, तुम अनेक तंत्र मंत्र टोटका मोटका जानती हो, बहुत सी जड़ी बूटी और दवा दारू रखती हो, लेकिन आज की......

बात काट कर जुमेलिया बोली, "चुप रहो तुम, ज्यादा बकने का काम नहीं है। मैं अपने काम के लिये सब ठीक ठाक कर चुकी हूं। तुमको कुछ बताना सिखाना नहीं होगा।"

छब्बीसवां बयान

शैटन

आनन्दकुटीर के पिछवाड़े संकीर्ण पथ पर एक गाड़ी आ खड़ी हुई। उसमें से दो आदमी उतरे। एक वही पिशाचचेता नवीन डाक्टर, दूसरी दानवी जुमेलिया। पहले पाठकों से बता चुके हैं कि आनन्दकुटीर के चारों ओर की फुलवाड़ी ऊंची चहार दीवारी से घिरी है। उस दीवार में पिछवाड़े की ओर एक छोटा सा गुप्त द्वार है। जुमेलिया ने उसी द्वार के एक ओर लगे हुए लोहे की कील पर अंगूठे का जरा सा चाप दिया, झट द्वार खुल गया। जुमेलिया उसी द्वार से होकर फुलवाड़ी के भीतर चली गयी।

देवेन्द्रविजय ने इतने ही में दरवाजा खोलने का ढंग देख लिया। जुमेलिया के पीछे उसी तरह दरवाजा खोल कर देवेन्द्रबिजय भी फुलवाड़ी के अन्दर हुए। जूते से आवाज होने के डर से तल्ले में रबर की खोली पहना ली।

रात अत्यन्त अंधेरी थी। काले बादलों से आस्मान घिरा था। देवेन्द्रविजय जिनका पीछा कर रहे थे वह अंधेरे में किधर जा रहे थे सो उन्होंने नहीं देख पाया, दूर से पांव की आहट मिली, उसी ओर चलने लगे। थोड़ी देर में वह पांव का शब्द भी बन्द हो गया।

अब देवेन्द्रविजय ने समझ लिया कि जिनका वह पीछा कर रहे थे वे बहुत दूर चले गये। तो भी वे पीछे नहीं हटे। पांव उठा कर जल्दी जल्दी चलने लगे। कुछ देर तक इसी तरह बीत गया।

इतने में चलते चलते देवेन्द्र ने आनन्दकुटीर के दरवाज़े के सामने एकबयक रोशनी देखी। जासूस ने खड़े होकर स्थिर दृष्टि से देख कर समझा कि नवीनचन्द्र ने दरवाज़े पर जाकर चुरुट पीने के लिये दियासलाई जलाई है। उसी रोशनी में देवेन्द्र ने देखा कि नवीन और जुमेलिया दोनों ने अपना बनावटी वेष और दाढ़ी मोछ सब उतार दिया है।

थोड़ी ही देर में वह रोशनी बुझ गई और फिर जैसे का तैसा घोर अन्धकार हो गया। नवीन डाक्टर ने मुंह से चुरुट फेंक कर "शैटन शैटन" कह के जोर से पुकारा।

डाक्टर की आवाज सुनते ही एक बड़ा भारी शिकारी कुत्ता गम्भीरता से गरज कर सामने आया। नवीनचन्द्र ने उसको प्यार किया, कुत्ते ने भी पूंछ हिला हिला कर अपना स्नेह जताया, इस के बाद जुमेलिया को साथ लिये नवीन डाक्टर भीतर गये और अन्दर से किवाड़ बन्द कर दिया। शैटन कुत्ता बाहर ही दरवाजे पर पहरा देता रहा।

देवेन्द्रविजय ने मनही में कहा, "किवाड़ बन्द करो चाहे चक्र व्यूह के भीतर बैठो, आज जिस तरह बनेगा देवेन्द्र आनन्द-कुटीर में प्रवेश करेगा। तुम्हारे शैटन से डर कर लौट जानेवाला आदमी देवेन्द्रविजय नहीं है।"

इस वक्त उनकी स्त्री और मनोरमा दुश्मन के हाथ में पड़ी हैं। ऐसी दशा में देवेन्द्रविजय क्या चुपचाप बैठ सकते हैं? एक ही घन्टे में दोनों मारी जाने वाली हैं। जल्दी और सावधानी से

काम करने में जरा भी चूक हुई तो फिर जान बचाना कठिन है। देवेन्द्रविजय को पहले उसी व्याघ्रबली कुत्ते से पाला पड़ेगा। उस को लांघ कर भीतर जाना है।

पाठक! यह कोई सहज काम नहीं है। कहिये आपको अगर किसी ऐसे बड़े घर में आवश्यक काम के वास्ते जाना हो जिसके द्वार पर बाघ सा जीवघाती कुत्ता रखवाली कर रहा हो तो आप को किस तरह गुमसुम हो सावधानी से जाना पड़ेगा? इसका अनुमान करने से ही आप देवेन्द्रविजय का संकट समझ सकते हैं।

इस समय सोच विचार करने और चुपचाप खड़े रह कर समय खोने का अवसर नहीं। अगर देवेन्द्र को अपनी स्त्री और अपनी शरणागता मनोरमा को काल के गाल से बचाना है तो झट आगे बढ़ना चाहिए। क्या करें, देवेन्द्र उसी दम धीरे धीरे आगे बढ़े।



सत्ताईसवां बयान

साक्षात्

दबे पांव बड़ी सावधानी से देवेन्द्रविजय आगे बढ़े। हर कदम पर मालूम होने लगा मानो रक्तलोलुप शैटन उनके पीछे दौड़ता आता है। इसी तरह देवेन्द्र बहुत दूर चले गये, उनको कुछ भी सुनाई नहीं दिया। कुछ देर बाद सामने ही उस कुत्ते का गुंगुआना देवेन्द्र के कान तक पहुंचा।

इतनी देर तक जिसको डरते थे वही आगे आया। उसी अन्धकार में आंख ठहरा कर देखा तो शैटन दौड़ता हुआ उन्हीं की ओर आ रहा है। देवेन्द्रबिजय के हाथ में उस वक्त कोई हथियार नहीं था जिससे वह अपनी जान बचाने की उम्मेद कर सकते थे, न हथियार निकालने ही का उनको समय था। वह कुछ भी सोच नहीं सके, सोचने का समय भी कहां था ? पलक झपकते में वह शिकारी शैतान देहधारी शैटन देवेन्द्रविजय पर आ पड़ा।

जो नसीब में है सो होगा इसी भरोसे देवेन्द्र ने दोनों हाथों से शैटन का गला जोर से पकड़ लिया। देवेन्द्र के समान क्षमताशाली ही का यह काम था, अगर दूसरा होता तो अबतक शैटन दांतों के मारे लोहू लोहान करके उसे जमपुर भेज चुका होता किन्तु देवेन्द्रविजय के शरीर में एक पहलवान की शक्ति है, उस शक्ति के आगे वह बेचारा कुत्ता क्या करता ? देवेन्द्र ने ऐसा जोर लगा कर उसका गला दबाया कि शैटन को बोलने की भी शक्ति नहीं

रही। बहुतेरा मुंह फिरा कर दांत गड़ाना चाहा लेकिन पार नहीं पा सका। कंठ की सांसवाली नली इतनी दबी कि कुत्ते ने मुंह बा दिया। मुँह फाड़ कर भी शैटन ने दांत मारने के लिये बहुत कुछ शैतानी की लेकिन एक भी काम नहीं आई। शैटन की सांस बन्द हो गई। गले की नली दबने से उसका सारा अंग शिथिल हो पड़ा। कई मिनिट बाद जब देवेन्द्र ने समझा कि उसका बल सब सांस के साथही शिथिल हो गया तब झट एक छुरी जेब से निकाल कर उसका पेट चीर दिया। अब शैटन की सांस शरीर से बाहर हो गई।

देवेन्द्र विजय ने कुत्ते को घसीट कर एक नाली में डाल दिया और झट अस्तबल की ओर आगे बढ़े। वहां जिस घर में शचीन्द्र रहता था उसको वह पहचानते थे। उसी घर के दर्वाजे पर देवेन्द्र ने हाथ से संकेत किया। झट दरवाजा खुला। देवेन्द्र ने भीतर जाकर दरवाजा बन्द कर दिया और हाथ की लालटेन बाहर निकाल कर अन्धेरे घर में रोशनी कर दी। उसी रोशनी में देवेन्द्र को पहचान कर मुसलमान बेषधारी करीमबक्स बने हुए शचीन्द्र ने कहा, "आप कैसे पहुंच गये, शैटन नहीं मिला ?"

देवेन्द्र विजय ने कहा, "उसको तो मैं खतम करके आया हूं।

अकचका कर शचीन्द्र ने कहा, "क्या आपने उसको मार डाला ?

देवे०। हां।

श०। उसने काटा नहीं ?

देवे० । काटेगा क्या हमारे वदन पर उसका दांत तक नहीं पहुंचा ?

श० । आप कितनी देर से यहां हैं ? आप यहां आकर फिर तो नहीं गये ? मैं अबतक भीतर था, अभी दरवाज़ा बन्द करके बैठा हूं कि आपने किवाड़ खटखटाया ।

देवे० । आनन्दकुटीर में इस वक्त कितने आदमी हैं ?

शची० । सात आदमी ।

देवे० । सात आदमी कौन ? तुम उनको पहचानते हो ?

शची० । नवीन डाकटर, जुमेलिया, कुमोदिनी, लेकिन कौन जुमेलिया है और कौन कुमोदिनी सो पहचानना बडा मुशकिल है। वह दोनों एक ही सो हैं ।

देवे० । तुमने उन दोनों को अपनी आंखों से देखा है ?

शची० । हां ।

देवे० । एक का नाम जुमेलिया है। शचीन्द्र ! तुमको जुमेलिया की याद है ?

शची० । नहीं याद तो नहीं है !

देवे० । जब फूल साहब गिरफतार हुआ तब इसी जुमेलिया ने हमको विपत में डाला था। यह कोई सहज स्त्री नहीं है ।

शची० । कुछ परवाह नहीं, अब उसे सहज कर डालेंगे ।

देवे० । चाहिये तो ऐसाही तभी तुम्हारी बहादुरी है । अच्छा उन सात में से और चार कौन हैं ?

शची० । दो नौकर हैं और दो नौकरानी !

देवे० । उन सबका क्या ? क्या वे हमलोगों के काम में कुछ खलल कर सकते हैं ?

शची० । हां दो नौकर और एक नौकरानी उनके कहने में हैं, वे उनकी सहायता करेंगे ।

देवे० । शचीन्द्र, यह सब और दो स्त्रियों को कैद कर लाये हैं, तुमको उनका हाल मालूम है ?

शची० । नहीं दो स्त्री और कौन ?

देवे० । तुम्हारी आंखें क्या बन्द थीं ?

शची० । कुमोदिनी ने आज हमको सवेरे कलकत्ते भेजा था । मैं यहां नहीं था । तभी उन दोनों को कैद करके लाये होंगे । वह दो स्त्रियां हैं कौन ?

देवेन्द्र० । वही तुम्हारी मामी और मनोरमा !

शची० । अरे ! यह क्या हुआ ? साफ कहिये सब मामिला ! यह कैसी घटना हुई ?

देवेन्द्र० । अब वह सब कहने का इस वक्त मौका नहीं है । तुम्हारे पास शिबू आया था, तुमसे मिला था या नहीं ?

शची० । नः शिबू तो हमको नहीं मिला ।

देवेन्द्र० । तो उसको भी इन सभों ने कैद कर लिया ऐसा मालूम होता है । उसको तुमसे मिलने के लिये हमने सवेरे ही भेजा था । अच्छा नवीन डाक्टर और जुमेलिया अभी आये हैं ।

शची० । हां अभी वे दोनों लौट के आये हैं ?

देवेन्द्र० । हां मुझे मालूम है । मैं उन्हीं के पीछे आया हूं ।

उन दोनों ने दोनों कैदियों को आज मार डालने की सलाह की है।

शची०। मामी और मनोरमा को? नहीं कभी ऐसा हो नहीं सकता। जान रहते तक तो हम ऐसा न होने देंगे।

देवेन्द्र०। अच्छा अभी हमारे साथ चलो। अगर उनके इस काम में विघ्न डालना है तो अभी आवो देर मत करो।

शची०। आप बैठिये। अभी घबराने का काम नहीं है। एक घण्टा वह सब अभी कुछ नहीं करेंगे।

देवे०। कैसे जानते हो?

शची०। मैं खूब जानता हूं। उनका स्वभाव हमको अच्छी तरह मालूम है।

देवे०। अच्छा उनको कहां कैद रक्खा है इसका अन्दाज तुम कर सकते हो?

शची०। हां यह तो हम जान सकते हैं। मकान के नैऋत कोन की ओर एक घर कैदियों के छिपाने लायक है।

देबे०। उस घर में जाने का रास्ता तुमको मालूम है?

शची०। उस घर में जाने के लिये एक ही रास्ता है। हम उसे जानते हैं। घर के भीतर से होकर जाना पड़ता है। जिस घर में वह सब इस वक्त सलाह करने बैठे हैं उसी घर में होकर जाने का रास्ता है।

देवे०। तब तो कुछ देर तक ठहरना चाहिये। अच्छा इतनी देर में तुमने कुछ और पता पाया है?

शची०। हां थोड़ा हाल मिला है।

देवे० । यह नवीन डाक्टर कौन है ?

शची० । जुमेलिया या कुमोदिनी में से किसी एक का स्वामी है ।

देवे० । तो क्या कुमोदिनी के मरने की बात बिलकुल गप्पही है ? नवीन डाक्टर कौन है इसका ठीक पता नहीं जानते ?

शची० । ठीक नहीं लेकिन मालूम होता है कि नवीन ने कुमोदिनी से ब्याह किया है ।

देवे० । मालूम होना क्या, ठीक यही बात है । लेकिन वह जुमेलिया को बहुत प्यार करता है । वही जुमेलिया इस घटना की आदि है ।

शची० । कुमोदनी बहुत भली आदमी है । वैसी सीधी साधी स्त्री हमने नहीं देखी । लेकिन अब उसका दिन पूरा हो आया है ।

देवे० । क्यों ऐसा क्यों कहते हो ?

शची० । जुमेलिया ही इसका कारण है । जुमेलिया और नवीन डाक्टर दोनों मिल कर जल्द अपना कण्टक दूर करेंगे । मालूम होता है आजही रात को वह सब उसको......

देवे० । जरूर यही बात है ।

शची० । अगर हमलोग आज यहां न होते तो उन सभों का यह हत्या उत्सव इसी रात को निर्विघ्न समाप्त होता ।

देवे० । शचीन्द्र, यहां तो आज हम लाग उपस्थित है, देखें !!

अट्ठाईसवां बयान

फुलवाड़ी में

शचीन्द्र के पास मुंह ले जाकर देवेन्द्रविजय ने धीरे धीरे कहा। "सुनो शचीन्द्र सुनो सुनो" इसके बाद थोड़ी देर तक दोनों कान लगा कर चुपचाप सुनते रहे। सुनने के बाद देवेन्द्रविजय जल्दी से उसी घर से बाहर आकर अंधेरे में गायब हो गये।

उसी समय किसी के पांव की आहट देवेन्द्रविजय को मिली, उसका पीछा करके उन्होंने उसको पहचान लिया। जिधर से आहट मिली उधर थोड़ी दूर आगे जाकर एक बड़े आम के पेड़ के नीचे छिप रहे। यहां से चार पांच हाथ दूरी पर आनन्द-कुटीर के चिराग की रोशनी खिड़की से निकल कर आ पड़ी थी। उसी रोशनी में देवेन्द्र ने उस आदमी को देख लिया जिसके पांव की आवाज उन्होंने सुनी थी।

थोड़ी देर में उसी रोशनी से होकर दो आदमी जल्दी जल्दी आनन्दकुटीर में चले गये। देवेन्द्रविजय ने उन दोनों आदमियों को पहिचान लिया। पाठक! आप भी पहिचानते होंगे। यह आपके परिचित वही वकील तुलसीदास और कविराज गोविन्दप्रसाद थे। दोनों वेष बदले हुये थे लेकिन उस बदले हुए वेष से असली वेष में इतना कम अन्तर था कि जो एक बार उन्हें देख चुका है वह सहजही उन्हें पहचान सकता है। चेतलाघाट होकर यहां आने में जो समय लगा उतनाही समय बीतने पर यहां दोनों पहुंचे हैं।

देवेन्द्रविजय ने मन में विचारा कि अब आनन्दकुटीर में सात की जगह नव आदमी हुए। इन नवों में से तीन तो महा गवद्द हैं। उस समय देवेन्द्र फिर शचीन्द्र की कोठरी की ओर फिरे। थोड़ी दूर जाने पर फिर किसी के आने की आहट मिली। यह शब्द बहुतही धीमा था ! शब्द साफ सुनने के लिये खड़े हो गये लेकिन फिर नहीं सुनायी दिया। तब देवेन्द्र आगे बढ़े। फिर वैसाही पद शब्द सुनाई दिया। देवेन्द्रविजय फिर चौंक कर खड़े हुए। अब देवेन्द्र को मालूम हुआ कि कोई उनका पीछा कर रहा है। लेकिन वह समझ न सके कि पीछा करनेवाला कौन है ? जो हो इस अँधियारी में वह आफत ढा सकता है।

देवेन्द्रविजय फिर चले, पीछा करने वाले की फिर आहट मिली, लेकिन अब की देवेन्द्रविजय खड़े नहीं हुए। लगातार चलेही गये। पीछा करने वाले की आवाज भी लगातार मिलती गयी। देवेन्द्रविजय ने अपनी चाल:कम कर दी, पीछा करने वाला धीरे धीरे निकट आ गया। तब देवेन्द्र ने पीछे लपक कर उसको पकड़ लिया, पकड़ने पर देवेन्द्र ने देखा तो वह एक बालक था। उसी समय उनको बालक श्रीशचन्द्र की याद आयी, देवेन्द्रविजय ने उसको तुलसीदास और गोबिन्दप्रसाद का पता लेने के लिये भेजा था लेकिन अन्धेरे में ठीक पहचान न सके। खूब जोर से दोनों हाथ ऐसा पकड़ा और गला दबाया कि भाग न सके और तब उससे धीरे से पूछा, "कौन है ? श्रीशचन्द्र !"

बालक ने धीरे से जवाब में कहा, "हाँ मैं श्रीशचन्द्र हूं।"

देवेन्द्र० । अच्छा हमारे साथ आवो ।

श्रीश० । आपने ता इतना जोर से मेरा गला दबाया कि थोड़ी देर और वैसा रखते तो मैं मर जाता ।

देवे० । अच्छा इस वक्त उस बात के छोड दो, हमारे साथ चुपचाप चले आवो ।

श्रीशचन्द्र को साथ लेकर देवेन्द्रविजय फिर शचीन्द्र की कोठरी में पहुंचे । मामाके साथ नये आदमी को देख कर शचीन्द्र अकबकाया । तब देवेन्द्र ने दोनों को एक दूसरे से परिचय करा दिया, इसके बाद पूछा, "क्यों श्रीश यह तो कहो तुम यहां तक कैसे पहुंचे ?"

श्रीश० । क्यों ? जैसे आपने बतलाया था वैसेही उन दोनों आदमियों के पीछे पीछे चला आया ।

देवे० । वह दोनों तुमको कहां मिले थे ?

श्रीश० । रास्तेही में दोनों मिले थे ।

देवे० । गंगापार कैसे हुए ?

श्रीश० । घाट की नाव पर पार हो आया । जब इन दोनों को मैंने रास्ते में देखा तब पहले ही से दौड़कर घाट पर चला गया । वहां एक नाव लगी थी । मैंने समझ लिया कि वह दोनों उसी पर पार होंगे । नाव के डांडा खेनेवाले नाव से अलग बैठ कर गप्प कर रहे थे । नाव के बीच में बांस की खपचाली से थोडा सा छाया हुआ था, उस छाये हुए भाग के एक ओर जमीन में डांडी बैठे थे, मैं दूसरी ओर से नाव पर चढ़ गया और डांडियों

के बैठने की जो काठ की पटरी लगी थी उसी के नीचे जाकर छिप रहा। वे सब बात में लगे थे और नाव के बीच में छायी हुई जगह की आड़ होने से हमारी ओर उन की आंख नहीं पहुंची। अब वह दोनों आये, नाव पर चढतेही उन्होंने पैसा फेंक दिया, मल्लाह खुशी से नाव खोल कर पार चले आये।

देवे०। ओह तुमने बड़ा साहस किया। उन्हीं की नाव में पार हो आये यह बड़ी हिम्मत का काम है। नसीब के जोर से तुम निबह आये हो। अगर वे सब जान जाते तो तुम्हारी क्या हालत होती?

श्रीश०। उसी गंगाजी में डुबा मारते।

देवे०। नहीं खाली डुबा नहीं मारते, पहले उनकी छुरी तुम्हारे पेट में घुसती फिर पीछे तुम्हारा गंगाजो में जल प्रवाह कर देते। जो हो अच्छा हुआ तुम निबह आये। लेकिन श्रीश, तुमने तो हमारे कहे मा'फिक काम नहीं किया! हमारी बात टाल दी।

श्रीश०। मैंने समझा कि अब आप से मुलाकात नहीं होगी। लौटना मुनासिब नहीं समझा इसी से चला आया। मैं यह भी जान गया कि आप चले गये होंगे।

देवे०। यह तुमने कैसे समझा?

श्रीश०। वकील और कविराज की बातों से मा'लूम हुआ कि उनके और दो आदमी अलीपुर के रास्ते से होकर गये हैं। तब मैंने समझ लिया कि आप जरूर उनके पीछे गये होंगे।

देवे०। हां हाँ! खूब सोचा, बहुत ठीक समझा, ऐसाही चाहिए, बेशक श्रीश तू साहसी लड़का है।

श्रीश० । और क्या ? मैं किसी को डरता थोड़े हूं ।

देवे० । श्रीश ! आज हम लोगों को यहा इस रात को बड़े भयं-कर काम में लगना होगा ।

श्रीश० । तो उसमें मैं भी हूं ! क्या मैं किसी काम में नहीं लगाया जाऊंगा ?

देवे० । तुम्हारे पास कोई हथियार है ?

श्रीश० । नहीं हथियार तो कोई नहीं एक चाकू भर है ।

देवे० । अच्छा लो यह एक पिस्तौल भी अपने पास । रक्खो

पिस्तौल हाथ में लेकर श्रीशचन्द्र ने कहा, "क्यों आप के पास दूसरी है क्या ?

"हां है !" कह कर देवेन्द्र ने शचीन्द्र को कहा, "अच्छा आओ शचीन्द्र अब चलें ।

शची० । थोड़ी देर और ठहरिये अभी समय है ।

देवे० । समय है तो क्या अब ठहरते नहीं बनता । इस वक्त बैठे बैठे समय बिताने से अकेले दस बारह बैरियों का सामना करना हमको अच्छा मालूम होता है । तुम उस घर में जाने का रास्ता जानते हो न ?

शची० । हां जानता हूं ।

देवे० । घर के अन्दर जाने पर हमलोग सुगमता से नैऋत ओर वाले उस गप्त मकान में जा सकेंगे न ? तुम हम लोगों को छिपे घर के अन्दर ले जा सकोगे ? बीच में कुछ गोलमाल तो नहीं न होगा ?

शची०। जिस रास्ते से हमलोग घर में घुसेंगे उससे गोल-माल का डर नहीं है।

देवे०। अच्छा तो तुम अपने पांव का जूता निकाल दो।

देवेन्द्र ने इतना शचीन्द्र से कह कर श्रीशचन्द्र से कहा—"तुम भी पांव का जूता निकाल कर उस कोने में रख दो"

फिर देवेन्द्र ने शचीन्द्र से पूछा, "तुमको हमने बहुत से सिर के बाल रखने के लिये दिये थे सो यहां हैं या घर छोड आये हो ?"

शचीन्द्र ने कहा—"वह सब हमारे पास हैं। यह सब जासूसी की चीजें घर रख आऊंगा ? तो काम किससे करूंगा ? देखिये मैं अभी हाज़िर करता हूं।"

इतना कह कर शचीन्द्र ने बहुत सा बाल निकाला। देवेन्द्र ने उनमें से दो तीन अपने पसन्द के निकाल कर कहा, "देखो अब चलते हैं। खूब खबरदारी से चलना होगा, जबतक काम न हो जाय तबतक चींटी के पांव चलना होगा। बलिक तबतक सांस भी जोर से नहीं लेना। पांच पांच विकट आदमी आज रात को यहां पहुंचे हैं। वह पांचों ऐसे हैं कि घात पाने पर जान मार डालने में एक भी कोताही नहीं करेगा। उन पांचो में चार मर्द हैं एक हैं औरत, लेकिन अकेले औरत उन चार मर्दों से अधिक बल रखती है। वह अपने पराक्रम अपने साहस और निर्भयता के आगे मानवी नहीं दानवी कहने लायक है। शचीन्द्र, इस वक्त हमलोगों को जान का मोह करके काम करने से नहीं बनेगा।

जान पर खेल कर आज जुमेलिया का हमलोगों को सामना करना पड़ेगा, तुम तैयार हो या नहीं ? और श्रीश, तुम बोलो, जान देने को तैयार हो ?"

दोनों ने सिर हिला कर सम्मति प्रगट की। देवेन्द्रविजय ने दोनों हाथों से उनका हाथ धर कर कहा, "अच्छा तो आओ, अब यहां पल भर भी ठहरने का काम नहीं है।" शचीन्द्र देवेन्द्र-विजय और श्रीशचन्द्र को साथ लेकर अन्धेरी रात में धीरे धीरे घर से बाहर हुआ।

थोड़ी देर में सब आनन्द कुटीर की पिछली दीवार के पास पहुंच गये। वहाँ दीवार में बहुत सी खिड़कियां थीं। शचीन्द्र ने एक जंगले के सब छड़ सहजही निकाल डाले। देवेन्द्र ने धीरे से पूछा, "क्यों शचीन्द्र ! यह करते क्या हो ?" शचीन्द्र ने दबे कण्ठ से कहा, "मैंने मौके पर काम करने के लिये इस जंगले के सब छड़ निकाल कर जरा सा अटका रक्खा था।"

फिर सब चुपचाप उसी झरोखे से घर के अन्दर हुए।

उनतीसवां बयान

मंत्रणागृह

आगे शचीन्द्र, उसके पीछे श्रीशचन्द्र, सब से पीछे देवेन्द्रविजय इस तरह तीनों रवाना हुए। शचींन्द्र ने इतने दिन यहां नौकरी करके सब कोठरियों में आने जाने की राह देख ली थी। वे तीनों खिड़की से होकर जिस घर में आये वह भण्डार घर था, उस भण्डार घर में नित्य का बहुत सा जरूरी सामान रक्खा था। उस भण्डार घर के पास एक खाली कमरा था, तीनों आदमी भण्डार घर से उसी खाली कमरे में आये। खाली कमरे को पार करने बाद वे लोग जहां पहुंचे वह रसोंई घर था। रसोंई घर के सामने एक बड़ी दालान थी। दालान के उत्तर ओर एक और खाली कमरा था। तीनों आदमी उस दालान में जा खड़े हुए। उसी दालान से उन्होंने देखा कि पास के एक खूब रोशन कमरे से रोशनी आकर उस खाली कमरे को भी कुछ रोशन कर रही है। वहां उन लोगों को जुमेलिया की विकट पिशाची हंसी साफ सुनाई दी।

देवेन्द्र अब पीछे रहना ठीक न समझ कर शचीन्द्र के सामने आ पहुंचे और दोनों को वहीं खड़ा करके आप आगे बढ़े। अगूंठे पर सारे शरीर का भार देकर चुपचाप देवेन्द्र उस खाली कमरे को पार कर गये। उसके एक ओर दालान मिली। उस दालान में दक्षिण ओर एक छोटा सा चिराग जल रहा था। उस अल्पालोकित कमरे की दालान का सामनेवाला दरवाजा कुछ

खुला था। देवेन्द्र ने समझ लिया कि दालान के सामने जिस घर का दरवाजा कुछ खुला है उसी में उसके बैरी बैठे सलाह कर रहे हैं। उसी बैठक में देवेन्द्र पर आफत डालने की सलाह हो रही हैं।

देवेन्द्रविजय ने उसी कुछ खुले हुए किवाड़ के पास जाकर देखा तो उस बैठक में दो स्त्रियां बैठी हैं। देवेन्द्र को ऐसा मालूम हुआ मानो उसके आगे उस बैठक में दो मनोरमा बैठी हैं। दोनों रूप रंग में बिलकुल एक सी हैं। तिल भर का भी फरक नहीं है। यहां तक कि उनके पास का बैठा हुआ आदमी भी उनका फरक नहीं पहचान सकता। उन दोनों का रूप रंग एक सा होने के सिवाय कण्ठस्वर भी मानों एकही सा है। दोनों एक सी पोशाक पहने हैं, दोनों की पोशाक में मोती जड़े हैं, दोनों का पहरावा नीला नीलमपरी सा है। स्वच्छ आकाश होने पर उणगण खचित सुनील नभमण्डल जैसे सुहावना लगता है, इनकी भी शोभा वैसीही दीख पड़ती है। उन्नत वक्ष पर सब्ज साटन की चोली तथा ऊपर से नाना प्रकार के जरी के काम से लदी बहुमूल्य हरी ओढ़नी देखते: ही मन हाथ से निकल जाता है। कानों के बिजली से चमकने वाले सुन्दर श्वेतकुण्डल दीपालोक में चकपका रहे हैं, उनके हिलने से उनका चकमक लौट कर जब गुलाबी गालों पर पड़ता है तब उसकी मनोहारिनी आभा देखतेही बनती है। गले में बड़े बड़े स्वच्छ मोतियों की माला कमर तक लटकती है। नासिका के बड़े मोती और पन्ने की नथ मुखमण्डल की शोभा चौगुनी कर रही है। हाथ में हीरेका कंकण बिजली की छटा दिखाता है।

इन दोनों मनोहारिनी स्त्रियों में से एक का नाम जुमेलिया और दूसरी का नाम कुमोदिनी है। लेकिन उनमें कौन जुमेलिया है और कौन कुमोदिनी है सो हम पाठकों को ठीक ठीक नहीं बता सकते।

इन दो युवतियों के सिवाय वहां और तीन मर्द बैठे हैं। ये वही तीन हैं जिनके साथ कुछ देर पहले देवेन्द्र विजय की मुठभेड़ हो चुकी है। देवेन्द्रविजय उनकी बातें सुनने को दरवाजे के पास खड़े हो गये। पहलेही उनको नबीनचन्द्र डाक्टर की आवाज सुनायी दी। जो कुछ देवेन्द्र ने सुना वह उसकी बात का अन्तिम वाक्य था। नवीन के कण्ठ से देवेन्द्र ने सुना, "हो जायगा, मैं कहता हूं सो तुम मानो।"

उन स्त्रियों में से एक ने कहा, "अरे बाप रे! प्राणनाथ! यह तुम कहते क्या हो।"

देवन्द्रविजय ने झट ताड़ लिया कि यही बोलनेवाली जुमेलिया है। फिर जुमेलिया बोली, "आफत हो जायगी कैसे? कैसे जाना कि इसमें आफत आवेगी?"

नवीन०। देवेन्द्रविजय तो अभी जीता ही है मर नहीं गया।

जुमे०। तो क्या तुम समझते हो कि वह पता लगाता होगा?

नवी०। समझना क्या यह बात तो जरूरी है।

जुमे०। इसको जरूरी कैसे तुम कहते हो?

नवी०। इसका सुबूत तो यही है कि उसने अपने नौकरों को भेजा था।

जुमे० । तो इससे हुआ क्या ?

नवीन० । हुआ क्या ! उसके नौकर को तुमने कैद कर लिया है !!

जुमे० । करती क्या ? सिवाय कैद करने के और कोई उपाय ही नहीं था ।

नवीन० । उसी उपाय से तो अब हम लोगों को बेउपाय होना पड़ा है ।

जुमे० । क्यों ?

नवीन० । क्यों काहे को ? अब शिबू तो लौट के जा नहीं सकता ?

जुमे० । नहीं ।

नवीन० । बस इसी से देवेन्द्रविजय सब समझ जायगा । वहां कहां अटक रहा ? क्यों लौट कर नहीं आया ? इसका पता लगाये बिना वह रहेगा थोड़े ?

जुमे० । अच्छा तो पता लगाने से क्या होगा ?

नवीन० । जिस बात में कुछ उसको सन्देह रहा होगा उसमें इस बात से वह पक्का विश्वास कर लेगा ।

इतना सुन कर जुमेलिया ठठा के हंस पड़ी ।

नवीनचन्द्र डाक्टर ने पूछा, "क्यों तुम इतना हंसती काहे हो ?"

जुमे० । क्या कहूं ! प्यारे ! तुम मेरे प्राणसखा होने पर भी इतने सरलचित्त और इतने डरपोक क्यों हो ?

नवीन० । डर की जगह में डरपोंक रहना अच्छा है ।

जुमे० । प्राणप्रिय ! तुमको यह नहीं मालूम कि मैं सहजही शिबू को नये साँचे में ढाल सकती हूं ?

नवीन० । वह कैसे ?

जुमे० । वह एक बूंद दवा है । प्यारे डाक्टर ! आप लोग बहुत सी दवाइयां जानते हैं लेकिन हमारी एकही दवा तुम्हारी सैकड़ों दवाइयों से तेज है । मैं एक बूंद दवा से ही उसको मुक्ति दे दूंगी । उससे क्या होगा सो सुनो । उसकी सुधि बुधि भूल जायगी, वह बिलकुल बेखबर हो जायगा, कहाँ कैद था, कहां पकड़ा गया, कहां क्या देखा सो कुछ भी उसको याद नहीं रहेगा, किसी तरह कुछ भी बता नहीं सकेगा । जासूस देवेन्द्र कहो इस बात का पता कभी नहीं लगेगा कि उसकी स्त्री कहां मार डाली गई !

नवीन० । इस बात से उसका शक और बढ़ेगा ?

जुमे० । बढ़ता रहे इससे क्या नुक़सान है ?

नवीन० । नुक़सान चाहे न हो, लेकिन ऐसा होने से वह हमलोगों का पीछा करेगा ।

जुमे० । पीछा करके क्या कर लेगा ? वह भी अपनी बीवी की तरह काल के गाल में जायगा ।

नवीन० । वह ज़रूर पता लगा कर यहां पहुंचेगा ।

जुमे० । आया करे, आने से हमलोगों को लाभ ही है हानि नहीं है ।

नवीन०। अगर वह आवे ?

जुमे०। आवे तो अच्छा है, उसको लौट जाने की तकलीफ नहीं सहनी होगी।

नवीन०। जुमेला हो तुम बड़ी हिम्मतवाली !

जुमे०। और क्या, जुमेलिया किसी से हारने वाली है ?

नवीन०। हां यह तो हम जानते हैं। भला यह बताओ अब क्या करोगी ?

"आजही जो करना है कर डालूंगी। इसी रात को सब कण्टक दूर करके बेखटके हो जाऊंगी।" कह कर जुमेलिया ने तीव्र कटाक्ष से नवीन के मुंह की ओर एक बार देखा। वह तीव्र कटाक्ष बड़े पापाचरण का था, उसको नवीनचन्द्र ने भली भांति समझ लिया।

वकील तुलसी दास ने पूछा, "क्यों जुमेला ? कैसे तुम बेखटके होगी, वह बात क्या हम लोगों के जानने लायक नहीं है ?"

जुमे०। अभी चाहे थोड़ी देर में उन सभों को मार कर बेखटके होऊंगी।

तु०। तुम उन लोगों को किस तदबीर से मारोगी ?

जुमे०। दवा से खाली एकही बूंद से।

तु०। खिलाओगी कैसे ?

जुमे०। खिलाना तो सहज है, उनको पीने के पानी में दे दूंगी।

तुलसीदास० । अगर तुम्हारा पानी वह सब न पीवें ?

जुमेला० । तो उसके सिवाय और भी सहज उपाय है ।

तुलसीदास० । वह क्या ?

जुमेला० । जब तक मैं उसे कर न लूं तब तक बताने की जरूरत क्या है ?

तुलसीदास० । कब तक अपना काम पूरा कर डालोगी ?

जुमेला० । एक घंटे में सब तमाम हो जांयगे ।

तुलसीदास० । गोबिन्दप्रसाद और हम भी कुछ तुम्हारे काम में मदद दे सकते हैं ?

जुमेला० । नहीं मदद का कुछ काम नहीं है । अभी से तुम लोग ऊपर के मकान में जाकर मजे से नींद लो । जब नींद खुले तब देखना कि जुमेलिया ने किस सफाई से अपना काम पूरा किया है ।

गोबि० । यह तो अच्छी बात है ।

जुमे० । नवीन डाक्टर और मैं दोनो मिलकर तुम लोगों का काम तमाम कर देंगे ।

गोबि० । हम लोगों का काम तमाम करोगी ! !

जुमे० । हां—तुम्हीं लोगों का ।

गोबि० । बातों से तो ऐसा मालूम होता है......

बात काट कर जुमेलिया बोली, "कि तुम्हीं लोगों को खतम करूंगी क्यों ?"

गोबि० । हाँ कुछ कुछ तो ऐसा ही मतलब मालूम देता है ।

हँसती और कटाक्ष करती हुई जुमेलिया बोली, "अब ऐसा करूंगी! विश्वास होता है?"

तुल०। जुमेला हम लोग बहुत थक गये हैं अब यह बता दो कि कौन किस घर में सोवेगा? अब बैठते नहीं बनता।

जुमे०। जीने के सामनेवाले घर में तुम सो रहो और उसके पासवाले कमरे में यह कविराज जी सो रहें।

इतना कहकर दूसरी बार कविराज गोबिन्द प्रसाद की ओर इशारा किया। इसके बाद नबीनचन्द्र ने कुमोदिनी से पूछा, "क्यों कुमुद! हम लोगों की सलाह में तुम्हारी क्या राय है?"

कुमो०। जो राय जुमेलिया की है वही मेरी है, इसमें पूछने की क्या जरूरत है। मनोरमा जब तक नहीं मरे तब तक हमारा सन्तोष कहां है!

नवीन०। अच्छा तो ठीक है, तुम भी अपने कमरे में जाकर सो रहो, जब काम पूरा हो जायगा तब आकर मिलेंगे।

तुलसीदास, गोबिन्दप्रसाद और कुमोदिनी तीनों उस कमरे से बाहर होकर अपने अपने सोने के घरों में चले गए।

तीसवां बयान

दोनो

अब उस मन्त्रणागृह में नवीनचन्द्र और जुमेलिया के सिवाय और कोई नहीं रहा। पास के कमरे में गुपचुप देवेन्द्रविजय खड़े देखने लगे। जुमेलिया नवीनचन्द्र को बिठाकर उठी और झट हाथ में एक छोटा सा बाक्स लिये आ गई। कुछ चिन्ता सहित नवीन ने पूछा, "क्यों जुमेला क्या सचमुच तुम आज सबको ख़तम कर डालोगी।"

जुमे०। हाँ सबको।

नवीन०। कुमोदिनी को भी!

जुमे०। हाँ कुमोदिनी को भी।

नवीन०। अरे वह तो हमारी स्त्री है न? तुम्हीं ने उसको हमें दिया था न?

जुमे०। हाँ वह है तो तुम्हारी स्त्री ही और मैंने ही तुम्हें दी भी है।

नवी०। वह बात क्या भूल गई हो?

जुमे०। नहीं, भूल नहीं गई। आज तुमको रँडुआ बनाऊंगी।

नवी०। क्यों जुमेला! यह तुम्हारा......

बात काटकर जुमेलिया बोली, "वह हमारा कुछ नुकसान नहीं करती लेकिन यह मेरी खुशी है कि उसे मार डालूंगी। मैंने तुमको दिया है मैं ही ले लूंगी। इसमें तुम्हारा क्या?" हमारे मन की खुशी है।

नवीन० । यह तो बड़ी भयानक खुशी है जुमेला !!

इतना सुनकर जुमेलिया मुसकराई ! साथ ही जी में अधिक रंज होने पर भी जुमेलिया की खुशामद के लिये नवीनचन्द्र ने थोड़ा मुसकुरा दिया। जुमेलिया ने पूछा, "क्यों ? हमारी खुशी में तुम्हारी खुशी नहीं है ?"

नवीन० । अगर मैं इस खुशी को अच्छा समझता तो...

जुमेलिया ने बात काटकर पूछा, "तो क्या ?"

नवी० । तो यह कि हमें बहुत दिन घरनी बिना रहना पड़े।

जुमे० । कुछ परवाह नहीं इसकी फिकिर क्या है।

नवी० । हाँ जुमेला ! यही हम भी कहते हैं। तुमको अपना वादा याद है न !

जु० । हाँ याद है। जब उसके पूरा करने का समय आवेगा तब तुम तैयार रहना।

नवी० । प्यारी जुमेला ! मैं ज्यों ज्यों तुम्हारा यह सब भयंकर काम देखता जाता हूं ज्यों ज्यों तुम्हारा अमानुषीय कर्म और पैशाचिक साहस देखताहूं त्यों त्यों मेरा हृदय तुमको अपनाने के लिये उत्कण्ठित होता जाता है, त्यों त्यों मैं तुम पर आसक्त होता जाता हूं।

जुमे० । खैर अच्छी बात है लेकिन देखो फिर भूल मत जाना।

नवी० । नहीं, भूलूंगा क्यों !

जुमे० । तुम्हारी स्त्री पर जो चाल चलने की आज मैंने मन में सोची है वही चाल तुम पर भी चला सकती हूं।

नवी० । ओह मैं इससे नहीं डरता।

जुमे० । क्यों ?

नवी० । क्योंकि तुम हमको दिल से चाहती हो और तुम्हें हमारी जरूरत भी है । मैं न रहूं तो तुम्हारा ......

बात काटकर मुसकुराती हुई जुमेलिया बोली:—

"ओहो ! नवीनचन्द्र ! तुम अपने मन में ऐसा समझते हो ?"

नवी० । हाँ लेकिन एक बात के लिये मैं बहुत चिन्तित हूं ।

जुमे० । वह क्या ?

नवी० । यही कि आज की रात गुजरते ही सबेरे एक ही जगह पांच मुर्दे पड़े मिलेंगे । शिबू को मिलालो तो छः हो जांयगे।

जुमे० । हां छः तो जरूर हो जांयगें ।

नवी० । भला छ छ मुर्दे तुम कहां छिपाओगी, क्या करोगी!

जुमें० । करूंगी क्या ?

नवी० । कुछ नहीं ?

जुमे० । कुछ नहीं ।

नवी० । कुछ नहीं कैसे ?

जुमे० । सचमुच कुछ नहीं ।

नवी० । ले सुनो जुमेला !

जुमे० । लेकिन सुनाओ नवीन !

नवी० । खूब बिचार लो, बात सहज नहीं है, छः छः मुर्दे हैं, एक जगह छः मुर्दे को गाड़ने के लायक गढ़ा खोदना भी एक आदमी से नहीं हो सकता न एक आदमी छः मुरदों को गंगा में प्रवाह कर सकता है । एक आदमी का.........

बात काट कर जुमेलिया बोली, "एक आदमी का काम नहीं है सो मैं जानती हूं।"

नवी०। तो क्या करोगी!

जुमे०। सब वहीं पड़े रहेंगे।

नवी०। तो फिर उपाय क्या होगा?

जुमे०। उपाय यही है कि यहां से भाग चलेंगे।

नवी०। कहां भाग चलेंगे?

जुमे०। एक दम ग़ायब हो जांयगे।

नवी०। लेकिन जरूर पकड़ जांयगे।

जु०। तुम पकड़ जाओगे मैं नहीं पकड़ी जा सकती।

न०। क्यों? तुम क्यों पकड़ी नहीं जाओगी?

जुमे०। सब लोग जानेंगे कि मैं मर गई।

नवी०। कैसे?

जुमे०। कैसे! तुम भी पूरे बोड़म हो! इतना भी नहीं समझते! अरे यह तो सभी जानते हैं कि कुमोदिनी बहुत दिनों से मर गई है लेकिन मैंने इसी मौके के लिये उसे जीता रखकर उसके मर जाने की खबर मशहूर कर दी थी। कल जो मनोरमा और कुमोदिनी दोनों की एक सी लाश लोग देखेंगे तब यही जानेंगे कि एक लाश मनोरमा की है दूसरी मेरी है।



इकतीसवां बयान

भीषण प्रक्रिया

जब पापिष्ठ नवीन डाक्तर पिशाचिनी जुमेलिया की बात का अर्थ समझ गया तब उसके कलेजे में मानो बिजली फिर गई। सारा शरीर थर्रा उठा। वह लम्बी सांस लेकर भीतरी भाव छिपा के बोला, "ओहो, अब समझा !!" जुमेलिया बोली, "समझा? खूब अच्छी तरह से समझ लिया? कैसी चतुराई है ? कैसा पेचदार मामिला है ?"

नवी०। लेकिन मेरा जीता रहना और भाग जाना लोग सहज ही समझ जांयगे।

जुमे०। हां यह तो समझेहींगे। इसके समझे बिना मज़ा भी तो नहीं आवेगा ?

नवी०। तब तो मैं.........

बात काट कर जुमेलिया ने कहा, "तब तो तुमको अपनी प्यारी के विशेष तावे रहना पड़ेगा। अर्थात् जिसको तुम चाहते और स्नेह करते हो एक दम उसके आधीन होना होगा और यही मैं चाहती हूं कि तुम हमारे अधीन रहो।

नवी०। तो जुमेला ! तुम हम को प्यार करती हो ?

जुमे०। क्यों नवीन ! क्या तुमको इसमें अभी सन्देह है ?

इतना कह कर जुमेलिया ने नवीन का मुख चुम्बन किया। नवीन ने भी वैसाही जवाब देकर गाढ़ आलिंगन किया। दोनों में

कई मिनट तक चुम्बन का लेना देना चला, कई मिनट तक दोनों में आलिंगन होता रहा। नवीनचन्द्र ने कहा, "जुमेला ! जब हमको खूनी समझ कर पुलिसवाले हमारा पीछा करेंगे तब क्या होगा ?"

जुमे०। तब तो मैं तुमको और अधिक प्यार करूंगी।

नवी०। अच्छा एक बात और है, रुपये पैसेके वास्ते क्याहोगा?

जुमे०। तुम क्या समझते हो कि उसे छोड़कर चली जाऊंगी

नवी०। नहीं, नहीं.........

जुमे०। तो फिर जानते हो कि कुछ बन्दोबस्त नहीं किया ?

नवी०। क्या किया ?

जुमे०। नकद जितना रुपया मिलने वाला था सब जमा कर लिया है।

नवी०। कितना जमा हुआ होगा ?

जुमे०। होगा पचास हजार के लगभग।

नवीन०। सब नक़द ?

जुमे०। हाँ सब नगद। नगदी है, इसके सिवाय तीस हजार का जड़ाऊ गहना होगा।

नवीन०। एँ ! इतना माल यहां है ?

जुमे०। हाँ।

नवी०। इसी घर में सब है ?

जुमे०। हाँ, इसी घर में है।

नवीन०। तुम्हारे पास ? सब रक्खा कहां है ?

जुमे० । वाह जी नवीनचन्द्र ! तुम तो हमको बिलकुल पागल बनाते जाते हो ।

नवीन० । पागल कैसे !!

जुमे० । क्या तुमने कभी कोई पागलपने का काम करते हमको देखा है ।

नवीन । नहीं ।

जुमे० । फिर ऐसी बात क्यों पूछते हो ? अगर अभी मैं तुम को सब माल का पता बता दूँ तो पागल नहीं तो क्या कहलाऊँगी?

नवीन० । क्यों जुमेला ! यह काम पागल का कैसे होगा ?

जुमे० । और नहीं क्या, तुम जान जावोगे तो मौक़ा हाथ से जाने दोगे ?

नवी० । हम तुम्हारी बात नहीं समझ सके, साफ कहो किस मतलब से यह सब कह रही हो ?

जुमे० । साफ़ तो यही है कि अगर तुम सब धन दौलत पा जावो तो यहां सब मुर्दों के साथ हमारा मुर्दा भी फेंक कर भागने में क्या चूकोगे ?

नवीन० । ओह, प्राणप्यारी जुमेला ! तुम हमको इतना अविश्वासी समझती हो ?

जुमे० । प्राणनाथ ! नवीन !! तुम इस तरह की बात मत करो।

नवीन० । लेकिन प्यारी, तुम्हीं विचारो !!

जुमे० । हम क्या विचारें अब तो और कुछ विचारने का काम नहीं है । हमारे काममें तुमसे जितना होसके सहायता करो ।

नवीन० । उसके वास्ते मैं सदा तैयार हूं ।

"देखो जब काम हो जायगा तब हम तुम दोनों एक साथ यहां से कहीं चल देंगे । फिर जहाँ जायंगे वहाँ राज करेंगे ।" इतना कह कर जुमेलिया ने हाथ में लिये हुए बक्स से एक शीशी निकाल कर उसका कांच का काग खोला और नाक के पास खुली शीशी को इस तरह किया जैसे शीशी के अन्दर का अरक सूंघती हो । उस शीशी में लाल अर्क रक्खा हुआ नज़र आता था ।

नवीनचन्द्र जुमेलिया के और पास जाकर उसकी ओर विस्मित होकर एकटक निहारने लगे । जुमेलिया ने नाक के पास से शीशी हटा ली, फिर न जाने क्या सोच कर कुछ सेकेण्ड बाद नाक के पास लगाया और फिर नाक सिकोड़ कर बोली— "धत्तेरी की, नाक ऐसी बंद हो गई है कि कुछ भी महक नहीं मालूम होती ।"

नवीनचन्द्र ने कहा—"तब तो बड़ा कठिन मामिला है, फिर क्या होगा ?"

जुमे० । होगा क्या, मैं जानती हूं यही शीशी है, ज़रा तुम सूंघ कर देखो तो सेफालिका फूल की महक इसमें आती है या नहीं । मेरी नाक तो सर्दी से इस वक्त कुछ काम ही नहीं करती ।

नवीन० । कुछ परवाह नहीं, मैं सूंघ के बता दूँगा ।

जुमे० । बता दूँगा नहीं, अभी लो शीशी पकड़ो और सूंघ

कर देखो। जल्दी बताओ, काम तो अभी है। देखना खबरदारी से शीशी पकड़ना, अरक हाथ में न लगे।

नवीन०। हाथ में लगने से हरज है?

जुमे०। हाँ हाथ गल जायगा।

नवीन०। वाह! जुमेला! जैसी तुम भयङ्करी हो वैसीही तुम्हारी दवायें भी भयावनी हैं।

जुमे०। और नहीं क्या? यह सब दवाइयां मुझे डाक्टर फूल साहब से मालूम हुई हैं!

नवीन०। तब तो वह भी बड़ा भयानक आदमी था?

जुमे०। हाँ! डोक्टर फूल साहब वैसाही साहसी, वैसाही बुद्धिमान और वैसाही चतुर आदमी था। मुझे तो वैसा आदमी कभी देखने में नहीं आया।

नवीन०। इस दवा की गन्ध सेफालिका फूल की तरह है! इसके सूंघने में कुछ हरज तो नहीं है न?

जुमे०। नहीं! हरज होता तो मैं देती काहे को?

इतना सुन कर नवीन डाक्टर ने शीशी हाथ में ली और नाक के पास लेजा कर सूंघा। सूंघतेही डाक्टर चिल्ला उठा और शीशी फेंक कर जहाँ बैठा था वहाँ से दो कदम पीछे हट गया।

जुमेलिया ने झट शीशी उठा कर काग बन्द कर लिया, दवा गिरने नहीं पायी। उस शीशी में प्रूसिकएसिड से भी कोई भयानक चीज़ थी।

नवीन डाक्टर घर में चारों ओर अंधे की तरह घूमने लगा!

चिल्लाना चाहा, चिल्ला न सका। तीन ही चार सेकेण्ड में उसका शरीर शिथिल हो पड़ा। दोनों हाथ से सिर दबाकर जुमेलिया के आगे बैठ गया लेकिन बैठते भी नहीं बना, तलमलाकर धरती में लोट गया और धूल में छटपटाने लगा।

जिसको दो मिनट पहले "प्राणप्यार" कहकर माया का प्रेम छिड़कती थी उसी नवीनचन्द्र को धरती पर लोटते और छटपटाते देख कर हत्यारिनी जुमेलिया हँसने लगी। जितनी देर तक नवीनचन्द्र छटपटाता रहा उतनी देर तक जुमेलिया उसकी ओर देखती और मुसुकुराती रही। थोड़ेही समय में नवीन डाक्टर की मृत्यु हो गयी।

उस पिशाचिनी ने पिशाची हँसी हँस कर कहा, "एक हुआ।"

इसके बाद जुमेलिया ने नवीनचन्द्र की लाश झुक कर देखी और कहा,—"खूब हुआ, बड़े मजे का मौका है, कल देवेन्द्रविजय आकर यहाँ बड़े मजे का मामिला देखेगा। आज इस घर के हर एक आदमी की यही गति होगी। यहांतक कि नौकर चाकर भी आज जुमेला के हाथ से नहीं बचेंगे और बहादुरी यह कि किसी को यह नहीं मालूम होगा कि यह कैसे मरे हैं? कुमोदिनी और मनोरमा की लाश देख कर देवेन्द्रविजय मेरा मरना समझेगा। कुमोदिनी की लाश मेरे मरने का सुबूत देगी। मामिला बड़ा मजेदार है। देवेन्द्रविजय भी गुमराह होगा और हैरान होकर धोखा खायगा। मेरे बिना बचा जी को धोखा कौन दे और हैरान कौन करे? आज उसकी स्त्री मरेगी

कल सवेरे आकर अपनी स्त्री को मरी देखेगा तो अपनी जाँच भी बन्द कर देगा। और जाँच करेगा तो किसकी करेगा ? नवीन,तुलसी गोविन्द, सभी तो मरे मिलेंगे। मैं रही सो मुझे भी वह मानो मरी हुई पावेगा। मैं चाहूँ तो उसे भी नवीन की तरह खतम कर सकती हूं लेकिन मेरा इरादा ऐसा नहीं है। मैं चाहती हूँ कि वह जीता रहे तब तक हैरान हो, धाखा खाके और हाथ मल मल कर अफसोस करे। क्या करूं नवीन को मैं मारना नहीं चाहती थी लेकिन सिवाय मार डालने के और कोई तदबीर ही नहीं था। क्योंकि इसको जीता रख कर मैं अपनी आफत आप नहीं बुला सकती। देवेन्द्र ! एक बार तुमको भी मैंने करीब आधे के मार डाला था लेकिन उस दिन तुम मरे नहीं सो बहुत अच्छी बात हुई। क्योंकि उस दिन अगर मर जाते तो अपनी स्त्री की मेरे हाथ से मृत्यु नहीं देखते, तुम्हारा उस्ताद अरिन्दम और तुम हमारे सुख में काँटाहुए। हमारे प्राणप्रिय फूल साहब को हमारे हृदय से खींच लिया, वह बियोग, उस शोक की आग हमारी छाती में अब भी जल रही है। वह आग हमारे हृदय से नहीं बुझी है, न बुझेगी।" इतना कहकर घड़ी में समय देखा और कहा, "अभी समय पूरा है।"



बत्तीसवां बयान

हत्या उत्सव प्रारम्भ

दीवान में एक बड़ा लम्बा चौड़ा आईना लगा था। उसी के आगे जुमेलिया जा खड़ी हुई। अपना भीषण रूप देख कर जुमेलिया आपही आप हँस पड़ी और मुसकुराती हुई अपने आप को कहने लगी, "जुमेलिया! ऐसा दिन फिर नहीं पावेगी! आज तेरा महोत्सव, खून, खून, आज केवल खूनही खून है! खाली खून से खून करके मन की साध मिटा ले। एक हो गया, दो, तीन, चार, पांच, छ, सात, आठ, नव खून। नवो तमामही से हैं, कुछ थोड़ा बाकी है। एक नवीन को खतम कर चुकी, दूसरी कुमोदनी, तीसरा तुलसीदास, चौथा गोविन्दप्रसाद, अगर मैंने कुछ भूल नहीं की तो यह चार जिन्दगी से जबाब दे चुके। बाकी रहीं रेवती, मनोरमा और नौकर सब। वह भी थोड़ी देर के पाहुने हैं। देखो यमराज! आज तुम्हारा नरककुण्ड भरने के लिये जुमेलिया कमर कस के खड़ी हुई है। आज जुमेलिया का हत्याउत्सव है।"

जुमेलिया के मुँह से यह सब सुन कर देवेन्द्रविजय सहम गये। देवेन्द्रविजय ने समझ लिया कि जुमेलियो कुमोदिनी, तुलसीदास और गोविन्दप्रसाद पर पहलेही विषप्रयोग कर चुकी है और वह अपने अपने शयनागार में जा कर तमाम हो चुके हैं।

अगर इस हत्यानिवारण का कुछ उपाय होता तो देवेन्द्रविजय कर सकते थे। लेकिन पहले ही जहर देकर जब उनको बिदा कर चुकी है तब क्या वश है? अब देवेन्द्रविजय ने मन में विचारा कि जुमेलियाही पर नजर रखना ठीक है ताकि और अनर्थ न कर सके। एक बार जासूस देवेन्द्र के मन में आया कि अभी घर में घुस कर चाण्डालिनी को हथकड़ी भर दें। लेकिन फिर तुरतही वह विचार बदल गया।

घर में एक ओर एक टेबुल पड़ा था। उसके नीचे शराब से भरी एक बोतल थी। जुमेलिया ने उसको निकाला और एकही सांस में मुँह से लगाकर खाली कर गई। पासही मला मलाया तैयार गाँजा रक्खा था, उसको छोटी सी पतली चिलम पर रख कर और आग लगा कर उसका भी दम लगा लिया।

दम लगा कर जुमेलिया चुटकी पर ताल देने और गाने लगी।

काहे मोसे प्रितिया लगवले परदेसिया।
प्रितिया लगाय काहे मोहे तरसौले रे,
छोड़ि के अकेली मोके गइले परदेसिया॥

इतना गाते गाते उसकी नजर नवीन की लाश पर पड़ी। एक दरवाजे का पर्दा निकाल कर उस लाश पर डाल दिया और कहा, "अब इसको आँखों की ओट रखना अच्छा है।" परदा डालने पर नवीन की लाश बिलकुल ढँक गई। जुमेलिया ने ब्राण्डी की दूसरी बोतल खोली और उसे भी झट खाली कर गई। नशा जम आया। जुमेलिया ने फिर गाना शुरू किया।

"मिटे नामियों के निशां कैसे कैसे !"

गाना ख़तम करके आपही आप कहने लगी, "आज क्या हुआ जो नशा नहीं जमता ! इतनी बोतलें चढ़ा गई गांजे का दम लिया लेकिन फिर भी नहीं जमा, बात क्या है ? लेकिन देखूं कैसे नहीं जमता ! और कब तक नहीं जमता ! जुमेलिया छोड़ने वाली थोड़े हैं।" फिर एक बोतल ब्राण्डी निकाली और ग्लास में भर कर पीने और ऊपर का शेर गाने लगी।



तैंतीसवां बयान ।

इत्याउत्सव का उद्योग

न जाने क्या सोच कर जुमेलिया चौंकी । एकदम गाना थँम गया । घर में एक ओर अलमारी खड़ी थी, उसको खोल कर दराज में से जुमेलिया ने एक टीन का बक्स निकाला । बक्स को खोला तो हीरे मोती जड़े गहनों ही से वह बक्स भरा था । गहनों से अलग एक ओर लाल फीते में बाँधे बहुत से नोटों का एक पुलिंदा भी पड़ा था ।

जुमेलिया मुसकुरा कर आपही आप बोली, "यही तो हमारी मेहनत का फल है । मेहनत नहीं बल्कि होशियारी कहना चाहिए, खाली होशियारी से यह धन हमारे हाथ आया है । वाह रे जुमेलिया । वाह रे हम, वाह ! शाबाश रे हम, शाबाश ! वाह रे जुमेलिया ! सचमुच अगर जहान में देखो तो तुमही एक बहादुर स्त्री हो । स्त्री होकर मरदों का कान काटती हो, मर्द भी ऐसा तैसा नहीं वह मर्द जो सौ में, हजार में, लाख में, एक है, उसका कान काटनेवाली, उसको हैरान करने वाली उसको चुटकी पर उड़ानेवाली, शाबाश जुमेलिया ! शाबाश ! आज तेरी होली है । लोग अबीर गुलाल से होली खेलते हैं, मैं आदमी के खून से होली खेलूंगी । अरे मैं करती हूं क्या? नशे के झोंक में बड़ी भारी चीज भूली जाती थी ! पहले उस "१७क" पुलिन्दे को भी तो सामने रख लेना चाहिये ।"

इतना कहकर अलामारी में से एक पुलिन्दा निकाला जिस पर "१७क" लिखा था। उसको निकाल कर बोली, "इसको पहलेही खोल के देखना अच्छा था। इसी में रामगुलाम के सुबूत के सब कागज पत्र होंगे। इसके सिवाय और भी कोई मूल्यवान् चीज होगी लेकिन जाने दो अब उसके देखने का समय नहीं है। रामगुलाम ने इसको छिपा कर समझा था कि कोई ढूंढ़ न सकेगा, लेकिन वह मुझे नहीं पहचानता था कि मैं उड़ती चिड़िया के पर में हलदी लगा सकती हूँ। यह "नं० १७-क" पुलिन्दा क्या चीज है कि जिसका पता न लगे। लेकिन इस "१७-क" से क्या मतलब है? यह खाली निशान के लिये लिखा है या कुछ इसका अर्थ है? खैर जो हो अब इसके विचारने का समय नहीं है, इसको यहीं रहने देना अच्छा है जब चलने लगूंगी ले लूंगी। और पीछे "१७क" का भी मतलब लगा लूंगी।"

इसके बाद जुमेलिया ने पुलिन्दे को उसी अलामारी में रख दिया। तब उसने उस बक्स में से दूसरी एक शीशी निकाली और उसकी ओर ठीक ऐसे देखने लगी जैसे बाघिन अपने क्रीड़ा-व्यस्त बच्चे को देखती है। और कुछ देर तक देखने के बाद वह पहले के समान भयंकर हँसी हँसी। उस पिचाशिनी की हँसी से देवेन्द्र भी अकचका उठा।

उस शीशी को दो एक बार हिला कर कहा, "तब यही हमारा बड़ा हथियार है" और ढलती ढुलकती उसी दरवाजे से बाहर

हुई जिसके पास देवेन्द्रविजय खड़े थे। नशे के झोंक में उसने देवेन्द्रविजय को देख कर भी नहीं देखा! देवेन्द्रविजय चाहते तो उसी समय उसको पकड़ सकते थे, लेकिन उसका कुचक्र और उत्तमता से जानने के लिये छोड़ दिया। उन्होंने समझ लिया कि कुमोदिनी तुलसीदास और गोविन्दप्रसाद को तो अब किसी तरह बचाही नहीं सकते, वे अब मरही चुके हैं किन्तु रेवती, मनोरमा और शिबू को बचाने की तद्बीर करनी चाहिए।

"प्रितिया लगवले परदेसिया!" गाती गाती जुमेलिया मंत्रणा-गृह से बाहर होकर आंगन में आयी और अन्धकार में आंगन पार कर के जीने से होकर ऊपर चढ़ने लगी। देवेन्द्रविजय भी गुपचुप उसके पीछे रवाना हुए।



चौतीसवाँ बयान

पिशाचिनी का उत्सव

अब जुमेलिया जीना पार कर के दूसरे मंजिल पर पहुंची, अब भी वह गुनगुनाती हुई गा रही थी—

"प्रितिया लगवले परदेसिया।"

सहसा उसने गाना बन्द कर दिया और चौंक कर चारों ओर सावधानी से देखने लगी। उसको मालूम हुआ मानों उसका पहला शिकार नवीनचन्द्र उसके आसपास घूम रहा है।

फिर जुमेलिया ने साहस से अपने ही को धिक्कारा और कहा, "छिः जुमेलिया! तू डरती है?" और नवीन उत्साह से आगे बढ़ी। फिर वही गुनगुना कर गीत गाती चली—

"प्रितिया लगवले परदेसिया।"

वह उस समय थोड़ी देर पहले अगर पीछे देखती तो देवेन्द्रविजय को देख लेती, लेकिन वह ऐसा न कर सकी। जब उसने पीछे फिर कर देखा तब देवेन्द्रविजय पास के एक खंभे की आड़ में छिप चुके थे।

जुमेलिया दूसरे महल के दक्षिण ओर वाली कोठरी के पास पहुँची। देवेन्द्रविजय भी खंभे से अलग होकर आगे बढ़े। शचीन्द्र और श्रीशचन्द्र भी इशारे से देवेन्द्रविजय से थोड़ी दूर पीछे पीछे आ रहे थे। देवेन्द्रविजय ने मंत्रणागृह से जुमेलिया के बाहर होने पर उन दोनों को अपने पीछे आनेका इशारा कियाथा।

जब जुमेलिया दूसरे महल के एक कमरे के बन्द दरवाजे पर पहुंची तब उसने रूमाल से अपना मुंह और नाक अच्छी तरह से बन्द करके बाँध लिया, इसके बाद दरवाजा खोल कर भीतर हुई। जुमेलिया ने मुंह और नाक के ऊपर जो रूमाल का भाग पड़ा था उसको हाथ से भी बलपूर्वक दबाया हुआ था ताकि विषैली हवा भीतर न जा सके।

दूसरे मंजिल की छत पर उत्तर की ओर बिलकुल अँन्धेरा था। जिस कमरे में जुमेलिया इस समय पहुंची है उसमें एक छोटा सा चिराग जल रहा था इस कारण रोशनी में देवेन्द्रविजय जुमेलिया के पीछे नहीं जा सके लेकिन जहाँ वह खड़ी हुई वहां से वे बहुत दूर नहीं थे।

उस कमरे में पहुंच कर जुमेलिया ने एक और मोमबत्ती जला दी। यह मोमबत्ती वहीं चिराग के पास रक्खी हुई थी। अब वह विषाक्त वायुपूरित गृहविभाग और आलोकित हो उठा।

यह कमरा कुमोदिनी का शयनागार था। धरती पर कुमोदिनी पड़ी थी। इस समय कुमोदिनी का शरीर प्राणहीन पड़ा था। जैसे नवीनचन्द्र जान छोड़कर जहान से विदा हुआ वैसे ही कुमोदिनी भी जगत् से विदा हो चुकी थी केवल उसका मृत शरीर शयनागार में पड़ा था।

"यह दूसरा हुआ !" खुशी से जुमेलिया बोली, और उसी समय उस कमरे की सब खिड़कियाँ खोल दीं। जब थोड़ी देर में साफ हवा उस कमरे में भर गई तब जुमेलिया ने अपने मुंह

परसे रूमाल हटा लिया और कुमोदिनी की लाश देख कर बोली, "कुमोद ! तू सुन्दरी तो थी, लेकिन तेरा प्राण आज शरीर से बाहर हुआ । आज तेरी सब सुघराई रसातल को चली गई। एक दिन मैं भी तेरी ही तरह मरूंगी । मनोरमा का, मेरा और तेरा तीनों का एकसा रूप एक सा डील क्यों हुआ ? तेरा और मनोरमा का एक होने का कारण तो मैं समझती हूं लेकिन मेरे साथ तुम दोनों का मिलान एक बड़े अचरज की बात है, बड़ा अचरज है ! बड़ा भयंकर है ।"

इतना कह कर जुमेलिया न जाने क्या चुपचाप सोचने लगी । सोच बिचार के बाद पास के जीने से ताबरतोड़ ऊपर चढ़ी, फिर थोड़ी दूर ऊपर चढ़ कर ठिठक गई । उसके मन में यही शङ्का उठी कि कुमोदिनी मरी है या नहीं । इतना बिचार कर अपने जेब से एक भुजाली निकाल कर नीचे आई और उसी शयनागार में पहुंच कर कुमोदिनी के मृत शरीर में उसने भुजाली भोंक दी ।

इसके बाद चिराग बुझ गया, बत्ती बुझे घर में अँधेरा छा गया । मालूम नहीं हुआ कि उस अंधेरे में जुमेलिया क्या हो गई। उस अँधेरे में देवेन्द्रबिजय ने कुमोदिनी के शरीर पर हाथ फेर कर देखा तो प्राणहीन शरीर बिलकुल ठंढा हो गया था ।

देवेन्द्रविजय झट उस कमरे से बाहर आये और शचीन्द्र श्रीश के साथ जहां खड़े थे वहां पहुंचे। देखतेही शचीन्द्र ने पूछा, "क्यों मामा साहब ! क्या है ?"

देवेन्द्र ने कहा,—"मामिला बड़ा बेढब है। तुम्हारी मामी और मनोरमा कहां कैद हैं इसका जल्दी पता लगा सकते हो?

शचीन्द्र०। हाँ लगा सकते हैं।

देवेन्द्र०। अच्छा तो मैं जो कहता हूं सो बहुत खबरदारी से पूरा करो।

शचीन्द्र०। हां कहिये।

देवेन्द्र०। कुमोदिनी तो मर चुकी।

शचीन्द्र०। अरे! यह तो बुरा हुआ! कहाँ है?

देवेन्द्र०। वहीं अपने सोने के कमरे में है।

शचीन्द्र०। वह कब मरी है?

देवेन्द्र०—जब वह अपने शयनागार में थी तभी उसकी मृत्यु हुई। मैं इस वक्त उसी घर में तुमको जाने के वास्ते कहता हूँ। तुरंत उस घर से कुमोदिनी की लाश लेकर वहाँ पहुंचाओ जहां तुम्हारी मामी और मनोरमा कैद है।

शचीन्द्र०। बहुत अच्छा, फिर?

देवेन्द्र०। फिर कुछ नहीं तुम कुमोदिनी की लाश वहाँ बिछौने पर इस ढंग से रखना कि एक दम देखने से सोई हुई मालूम हो। अगर उस घर में रोशनी हो तो रोशनी कम कर देना। इसके बाद तुम अपनी मामी और मनोरमा को लेकर तुरन्त कुमोदनी के शयनागार में पहुंचो। वहीं उन दोनों को ठहरना होगा। तुम अब चले जाव, देर मत करो। जुमेलिया अभी इधर आवेगी।

शचीन्द्र०। अगर यहाँ जुमेलिया से भेंट हो जाय ?

देवेन्द्र०। सो नहीं होगा।

शचीन्द्र०। क्यों ?

देवेन्द्र०। मैं ऐसा नहीं होने दूँगा, तुम इसका कारण मत पूछो, अभी चले जाव, इसका भार हमारे ऊपर रहा।

इतने में ढलती ढुलकती जुमेलिया उधर आ पहुंची। जब तक उन लोगों से वह आगे न बढ़ गई तब तक शचीन्द्र श्रीश और देवेन्द्र तीनो खम्भों में चिपके रहें। जब जुमेलिया वहाँ से आगे गई तब शचीन्द्र को अपने बताये हुए काम पर जाने के लिये देवेन्द्र ने इशारा किया और श्रीशचन्द्र को भी उसकी मदद में साथ रहने का इशारा कर आप जुमेलिया के पीछे रवाना हुए।

पैंतीसवां बयान

पिशाचिनी

जुमेलिया अब कहाँ जा रही है, इसका अनुमान देवेन्द्र-बिजय ने कर लिया था।

जुमेलिया जीने के पासवाले कमरे के दरवाजे पर आ खड़ी हुई और फिर पहले की तरह रूमाल से मुंह नाक बन्द करके दरवाजा खोला। उस कमरे में भी एक छोटा सा चिराग टिम-टिमा रहा था जुमेलिया ने भीतर जाकर पहले उस चिराग को बुझा कर फिर पहले की तरह टेबुल पर की रक्खी हुई मोमबत्ती जुलाई और चट सब खिड़कियाँ खोल दीं।

उस कमरे में देखा तो दो लाशें धरती पर पड़ी थीं। एक तुलसीदास की, दूसरी गोविन्दप्रसाद की। अपने कौशल से दो प्रकाण्ड पुरुषों को प्राणहीन धरती पर पड़ा देख जुमेलिया ठठा कर हँस पड़ी और बोली—"सब मरेंगे, सब दाढ़ीजारों की यही दशा होगी। जो हमारे रास्ते में कांटा बोवेगा, जो हमारे काम में विघ्न करेगा उसकी यही गति होगी, उसको जहान में कोई बचानेवाला नहीं है।"

अपने दोनों शिकारों की ओर थोड़ी देर तक एकटक निहा-रने के बाद जुमेलिया अपने मनमें कुछ सोचने लगी। देवेन्द्र बिजय ने समझ लिया कि अब हत्यारिनी मनोरमा और रेवती की ओर जावेगी। अब इस समय क्या करना सो देवेन्द्रविजय ने

झट विचार लिया। ज्योंही सिर नीचा कर के जुमेलिया दोनों मुर्दों को देखने लगी कि जल्दी से मौका पाकर देवेन्द्रविजय ने उस कमरे का दरवाज़ा धड़ाम से बन्द कर दिया; वह धड़ाका घर भर में सुनाई दिया। देवेन्द्रविजय किवाड़ बन्द करके बेखटके जीने से नीचे उतर आये, सामने होकर नीचे जाने में जुमेलिया देख लेगी इसी कारण उन्होंने किवाड़ बन्द किये थे ! उस धड़ाके की आवाज़ से जुमेलिया का कलेजा काँप गया। नशा का जोर अधिक था। उसी झोंके में वहां से उठी और कूद कर एक दम कमरे से बाहर आई। चारो ओर देख कर बोली,—"ओह। मैं क्या इतना डरपोक हो गई कि किवाड़ के खटके से डरने लगी ! जुमेलिया ! तेरी हिम्मत कहां गई ? हवा के झोंके से किवाड़ से किवाड़ का धक्का लगा इस पर इस तरह तेरा चित्त चंचल हुआ ?"

इधर देवेन्द्रविजय विचार रहे थे कि किस तद्बीर से जुमेलिया के काम में बाधा डालें ताकि वह रेवती और मनोरमा के कमरे में न जा सके और शचीन्द्र से जो रेवती और मनोरमा को लेकर आ रहा है उसकी रास्ते में भेट न हो जाय। लेकिन इस उपाय के लिये देवेन्द्रविजय को बहुत विचारना नहीं हुआ। सहज ही वह उपाय निकल आया। जब से देवेन्द्रबिजय ने किवाड़ बन्द किये थे उसका धड़का सुन कर तभी से मर्दमारनी जुमेलिया का हृदय दुर्बल होता आता था, उसने अपने ही मुँह से कहा— "अच्छा बाकी काम थोड़ी देर बाद करूंगी। नशा अभी जमा नहीं है; नहीं तो जुमेलिया डरनेवाली नहीं थी। कुछ और चाहिये।"

अब जुमेलिया नीचे उतरी; और जिस कमरे में बैठ कर पहले उसने कई बोतल ब्राण्डी के खाली किये थे उसी में गई; किन्तु वहाँ देखने से मालूम हुआ कि जिस चीज़ के वास्ते वहां आई हैं, वह उस घर में नहीं है। तब उस कमरे के पासवाले दूसरे कमरे में गई जिसमें ब्राण्डी भरे कई बोतल थे, उनमें से एक उठा लिया और खोल कर जमाने लगी। उस कमरे में एक तैलहीन दीप टिमटिमा रहा था।



छत्तीसवां बयान

यह क्या प्रेत है ?

जुमेलिया ग्लास पर ग्लास भर कर ब्राण्डी पीने लगी। जब नशा जम गया तब वहां से उठकर उस घर में आई, जिसमें नवीन डाक्टर की लाश छोड़ गई थी। उस कमरे में आकर आप ही आप कहने लगी—"काम तो एक तरह से मानो सब ख़तम ही कर चुकी हूं; थोड़ा सा और रह गया है; उसको भी बात की बात में पूरा कर लूंगी। अब मैं अकेली सब धन दौलत की मालकिन हूंगी। पहले हिस्सेदार बनाकर काम कर लिया अब सब हिस्सेदारों को तमाम कर चुकी। फूल साहब बड़े विकट आदमी थे सही, लेकिन वह मर्द थे मैं स्त्री हूं। वह उतने बड़े विकट बुद्धिमान और साहसी होकर भी जो काम नहीं कर सके थे वह सब मैं स्त्री होकर पूरा कर चुकी; फूल साहब का नाम चलाने वाली मैं ही एक चेलिन हूं।"

जुमेलिया के अन्तिम वाक्य के साथ ही शब्द हुआ—"सच है, प्यारी सच है।"

जहां नवीन की लाश पड़ी थी वहां एकबयक जुमेलिया की नज़र पड़ी। लेकिन वहां देखती हैं तो नवीन की लाश नहीं है। पहले की आवाज़ सुनकर जो उसके जी में शङ्का हुई थी सो और बढ़ गई। कांपती! कांपती! बोली, "ऐ! अरे! लाश कहां गई?"

फिर चारों ओर देख कर बोली, "मैं खूब जानती हूं, वह मर

चुका है, वह आप यहां से हरगिज़ नहीं उठ सकता, तब हुआ तो क्या हुआ, मेरे हाथ से वह बच गया! उसका प्राण नहीं निकला? नहीं, नहीं ज़रूर मरा है ! ज़रूर मरा है! उसके मरने में शक नहीं है ।"

थोड़ी देर बाद जुमेलिया ने धीरे से पुकारा "नवीन !" इसके साथ ही पीछे से किसी ने कहा, "क्यों प्यारी ?" बिजली की तरह चौंक कर जुमेलिया खड़ी हुई और अकचका कर पीछे फिर के देखती है तो सामने ही एक मूर्ती खड़ी दिखलाई पड़ी। मूर्ति देखकर जुमेलिया ने मन में कहा, "बाबा, यह क्या प्रेत है ?"

और प्रगट कोई बात न कह कर पास के मेज पर का रक्खा हुआ पिस्तौल झट उठा लिया और उस मूर्ति की ओर निशाना लगाकर गोली मारी।

घोड़ा दबाते ही टोपी फूटी और पिस्तौल की कड़ाकी आवाज़ हुई, लेकिन मूर्ति जैसी की तैसी खड़ी रही।

पिस्तौल छोड़ने पर वह मूर्ति हँस पड़ी। और मुसकुराकर बोली—बेफ़ायदा मिहनत मत करो जुमेला, अब मैं जीता नहीं हूं, गोली तलवार हमको नहीं लग सकती।"

मूर्ति की आवाज़ नवीन डाक्टर की तरह थी पोशाक भी नवीन के समान कोट पतलून पहने थी। ऐसी गम्भीर आवाज में मूर्ति ने बातें कीं जैसी आवाज़ में संसार के लोग बात नहीं करते आवाज़ बड़ी गम्भीर थी। एक एक शब्द कांप-कांप कर निकलता था। हर शब्द के साथ मूर्ति कांप उठती थी।

जुमेलिया ने उसकी ओर बिस्मित नेत्र से खूब देख कर स्थिर कण्ठ से पूछा—"नहीं लग सकतो क्यों ?"

मूर्ति०। क्योंकि न मैं जीता हूं और न मृत्युलोक का आदमी हूं कि मुझे दुनियां का दुख सुख व्यापेगा।

जुमे०। अरे बाप रे ! अरे ! यह क्या हुआ ?

मूर्ति०। हुआ क्या ! जुमेलिया तू बड़ी कठोर है। कैसी बेदर्दी से तूने मुझे मार डाला है।

जुमे०। तुमको मार डाला ?

मूर्ति०। और क्या ! अभी घंटे भर की बात भूल गई; कैसी तू मर्दमारनी है ?

जुमे०। अगर ऐसा है तो तुम यहां आये कैसे ?

मूर्ति०। अकाल मृत्यु होने से मैं प्रेत हुआ।

जुमे०। क्या प्रेत हो ?

मूर्ति०। हां जुमेला ! अगर तुमको विश्वास न हो तो तुम्हारे हाथ में पिस्तौल मौजूद है और एक बार, दो बार, दस बार जितनी बार तुम मार सको मार के देख लो। आदमी मरने पर भूत होता है। जब मैं एक बार मर कर भूत हो चुका तब फिर दोबारा थोड़े ही मरूंगा।

जुमेलिया अपने मन में डरी तो पहले ही से थी, लेकिन केवल साहस पर बोल रही थी, साहसही पर भरोसा कर के उसने फिर उस प्रेत मूर्ति की छाती पर पिस्तौल का निशाना लगाकर कहा, "तुम भूत हो चाहे प्रेत मैं अभी तुम्हें खतम कर देती हूं।

लेकिन मूर्ति जैसी की तैसी बिना हिले-डुले खड़ी रही। जुमेलिया ने गोली छोड़ी। पिस्तौल के फैर की आवाज़ सुनसान रात के समय घर में प्रतिध्वनित हो उठी।

मूर्ति ने फिर उसी स्वर से कहा, "जुमेला फिर फैर करो फिर।"

कुछ धीमे स्वर से जुमेलिया ने कहा—"तुम मरो चाहे चूल्हे में जाव। लेकिन तुम भूत हो, इस बात पर मैं विश्वास नहीं कर सकती, न करूंगी न करना चाहती हूं।"

मूर्ति०। तुम्हारे विश्वास न करने पर भी मैं प्रेत ही हूं।

जुमे०। तुम यहां क्यों आये हो ? क्या काम है ?

मूर्ति०। बदला लेने के वास्ते !

जुमे०। तुम बदला क्या लोगे ? जब प्रेत हो तब तुम आदमी का कुछ करही नहीं सकते, बदला क्या लोगे ?

मूर्ति०। तुम क्या हमसे डरती नहीं हो ?

जुमे०। नहीं।

मूर्ति०। ऐसा ही करूंगा कि तुम डरोगी।

जुमे०। सो तुम से नहीं होगा।

मूर्ति०। ज़रूर होगा।

जुमे०। अच्छा होगा तो करो।

मूर्ति०। मैं अभी तेरी छाती का खून पीऊँगा।

जुमे०। अजी छाती का खून तो दूर रहा, तुम हमारा रोवां तक टेढ़ा नहीं कर सकते।

मूर्ति० । तू पिशाचिनी है ?

जुमे० । हां, मैं पिशाचिनी हूं भूत प्रेत का डर पिशाचिन को नहीं होता ।

मूर्ति ने कहा, "ख़बरदार जुमेला ! ख़बरदार !"

जुमे० । तुम आप ख़बरदार हो मैं गोली मारती हूं । भूत हो चाहे प्रेत हो, आदमी हो चाहे दानव हो, आज जुमेलिया के हाथ से बच के नहीं जा सकते । अब की गोली छाती में छेद करेगी ख़बरदार हो जाव; मरती बार राम राम बोलो ।"



सैंतीसवां बयान

अभिनय प्रारम्भ

जुमेलिया सी हिम्मतवाली स्त्री हमारे पाठकों में शायद ही किसी ने देखी हो। ऐसी हत्यारिनी मरदमारनी कहीं और हो गी या नहीं, सो कहते सन्देह होता है।

वह धृष्टा जुमेलिया इस समय मानो एक अपदेवता के आगे खड़ी है। उसके जी में विशद शंका हो रही है, जिसकी आभा उसके मुखमण्डल पर विराजमान है, तौ भी वह साहस के भरोसे शंका से युद्ध कर रही है। अब भी हाथ में पिस्तौल लिये साहस ही के भरोसे उस मूर्ति के आगे खड़ी है।

फिर उस मूर्त्ति की छाती ताक कर पिस्तौल की गोली छोड़ी; फिर फैर खाली गई। लेकिन फैरखाली जाने पर जुमेलिया खाली नहीं बैठ रही। अब की ललाट पर निशाना साध कर कहा— "अगर भूत हो तो जहां के तहां खड़े रहो बाल भर भी इधर उधर न हटो।"

जुमेलिया ने यह बात बड़े कर्कश स्वर से दांत पीस कर कही; फिर बोली, "अगर तुम सचमुच आदमी नहीं हो तो अब की फैर भी खाली जायगा। नहीं अगर आदमी हुए तो यह गोली ज़रूर तुमको भूत योनि में पहुंचा देगी।"

मूर्ति बोली, "क्या आज जैसे और कई भूत योनि में गये हैं, वैसेही क्या जुमेला?"



दूसरा फैर भी खाली गया । अबकी ललाट पर निशाना साध मनोरमा ने कहा, "भूत हो तो खड़े रहो, हिलो नहीं ।"

(पृष्ठ १६८)

जुमेलिया हो—ही—ही—हँस कर बोली—नहीं ठीक उनके ऐसा नहीं। क्योंकि मरने से पहले उनको मालूम नहीं हुआ कि वह मरेंगे, लेकिन तुम तो मरने से पहले अपनी मौत समझ रहे हो। साफ़ देखते ही हो कि तुम्हारी मौत हमारे पिस्तौल की नली से बाहर होना चाहती है।

मूर्ति बोली, "जुमेला थोड़ा और ठहरो।"

जुमेलिया ने कहा, "क्यों! ठहरूं किस वास्ते?"

मूर्ति०। मैं चाहता हूं कि अब की तुम अपना निशाना बहुत सँभाल के छोड़ो।

जुमे०। इसकी चिन्ता तुम मत करो। यह तुम्हें सिखलाने की ज़रूरत नहीं है।

मूर्ति०। तुमको जरूरत न सही लेकिन तुम्हारा निशाना खाली न जाय इसकी तद्बीर मैं करूँगा।

जुमे०। क्यों? इतनी दया करने का सबब क्या है? तुम्हे गोली का चोट से कुछ मज़ा मिलता है क्या!

मूर्ति०। हाँ मज़ा तो मिलताही है जुमेला! तुमने हमारी आत्मा को जहर की आग दी है। अब पिस्तौल की गोली की आग सहा रही हो। जुमेला! एक दिन तुम भी मरोगी तुम्हारी आत्मा को भी इसी तरह यन्त्रणा भोग करनी होगी।

"वाह तुम हमको डराते हो?" कह कर जुमेलिया हंसी।

मूर्ति०। हमको डराने की ताकत कहां है?"

जुमेला०। तो अब भी तुम भूत होने को ललाते हो?

मूर्ति० । ललाना क्या भूत तो हई हैं ।

जुमेला० । अच्छा तो अब खबरदार हो, अब की गोली हमारी खाली जायगी तो मै जांनूगी कि ज़रूर तुम भूत हो ।

मूर्ति० । कुछ परवाह नहीं छोड़ो गोली ! बोलो तैयार हो ?

जुमें० । हां तैयारही हूं ।

मूर्ति० । मैं नवीनचन्द्र डाक्टर हूं, इस बात पर तुम विश्वास नहीं करती ?

जुमे० । नहीं ।

मूर्ति० । तो मैं कौन हूं ।

जुमे० । मैं जानती नहीं कि तुम कौन हो ?

मूर्ति० । जुमेला ! इस वक्त यहां इस तरह कौन आ सकता है ? कौन तुम्हारे सब भेदों को जान सकता है ? जब तुम कुमो· दिनी की लाश एकटक देखती रही और फिर तुमने उसकी छाती में भुजाली घुसेड़ दी थी तब कौन तुमको देखता रहा होगा ? जब तुमने गोविन्दप्रसाद और तुलसीदास की लाश देख कर हहकार मारा था, तब कौन तुम्हारे सामने खड़ा होकर देखता था ? जुमेला, तुम्ही विचारो कि मैं कौन हूं ? सुनों मैं भूत हूं, मरा हुआ हूं, सब जगह जा सकता हूं । कहो अब भी विश्वास करती हो या नहीं ?

जुमे० । नहीं ।

मूर्ति० । तो मैं कौन हूं ?

जुमे० । इस जहान में एकही आदमी है जिसको मैं कुछ डरती हूं ।

मूर्ति०। वह कौन है ?

जुमे०। देवेन्द्रविजय।

इतना सुनते ही वह मूर्ति हंसी और फिर बोली, "तो क्या तुम हमको वही देवेन्द्रविजय समझती हो ?

जुमे०। तुम अगर वही हो तो हो सकते हो।

मूर्ति०। तो तुमको भरोसा ऐसा है या नहीं ?

जुमे०। नहीं।

मै भूत भी नहीं, देवेन्द्रविजय भी नहीं। तो खूब सँभल के गोली छोड़ो, घबराओ मत। खूब निशाना ताक कर पिस्तौल चलाओ। ऐसा नहीं हो तो मैं एक दो तीन कहता हूं ज्योंही मुंह से मेरे तीन निकले त्योंही गोली मारो।

जुमे०। अच्छा हां बोलो।

मूर्ति०। एक।

जुमेलिया ने पिस्तौल उस मूर्ति के ललाट की ओर लगाया।

मूर्ति बोली-- दो।

जुमेलिया ने ओठों को खूब जोर से चप्पी लगा कर ठीक मूर्ति के ललाट पर निशान रक्खा।

मूर्ति के मुंह से "तीन" निकलते ही जुमेलिया के पिस्तौल की गुड़ुम आवाज हुई। लेकिन वह मूर्ति अब भी जुमेलिया के सामने जैसी की तैसी खड़ी रही। मूर्ति पहले के समान मुसकुराती रही जुमेलिया उसकी ओर एकटक निहारती रही।

जुमेलिया ने स्थिर दृष्टि से उस प्रेत-मूर्ति की ओर देखा।

देखते-देखते उसके लिलाट पर पसीना चुहचुहा गया। चुपचाप बिना किसी तरह की कुछ आवाज किये और बिना चिल्लाये चीखे वह मूर्छित होकर वहीं गिर गई।

हम अपने पाठकों को यहां उस मूर्ति का परिचय देना चाहते हैं। वह मूर्ति सचमुच प्रवीण जासूस देवेन्द्र विजय ही है। जब ऊपर का किवाड़ धड़ाक से बन्द करके नीचे आये और जुमेलिया अपना नशा जमाने के लिये नीचे उतर कर बैठक में आई और वहां कमरे में शराब न पाकर पास के कमरे में घुसी जिसमे नवीनचन्द्र की लाश ज़मीन पर पड़ी थी। उसमें जाकर नवीन के लाश पर से परदा उठा लिया और उस लाश से कोट और पतलून उतार कर आप पहन लिया। नवीन के जेब में एक चश्मा था उसे लेकर अपनी नाक के ऊपर लगाया और मुखमण्डल पर काली लगा कर एक विकट रूप धारण किया। वह रूप देख कर बड़े साहसी और निर्भीक की भी धोती ढीली हो जाती। जुमेलिया अपना पिस्तौल निकाल कर मेज़ पर रख गई थी, उसको उठा कर देवेन्द्र ने देखा तो छः फैर गोली भरी थी; सब कारतूसों से गोली निकल कर फिर पिस्तौल में खाली बारूद का टोंटा लगा दिया। पिस्तौल फिर जैसा का तैसा मेज पर रख दिया; मेज पर रखते ही श्रीशचन्द्र वहाँ पहुंचा देवेन्द्र उसको देखते ही बाहर लाये और धीरे से पूछा—"मैंने जो काम कहा था सो सब कर डाला ?" श्रीशचन्द्र ने सिर हिला कर इशारे से हां कहा। तब देवेन्द्र ने नवीनडाक्टर को मुर्दा बता कर कहा

"इस मुर्दे को जलदी से उठा कर अभी ऊपर ले जाव। वहां बरण्डे के एक कोने में छिपा रखना।"

श्रीशचन्द्र ने तुरन्त देवेन्द्र का आज्ञा-पालन किया। और देवेन्द्र उसी कमरे में खड़े रहे। जब जुमेलिया शराब का पूरा नशा जमा कर ढलती-ढुलकती उस कमरे में आई थी और नवीन की लाश वहां न देख कर चौंकी थी, चौंककर धीरे से "नवीन" कहके पुकारा था तभी आड़ से निकल कर नवीन वेषधारी देवेन्द्र ने प्यारी कह कर नवीन कीसी आवाज़ में जवाब दिया था! उसी बिना गोली के कारतूत भरे पिस्तौल की फेर देवेन्द्र पर जुमेलिया इतनी देर तक करती आई, जिससे देवेन्द्र की कुछ हानि नहीं हुई।

जब सब फेर खाली गये और मूर्च्छित हो कर जुमेलिया ज़मीन पर गिर गई तब नवीन मूर्ति धारी देवेन्द्र विजय ने मौका पाया। उस कमरे से बाहर चल कर देखा तो दरवाजे पर फिर श्रीशचन्द्र खड़ा है। देवेन्द्र चट उसको लेकर वहां पहुचे जहां वह नवीन की लाश छिपा आया था और जल्दी से नवीन का वेष उतार कर उसकी लाश में पहना दिया और आप एक बनावटी वेष में रहे। फिर नवीन की लाश ले जाकर ठीक वहीं उसी तरह रख दीया जहां पहले से जिस ढंग से पड़ी थी और उसे उसी परदे से ढांक दिया जिससे जुमेलिया ने ढांक रखा था। इतना करके देवेन्द्र विजय आप आड़ में खड़े हो गये।



अड़तीसवां बयान

होश में

थोड़ी देर बाद जुमेलिया के होश में आने का लक्षण दीख पड़ा। पापिनी आँख खोल कर चारोंओर देखने लगी चट उसी पर्दे से ढके मुर्दे पर उसकी नज़र पड़ी। देखते ही सहम गई। साहस कर के उठी और पर्दे को मुर्दे पर से उठा कर अलग फेंक दिया। अब अकचका कर बोली,—"या परमेश्वर! मैं पागल हुई जाती हूं या अपने में अब तक थी? बाप रे बाप ऐसा गोलकधन्धारी का मामिला तो मैंने कभी नहीं देखा।"

इतना कह कर जुमेलिया ने लाश को खूब अच्छी तरह से देखा। फिर दो उंगली से छूतेही दो कदम पीछे हट गई। और चिल्ला कर बोली "अरे! बाप रे! यह तो मुरदा है। बिलकुल मरा हुआ है फिर अभी मेरे सामने खड़ा होकर बात कैसे करता था?" फिर धीरे से कहने लगी, "क्या सचमुच भूत हो गया क्या दादा!"

फिर चारों ओर देख कर बोली—"नहीं तबतो बड़ी अच्छी बात है भूत को मैं डरती ही क्या हूं। जीता जो मेरा बाल सीधा नहीं कर सकता, वह मर के क्या करेगा और भूत होके किया क्या?"

उसके बाद जुमेलिया बड़े गर्व से ठठाकर हँसी और आपही आप बोली—"अब जल्दी यहां से भाग चलना है! सबको

खतम करही चुकी। इस मुसलमान लौंडे करीमबक्स को भी मार डालती तो अच्छा होता। अच्छा, जाने दो बच गया तो बच जाय वह।"

इतने में जुमेलिया की नजर दरवाजे पर पड़ी देखा तो करीम बक्स खड़ा है।

चट जुमेलिया ने फिर वही पिस्तौल उठाया जिसके कई फैर एक बार खाली जा चुके थे। उसी से करीम पर भी फैर किया फिर फैर खाली गया। जुमेलिया ने पिस्तौल जमीन पर पटक दिया। और जिस किर्च से तुलसीदास के घर में देवेन्द्र पर चोट की थी उसी को लेकर करीम पर लपकी।

करीम उसी तरह बेडर खड़ा था। पाठकों को याद होगा, यह करीम प्रधान जासूस देवेन्द्रविजय का भाञ्जा वही शचीन्द्र है।

इस तरह निडर खड़ा देख जुमेलिया ने दांत पीसकर कहा "अरे तू कहां से आया रे?"

करीम०। अस्तबल से।

जुमेलिया०। यहां क्यों आया? क्या करने आया?

करीम०। उधर के जीने से चढ़ कर इसी पास के जीने से उतर आया।

जुमेलिया०। कब?

करीम०। तुम्हारे हत्या-उत्सव के आरम्भ ही में।

जुमेलिया०। आह! तब तू मुसलमान नहीं मालूम होता।

करीम०। नहीं।

जुमेलिया। तब तू कौन है ? जासूस है ?

करीम०। हां।

जुमेलिया०। कौन देवेन्द्रविजय ?

करीम०। नहीं।

जुमेलिया०। तू बड़ा पागल है जो यहाँ मरने आया ! तुझे मालूम नहीं कि आज यहां आकर कोई जीता नहीं लौट सकता ?

इतना सुन कर करीम हँसा। और हँसतेही हँसते कहने लगा—"तो फिर हमें क्यों नहीं मार डालती ? हत्या करने में तो तुम्हारा हाथ सधा ही हुआ है।"

जुमेलिया०। हां ठीक है, लेकिन अभी कुछ ठहरने का मौका है।

करीम०। तुम्हारे पास किर्च के सिवाय दूसरा तो हथियार ही नहीं है ?

जुमेलिया०। तुमने ऐसा ख़्याल कर रक्खा है ?सुनो देवेन्द्र-विजय जब ठीक समय आवेगा तब तुम ज़रूर हमारे ही हाथ से मरोगे। तुम एक पांव भी आगे नहीं जाने पावोगे कि तुम्हें मैं खतम कर डालूंगी।

करीम०। मैं तो तुमसे कह चुका कि मैं देवेन्द्रविजय नहीं हूं।

जुमेलिया०। वाह।

उसी वक्त—"मैं देवेन्द्रविजय हूं।" कहकर आड़ से खुद देवेन्द्रविजय सामने आ गये। जुमेलिया पहले तो बहुत चौंकी फिर सम्हलकर बोली—"कुछ परवाह नहीं। हा तो क्या हुआ ! नुकसान क्या है ?"

देवेन्द्र० । नुकसान क्या ? तुम हमारे असामी हो ।

जुमेलिया । कौन कहता है ? कैसे मैं असामी हूं ?

देवेन्द्र० । मैं कहता हूं ।

जुमेलिया० । नहीं देवेन्द्र तुम झूठ बोलते हो ।

देवेन्द्र० । अब तुम हमारे हाथ से नहीं निकल सकती चाहे कुछ हो ।

जुमेलिया० । कौन कहता है नहीं निकल सकती, अभी चली जा सकती हूं, तुम किस गली के प्यादे हो, तुम भला हमको क्या पकड़ोगे ?

देवेन्द्र० । नहीं जुमेला आज की रात अब नहीं निकल सकोगी ।

जुमेलिया० । आज ही रात को इसी दम भाग जाऊंगी देवेन्द्र ! ऐसा कोई जासूस हो नहीं जो जुमेलिया को गिरफ्तार करे । ऐसा कोई कैदखाना हो नहीं जिसमें जुमेलिया कैद हो ।

देवेन्द्र० । जुमेला ! तुमने शिबू को क्या किया ?

जुमेलिया० । कौन शिबू ?

देवेन्द्र० । हां, उसको तो तुम खूब जानती हो ।

जुमेलिया० । नहीं मेरी याददाश्त बहुत खराब हो रही है !

देवेन्द्र० । उसको भी तूने मार डाला ?

जुमेलिया० । मेरी ज़बान पर तुम विश्वास करोगे ?

देवेन्द्र० । हां ।

जुमेलिया० । नहीं, वह मरा नहीं ।

देवेन्द्र० । अब वह कहां है ?

जुमेलिया। कहां है? ऐसी जगह में है कि उसको मैं न छोड़ूं तो जहां का तहां खाने ही बिना सूखकर मर जायगा।

देवेन्द्र०। मैं उसको ढूंढ़ के निकाल लूंगा।

जुमेलिया०। तुम नहीं पा सकोगे।

देवेन्द्र०। मैं कोशिश करके देखूंगा।

जुमेलिया०। मेहनत बेकार जायगी।

देवे०। देवेन्द्रविजय की मेहनत कभी बेकार नहीं गई।

जुमे०। तुम अपनी स्त्री का हाल क्यों नहीं पूछते?

देवे०। ज़रूरत नहीं है?

जुमे०। क्यों उसको तुम पा गये?

देवे०। हां।

जुमे०। अरे बापरे! तब तो तुमने आफ़त की, उसको तुमने खूब पहचान लिया?

देवे०। क्यों न पहचान लूंगा?

जुमे०। तुम्हारी स्त्री तो मर गई।

देवे०। नहीं जुमेला! तुम भूलती हो।

जुमे०। वही मैं जो कहती हूं।

देवे०। मैं भी तो कहता हूं वह जीता-जागती है।

जुमे। तुम झूठ कहते हो।

देवेन्द्रविजय ने उसका जवाब न देकर मुंह पीछे फेरा और जोर से पुकारा, "रेवती"।

पुकारते ही रेवती उस कमरे के दर्वाज़े पर आ खड़ी हुई।

रेवती को देखकर जुमेलिया चौंक उठी और दो कदम पीछे हटकर खड़ी हुई।

जुमेलिया की अकल मारी गई, मुंह से बात नहीं कह सकी। फिर थोड़ी देर बाद सँभलकर कहने लगी, "शाबाश देवेन्द्रविजय शाबाश! सचमुच तुम मुर्दों को जिलाने का कोई मन्त्र जानते हो!"

देवेन्द्र ने कहा, "हां, खास कर ऐसे मामिले में।"

जुमेलिया ने नवीन की लाश को इशारा करके पूछा, "यह आदमी मर गया या जीता है?"

देवेन्द्र ने कहा, "जीता नहीं मर गया है।"

जुमेलिया कहने लगी, "भला तो तुम्हारी बातों से हमको बहुत सन्तोष हुआ। सचमुच तुम्हारी स्त्री तो जीती है; भला मनोरमा का क्या हाल है? वह भी जीती है?

देवे०। तुम भी अब मंजूर करती हो कि उसका नाम मनोरमा है।

जुमे०। अब मंजूर न करने से लाभ क्या है?

देवे०। कुछ नहीं।

जुमे०। वह जीती है?

देवे०। हां।

जुमे०। कुमोदिनी?

देवे०। वह तो मर गई।

जुमे०। तो समझ गई। जिस जिसको बचाना मंजूर था, उसको बचा लिया है, जिसको बचाना मंजूर नही था, उसको मरने दिया है।

देवेन्द्र ने कुछ जवाब नहीं दिया; फिर जुमेलिया बोली, "इसी वक्त तुमने तो इन सब खूनों का जुर्म मुझपर डालने की सोच ली होगी ?

देवे० । जरूर ।

जुमे० । कैसे ?

देवे० । मैंने खुद देखा हैं । तुमने इसको (नवीन की लाश बताकर) मारा है और गोविन्दप्रसाद और तुलसीदास का तुमने खून किया है, इसका बहुत सा प्रमाण हमारे पास है ।

जुमे० । देवेन्द्र ! तुम बिलकुल नासमझ की तरह बात करते हो।

देवे० । कैसे ?

जुमे० । क्या प्रमाण है कहो ?

देवे० । प्रमाण हमारी दोनो आंखें हैं, इन्होंने खुद तुम्हारी सब लीला देखी है ।

जुमे० । मैं इनकार करूंगी ।

देवे० । मेरी आँखों के देखने से तुम्हारा इनकार झूठा समझा जायगा ।

जुमे० । सच ?

देवे० । हां सच ।

जुमे० । तुम्हारी आँख का देखना कुछ काम नही आवेगा, न जहर का कुछ निशान मिलेगा । किसी तरह की चोट का निशान भी नही पाओगे । जो कुछ चोट मिलेगी सो केवल कुमोनिनी की लाश में मिलेगी एक रात को केवल एक ही घर में इतने

आदमियों का मरना केवल दैवी घटना समझी जायगी। दैवी रोग से मरना सब लोग जानेंगे।

देवे०। किस रोग से?

कुमे०। मृगी रोग से।

देवे०। हां, इसी मिरगी के बहाने तुम बहुत लोगों का खून करती आती तो हो, लेकिन अब वह बात नहीं चलेगी।



उनतालीसवां बयान

पात।ल प्रवेश

जुमेलिया करीम पर लपकते समय बीच मकान में आकर जहां खड़ी हुई थी वहीं ठीक खड़ी रही। इतनी देर में वहां से इधर-उधर कुछ भी नहीं हटी।

दो विकट वैरियों के सामने भी जुमेलिया निर्भय रूप से उस कमरे में खड़ी थी। उसके चेहरे पर कुछ भी भय का चिन्ह नहीं था।

देवेन्द्रविजय ने जुमेलिया का वह भाव देखकर मन में समझा कि वह केवल इसी भरोसे निर्भय खड़ी है कि वह आत्मघात कर डालेगी। लेकिन जुमेलिया के निर्भय होने का एक और गुप्त कारण है जो थोड़ी देर में प्रगट हो जायगा। हम समझते हैं, देवेन्द्रविजय को वह भेद मालूम नहीं था। अगर मालूम होता तो थोड़ी ही देर में जो घटना घटी वह कदापि नहीं घटती और हम अपने उपन्यास का यहीं उपसंहार लिखकर समाप्त कर देते जुमेलिया मुस्कुरा कर बोली, "अब हम लागों को बेफायदा बात करते बहुत देर हो गई, क्यों?"

देवेन्द्र ने जवाब में कहा, "हां।"

जुमे०। क्यों देवेन्द्र! तुम हमको गिरफ्तार करने के वास्ते तैयार हो?

देवे०। हां तैयार हैं और समय भी आ गया है।

जुमे० । तो क्या तुम हमारे हाथ में हथकड़ी डालोगे ?

देवे । हां तुमको एक जोड़ा लौह-कङ्कण उपहार देने की मुझे बड़ी इच्छा है ।

जुमे० । लौह-कंकण ? हथकड़ी स्त्री के हाथ में हथकड़ी भरोगे ?

देव० । स्त्री के हाथ में नहीं पिशाचिन के हाथ में ।

"अच्छा अगर ताकत है तो लो डालो हथकड़ी", इतना कहते कहते जुमेलिया ने अपना हाथ दिखाया और हाथ दिखाते ही एक ऐसी घटना हुई कि देवेंद्र की आंखों को चकचौंधी लग गई । वह अपना हाथ दिखाती हुई अन्तिम बात पूरा करने के साथ ही जहां खड़ी थी वहीं की वहीं ऐसी ग़ायब हुई जैसे पाताल में चली गई ।

चालीसवां बयान

फिर पताल प्रवेश

जुमेलिया के ग़ायब होते समय दो बार घुडुम-घुड्डुम करके आवाज़ हुई। देवेन्द्रविजय को आवाज़ साफ़ सुनाई दी। इसके बाद देवेन्द्रविजय वहां आये जहां जुमेलिया ग़ायब हुई थी। स्थिर दृष्टि से देखने पर बीच कमरे में एक हाथ लम्बा और उतना ही चौड़ा एक गुप्त द्वार मिला वहीं जांघ के बल बैठ गये। द्वार के पास ही एक स्प्रिङ्ग था। दो तीन बार घुमाकर ज़रा सा दबाने पर झटके से खुला भीतर देवेन्द्र ने देखा तो बिलकुल अन्धेरा था; उतरने को कुछ ज़ीना आदि नहीं दीख पड़ा।

तब श्रीशचन्द्र को देवेन्द्र ने पास बुलाया, उसके पास आने पर कहा, "श्रीश! खिदिरपुर में जहां नाव में गङ्गा पार होते हैं तुमने देखा है, इसी दम तुम दौड़कर वहां पहुंचो अगर यह हत्या-रिनी वहां मिले तो तुरन्त उसे हथियार रख देने को कहो। उसके पास अब वही किर्च भर हैं अगर तुम्हारा कहना नहीं माने तो उसे मारना अगर तुम्हारी बात मानी जाय तो हमारे आने तक उसे वहीं ठहराना।"

श्रीश०। बहुत अच्छा।

देवे०। तुम अभी चले जाव, देर मत करो, दौड़ जाव।

श्रीशचन्द्र जल्दी से रवाना हुआ। देवेन्द्र ने शचीन्द्र को पुकारा। शचीन्द्र भी दर्वाजे ही पर खड़ा था। चट सामने आ

गया। देवेन्द्र ने कहा "तुम अपनी मामी और मनोरमा के पास रहो। मैं जब तक लौट के नहीं आऊँ कहीं जाना मत।"

इतना कहकर देवेन्द्रविजय भी जुमेलिया की तरह उसी अन्धकूप में ग़ायब हो गये।



इकतालीसवां बयान

अन्धकूप

देवेन्द्रविजय लगभग आठ हाथ नीचे जा पड़े। पांव में कुछ भी चोट नहीं आई। जहां ज़मीन से उनका पांव लगा वहां रूई का एक लम्बा चौड़ा गद्दा बिछा था।

वहां देवेन्द्र को ऐसा मालूम हुआ जैसे पातालपुरी में पहुंच गये। वहां बिलकुल अन्धेरा था। कहीं किसी सूराख से भी सरसो भर रोशनी आने की जगह नहीं थी। उस अन्धकार से बाहर जाने की राह ढूढ़ने के लिये अपने पास की उन्होंने गुप्त लालटेन निकाली। उसका द्वार खोलते ही भक से रोशनी हो गई। अब उजियाले में देवेन्द्रविजय ने देखा तो बाहर आने का कहीं रास्ता नज़र नहीं आया। चारो ओर बिना दरार की दीवार खड़ी थी; हवा आने के लिये भी किसी ओर कोई खिड़की या झरोखा नहीं था।

जुमेलिया वहां भी नहीं मिली। देवेन्द्रविजय मन में सोचने लगे कि अब वह गई ? तो कहां गई और कैसे गई जब वह यहां से चली गई तो इस अन्धकूप से बाहर जाने को कोई न कोई रास्ता ज़रूर है।

देवेन्द्रविजय ने लालटेन हाथ में लेकर अन्धकूप को खूब अच्छी तरह देखा लेकिन खिड़की दरवाज़ा दरार तो दूर रहा उसमें कहीं सरसों भर भी सांस नज़र नहीं आई। इसी ढूंढ़ खोज में

कई मिनिट बीत गये। खोजते-खोजने और कुछ नहीं लेकिन एक सन्दूक पड़ी मिली, उसको उठाने लगे, लेकिन उठा नहीं सके। तब जोर से उसपर लात मारना शुरू किया कई बार धक्का मारने पर सन्दूक का कब्जा टूट गया। भीतर रोशनी से देखा तो उसमें और कुछ नहीं ऊपर जाने को ज़ीना बना हुआ है। देवेन्द्रविजय उसी के अन्दर घुसे और सीढ़ी से होकर ऊपर चढ़ गये। ऊपर जाने पर निर्मल आकाश नज़र आया। रात सुनसान थी। देवेन्द्र-विजय जल्दी से ज़ीना तै करके आंगन में पहुंचे।

आंगन में मिनट भर खड़े होकर देवेन्द्रविजय ने विचारा कि जुमेलिया किस राह से गई है; फिर चट गङ्गा की ओर पांव उठा कर जल्दी-जल्दी रवाना हुए रास्ते में जासूस देवेन्द्र ने विचारा कि "अगर थोड़ी देर भी श्रीशचन्द्र उस पिशाचिनी को रोक सका तो मैं ठीक समय पर पहुंच जाऊँगा।" यही मन में स्थिर करके देवेन्द्रविजय तेज़ी से चलते हुए।

बयालीसवां बयान

गङ्गा की धार में

आकाश स्वच्छ हो गया। तारे साफ़ चमकने लगे। कृष्णा-सप्तमी का खण्डित चन्द्र क्षितिज के ऊपर ज्योतिहीन होने लगा।

जासूस देवेन्द्र विजय गङ्गातट पर पहुंचे। वहां देखा तो एक भी नाव घाट पर नहीं नज़र आई। बांई ओर थोड़ी दूर पर जल में "झप" "झप" की आवाज़ सुनाई देने लगी जिधर से आवाज़ आई देवेन्द्र उसी ओर चले। कुछ दूर जाने पर उनको सुनाई दिया मानो कोई कह रहा है, "अरे दौड़ो रे! बचाओ। बचाओ! जल्दी बचाओ।"

देवेन्द्र ने आवाज़ से पहचाना कि यह बोली श्रीशचन्द्र की सी थी। थोड़ी ही देर बाद उधर से जुमेलिया की हँसी सुनाई दी।

बात क्या थी सो देवेन्द्रविजय अनुमान से समझ गये। और मनही मन सोचने लगे, "डाकिनी ने बालक श्रीशचन्द्र को अपने हाथ में कर लिया। मैं भी भूल गया श्रीश के बदले यहां अगर शचीन्द्र को भेजता तो बहुत अच्छा होता।"

अब देवेन्द्रविजय ज़ोर से दौड़ने लगे। दौड़ते दौड़ते एक नाव देखने में आई। देवेन्द्र ने देखा वह नाव किनारे से लगभग सौ हाथ , र अथाह जल में चली जा रही है। देवेन्द्र ज़ोर से पुकार कर कहने लगे, "बस करो बस! नाव किनारे लावो नहीं हम अभी गोली मारते हैं।"

इसके जवाब में देवेन्द्रविजय को ठहाके की हंसी सुनाई दी। जब से पिस्तौल निकाल कर देवेन्द्र ने जुमेलिया की ओर निशाना साधा। लेकिन चतुरा जुमेलिया ने देवेन्द्रबाबू की गोली रोकने के लिये जो ढाल उठाई वह बड़ी ही चमत्कार थी। गोली रोकने के लिये हाथ पांव बँधे श्रीशचन्द्र ही की आड़ ली। श्रीशचन्द्र जीता था अपने को छुड़ाने के लिये उसने बहुत कुछ इधर—उधर किया लेकिन वश नहीं चला। अब सचमुच वह जुमेलिया की ढाल का काम कर गया।

दिन होता तो देवेन्द्रविजय गोली मार सकते थे, लेकिन रात होने के कारण श्रीशचन्द्र को गोली लगने के डर से उनको गोली छोड़ने का साहस नहीं हुआ।

देवेन्द्र ने मनही मन कहा—"जुमेलिया कोई सहज स्त्री नहीं है। डांकिनियों के हृदय में जो शक्ति चाहिये वह जुमेलिया में मौजूद है। मैं कितना ही तद्बीर करूं वह ज़रूर भाग जायगी।

इतने में श्रीशचन्द्र ने जोर से कहा, "गोली मारिये गोली।"

इसके बाद जुमेलिया ने श्रीशचन्द्र को और ऊपर उठाकर आड़ लिया, और झटकार कर गंगा में दूर फेक दिया, आप नाव में ही छिप गई। नाव धार की ओर बहने लगी।

देवेन्द्रविजय ने जुमेलिया को पकड़ने की कोई तद्बीर न देख-श्रीशचन्द्र को बचाने के लिये गंगा में कूद पड़े।



तैंतालीसवां बयान

गङ्गातट

बड़ी मिहनत से देवेन्द्रविजय श्रीशश्चन्द्र को पकड़ कर किनारे आये उधर नाव नज़रों से ग़ायब हो गई। किनारे आने पर देखा तो श्रीशचन्द्र बेहोश था, पेट दूह कर पानी बाहर करने पर उसे होश हुआ। जब श्रीशचन्द्र ने आँखे खोली तब देवेन्द्र ने पूछा--"क्यों श्रीश ! क्या हुआ हाल तो बतलाओ।"

श्रीशचन्द्र ने कहा "मैं इधर-उधर ताकता हुआ जब इस झोपड़े के पास पहुंचा और ज्योंही आगे बढ़ा इसी में से निकलकर जुमेलिया ने हमारे सिर पर ऐशी चोट दी कि मैं गिर गया तब मेरा हाथ-पांव बांध कर नाव पर रख लिया। बाबूजी ! वह बड़ी हत्यारिनी है।"

देवे०। हां श्रीश ! जुमेलिया बहुत ही कठिन स्त्री है ! तुम तो बालक हो हमको उसने हैरान कर डाला ! ऐसी स्त्री हमने कभी नहीं देखी। मैं पहले नहीं जानता था कि इस स्त्री में इतनी बुद्धि और इतनी ताकत होगी।

* * * * *

निराश होकर देवेन्द्रविजय श्रीशचन्द्र को साथ लिये हुए आनन्दकुटीर में आये। वहां उनके कहे अनुसार शचीन्द्र, रेवती और मनोरमा सब उनकी राह देखते थे।

इस प्राचीन अट्टालिका आनन्दकुटीर के सम्बन्ध में अनेक

गुप्त भेद जुमेलिया से अधिक मनोरमा को मालूम हैं। जुमेलिया जिस राह से भागी वह मनोरमा से छिपी नहीं है। वह इस रास्ते का हाल अच्छी तरह जानती है। आनन्दकुटीर के सभी रहनेवाले इस गुप्त द्वार की बात जानते थे, लेकिन किस लिये यह बनाया गया था सो कोई नहीं जानता था, मनोरमा को भी इसका कारण मालूम नहीं है।

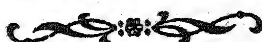
मनोरमा ने अब उसका अव्यवहारार्थ समझ कर लोहे की कील से बन्द कर दिया, लेकिन मौके पर काम आने के विचार से जुमेलिया ने उसको खोल रक्खा था। आज वही दरवाज़ा उसके काम आया।

मनोरमा की सहायता से देवेन्द्रविजय अपने नौकर शिबू को गुप्त कैदखाने से बाहर कर लाये। भूख के मारे शिबू अधमरा हो गया था। शरीर सूख गया था। आंख खोंढ़रा गई थी। मुखमंडल पर कालिमा छा गई थी।

देवेन्द्रविजय का काम अभी पूरा नहीं हुआ। मनोरमा की सम्पति लेकर जुमेलिया भाग गई है, उसको गिरफ्तार करना देवेन्द्रविजय का काम है।

* * * * *

सबेरे देवेन्द्रविजय सबको लेकर अपने मकान को लौटे। आते समय आलमारी से "१७ क" वाला पुलिन्दा अपने साथ लेते आये। उस समय उसकी कुछ भी बात किसी से जाहिर नहीं की।



चौवालीसवां बयान

जुमेलिया की चीठी

दूसरे दिन सबेरे देवेन्द्रविजय बाहरी दालान में बैठकर कुछ सोच रहे थे। दाहिने हाथ से सिर के ललाट तक लटकते हुए बालों को धर कर नोंचते और खींचते थे कि इतने में शचीन्द्र वहां आ पहुंचा।

"शचीन्द्र! वह डाकिनो तो हमारा सामना करने के लिये तैयार हुई है।" कहकर देवेन्द्रविजय शचीन्द्र की ओर देखने लगे। शचीन्द्र ने कहा--"क्या हुआ?"

"यह देखो।" कहकर शचीन्द्र के आगे देवेन्द्र ने एक चीठी फेंक दी। उसके ऊपर ही मोटे अक्षरों में लिखा था--जुमेलिया रहेगी या देवेन्द्र रहेगा" इसके बाद लिखा था।

"देवेन्द्रविजय! हम तुम दोनों दुनियां में नहीं रह सकते। चीठी पर जो मोटे अक्षर में लिखा है उसमें पहला लिखा हुआ ही रहेगा बाकी नहीं रहेगा अर्थात् जगत से जासूस देवेन्द्र उठ जायगा मैं हो तुम्हारा खून करूंगी।

"खून तो करूंगी लेकिन जल्दी नहीं करूंगी। जिन लोगों को तुम प्यार करते हो जिन पर तुम्हारा अधिक स्नेह है, उन्हीं का पहले खून करूंगी। ताकि तुमको उसकी चोट लगे। तभी मेरे मन की साध मिटेगी तभी मेरा मनोरथ सफल होगा। पहले मैंने तुम्हारी स्त्री को मार डालने का पक्का इरादा किया है।

"तुम आज ही से मुझे याद रक्खो। मैं तुम्हें सहज नेवाली नहीं हूं। तुम्हें ख़ूब जला कर, ख़ूब सता कर, ख़ूब दुखा कर तो छोड़ूंगी! तुम्हारे ऐसे जासूसों को मैं बाज़ार में बेंचने का हौसला रखती हूं। तुमको तो मैं चुटकी बजाते हुए उड़ा ले सकती हूं।

"तुमने हमको इतनी बड़ी सम्पति से दूर किया है; कुछ थोड़े से नगद रुपये भर मेरे हाथ लगे हैं; इन्ही से तुम्हारी और तुम्हारे घर वाली का काम तमाम करूंगी। तुमने मनोरमा को हमारे सिंहासन पर बैठाया है तो बिठाओ और देखो कि इसका फल क्या होता है।

"मैंने तुम्हारे तीन बैरियों की हत्या की तब तुमने कुछ सांस नहीं ली। हो तुम बड़े चतुर, लेकिन अब मैं ने जिस काम के लिये हाथ उठाया है, वह तुम्हारा ख़ून करना है। पहले मैं तुमसे साधारण घृणा करती थी, लेकिन अब इन कामों के बाद तुमसे विशेष घृणा करती हूं। पहले मैं रुपया जमा करने के लिये प्रण किये थी, अब कई ख़ून करने के लिये प्रण करती हूं। उनमें से तुम्हारा ख़ून करना प्रधान है।

"देवेन्द्र याद रक्खो। जुमेलिया का प्रण कभी विफल नहीं हुआ होगा। कई ख़ून का मतलब अगर तुमने नहीं समझा है तो मैं साफ़ कह देती हूं; एक तुम्हारा, एक तुम्हारी स्त्री का और एक तुम्हारे भान्जे का। ख़बरदार रहना सबसे पीछे तुम्हारा ख़ून करूंगी।

"यह भी याद रक्खो प्रण पूरा करने के लिये मेरे पास उपाय बहुत हैं। तुम मेरी खोज में हैरान मत होना क्योंकि मुझे पआगे नहीं। अगर मेरा पीछा करोगे तो मुझसे छिपा नहीं रहेगा। अब की पहला शिकार तुम्हारी स्त्री है; याद रक्खो।

"जब तुम्हें मैं अपने हाथ में कर लूंगी, तब जानते हो क्या करूंगी ? एक दम तुमको मार नहीं डालूंगी। ख़ूब तकलीफ़ देकर तो मारूंगी, तुम्हारी दोनों आंखें निकाल लूंगी, कान दोनों जड़ से काट लूंगी फिर लोहे का छड़ लाल करके तुम्हें दागूंगी तुम तड़प-तड़प कर मरोगे। तभी मेरी साध पूरी हो, तभी मेरा मन भरेगा, तभी मेरा नाम जुमेलिया श्रीमती जुमेलिया। आह उस वक्त कैसा मज़ा होगा ! इन बातों को जब विचारती हूं तब मेरा मन आनन्द के मारे नाच उठता है। अब मैंने जो विचारा है सो सब ज़ाहिर कर दिया; तुम्हीं विचारो मैंने कैसा सोचा है ! यह सब सोचनाही नहीं समझो सब एक एक करके पूरा करूंगी तब मेरा नाम जुमेलिया, नहीं तो नहीं।

जुमेलिया।"

चीठी पढ़कर शचीन्द्र बोला, "हां साहब यह ढिठाई तो बहुत कर रही है।"

देवेन्द्र ने पूछा, "चीठी पढ़कर तुमने क्या समझा ?"

शची०। समझूं क्या ढंग अच्छा नहीं है।

देवेन्द्र ०। हमको तो ढंग बहुत अच्छा मालूम देता है। अबकी उसको मैं ज़रूर गिरफ्तार करूंगा।

शची०। हां, लेकिन करने से कहना सहज हैं।

देवेन्द्र०। अब की वह ज़रूर पकड़ी जायगी।

शची०। आपकी बात से अब हमको हँसी आती है।

देवेन्द्र०। यह बात सही है कि जुमेलिया बड़ी चालांक है। वह हमलोगों की तद्बीर सब रद्द करने की कोशिश करेगी। लेकिन देखेंगे हम भी उसको; भला तुमने चीठी पढ़कर कुछ और भी समझा है ?

शचीन्द्र०। न, मैंने तो कुछ नहीं समझा।

देवेन्द्र०। हमारे मन में तो एक सन्देह हुआ है।

शचीन्द्र०। क्या ? कहिये।

देवेन्द्र०। मैं समझता हूं, वह इस वक्त इसी महल्ले में कहीं है।

शचीन्द्र०। आप ऐसा सन्देह करते हैं ?

देवेन्द्र०। हां, हमको ऐसा ही मालूम होता है।

शचीन्द्र०। अब इस समय क्या कीजियेगा ?

देवेन्द्र०। उसी को खोजना चाहिये।

शचीवेन्द्र०। मैं तो तैयार हूं।

देवे०। अच्छा एक ओर से तुम चलो दूसरी ओर से मैं जाता हूं। लेकिन याद रक्खो कि खाली घूमने से काम नहीं होगा। अब की वह वेष बदले हुए होगी, हम समझते हैं यातो बुढ़िया के वेष में होगी या......

शचीन्द्र०। बुढ़िया बनी होगी कि बूढ़ा ?

देवेन्द्र०। हां ठीक कहा, अब उसने मर्द का रूप बनाया होगा।

तुम खूब होशयारी से रहना । बालीगंज की ओर तुम जाओ और मैं बकुलबगान बेलतला की ओर जाता हूं।"

शचीन्द्र और कुछ न कहकर अपने ड्रेसिङ्गरूम (सज्जागृह) में गया और थोड़ी देर में एक खासा गुण्डा बनकर बाहर आया; माथे पर अलबर्ट फैशन के काले बालों का गुच्छा, हाथ में लपलपाती हुई बघमुंही छड़ी, मुंह में बहादुर कम्पनी का चमकदार चुरुट, कमर में फरसडांग की फरफराती हुई काली किनारी की धोती, बदन में कड़ाकेदार कफ और प्लेटवाला कमीज़, कमीज़ में पन्ना सोना का झलकदार बुताम, जेब में सोने की भड़कदार चेनवाली घड़ी और उंगुली में बहुमूल्य हीरे की अंगूठी, देखते ही बनती थी। सारे बदन से आटोडीरोज़ की चहुंओर व्यापी सुगन्धि महमहा रही थी।



पैंतालीसवाँ बयान



उसके बाद देवेन्द्रविजय भी एक देहाती बनकर बाहर निकले। पहले बराबर सुर बांध बकुलबगान को चले गये, वहां से बेलतला पहुँचे। बेलतले में कुछ पता नहीं चला। जब बेलतले का रास्ता छोड़ दक्षिण की ओरवाले एक रास्ते की मोड़ पर पहुंचे तब देखा कि एक पालकी गाड़ी हजारा के रास्ते को जा रही है। देवेन्द्रविजय उस गाड़ी के पीछे धीरे से बैठ गये। जिस वेष में थे उस वेश में उनको इस काम के करते कुछ शरम नहीं आई।

गाड़ी हजारा का रास्ता ते करके धीरे-धीरे चलने लगी; जब देवेन्द्र ने समझ लिया कि अब यह गाड़ी अपने अभीष्ट स्थान के पास आगई है, वह उतर पड़े। गाड़ी धीरे-धीरे चलकर एक बगान के फाटक पर जा खड़ी हुई। एक सवार उसमें से उतर पड़ा, देखने में खासा जवान जण्टलमेन था। पोशाक की आब ताब भी पूरे नवयुवक की थी। गाड़ी से उतरते ही दो एक बार इधर-उधर देख कर बगान के अन्दर गया। अन्दाज़ से वह इक्कीस बाइस बरस का जान पड़ता था।



छियालीसवां बयान

मोदीकी दूकान

देवेन्द्रविजय आगे न जाकर पासवाली एक मोदी की दूकान पर जा बैठे। मोदी उस समय झूम-झूम कर रामायण पढ़ रहा था—

आगे चले बहुरि रघुराई। ऋषिमुख पर्वत गये नियराई॥
तहँ रहे सचिव सहित सुग्रीवां। आवत देखि अतुलबलसींवा॥

इतना कहके देवेन्द्रविजय को देख रुक गया और पूछा, "क्या चाहिये महराज।"

देहाती—ब्राह्मण वेषधारी देवेन्द्र ने कहा, "भाई एक पैसे का ओखड़ा * मूरही दे दो बड़ी प्यास लगी है।"

मोदी ने उठकर एक दोने में ओखड़ा मूरही दी। देवेन्द्र दूकान में चौका पर बैठ कर खाने लगे। दूकानदार फिर रामायण के पास जा बैठा, लेकिन आगे की चौपाई बोलने के पहले ही अपने बेटे सुमिरना को पुकार कर कहा—"अरे सुमिरना एक लोटा पानी दे आरे।"

भीतर से स्त्री ने जवाब दिया, "सुमिरना पढ़ने गया है।"

---

* धान का लावा गुड़ में पाग के ओखड़ा बनाते हैं और उबाले हुए धान को नमक मिला के भूंजते हैं उसको मूरही कहते हैं, जैसे अमीरों में पेड़ा जलेबी खाकर पानी पाने का रिवाज़ है वैसे ही ग़रीब ओखड़ा मूरही खाकर पानी पीते हैं।

अब मोदीराम क्या करें। खुद उठकर भीतर गये और लोटे में पानी लाकर देवेन्द्र के आगे रख दिया। देवेन्द्रविजय ने थोड़ी देर बाद मोदी से पूछा, "यहां बोस बाबू का बगान किधर है जानते हो ?"

मोदी ने भौंहों को ललाट तक चढ़ा कर कहा, "ए! बोस बाबू का बगान इधर कहां है ?" जिस बगान में वह जवान गाड़ी से उतर कर गया था उसको दिखा कर देवेन्द्र ने कहा, "वह बगान किसका है ?"

मो०। यह तो मित्तर बाबू का है।

देवेन्द्र०। मालिक का नाम जानते हो ?

मो०। मालिक का नाम तो नहीं जानते; क्यों ?

देवेन्द्र०। अरे भाई! हमलोग माली हैं। फल—फूल लगाने और बाग–बगीचा का रोजगार करते हैं। एक बाबू ने हमको यहीं मिलने के वास्ते कहा था। उनको कुछ फल फूलों के गाछ चाहिएं। उन्होंने अपने बगान का जो पता—निशान बतलया था उस से मालूम होता है कि बगान यही है। ठीक ऐसा ही फाटक बतलाया था। तुमने बगान के मालिक को देखा हैं ?

मोदी०। हां देखा तो है। नाम नहीं जानता। जात के मुसलमान हैं। लेकिन कपड़ा बंगाली का पहनते हैं चेहरा भी बड़ा सुन्दर है, बड़े शौकीन आदमी हैं। उमर में भी अभी लड़के ही हैं। मोछ निकलती आती हैं।

देवे०। हां, हां! ठीक वहीं है। यहीं रहते हैं ?

मोदी० । नहीं ! कभी--कभी आते हैं, लेकिन जिस दिन आते हैं उस दिन बड़ा मेला लग जाता है । दो तीन यहूदी रण्डियों को बुलाते हैं । दो चार यार भी आते हैं । गाना बजाना होता है । फिर रात ही रात सब चले जाते हैं । बिलायती बराण्डी का जो बड़ा बड़ा सादा बोतल खाली होता है वह मुलिया की माँ हमारे हाथ बेच जाती है ।

देवे० । मुलिया की मां कौन ?

मदी० । मुलिया की मां इसी बगान की लौंडी है । घर को देख—रेख का भार उसी पर रहता है ! वह तो हमारे ही देश की रहने वाली है ।

देवे० । मुलिया उसी लड़की का नाम है ?

मोदि० । हाँ मुलकरनियां नाम है ।

देवे० । वह लड़की कहां रहती है ।

मोदी० । वह देश में है !

देवे० । कौन देश ?

मोदी० । मकान जमनियां में है ।

देवे० । ग़ाज़ीपुर जमनियां ?

मोदी० । हां वही गाजीपुर जमनियां ।

अब देवेन्द्रविजय ओखड़ा मूरही का पैसा मोदी को चुका कर उसी बगान, की ओर चलते हुए ।



सैंतालीसवां बयान

बंसी तिवारी

फाटक के भीतर जाकर देवेन्द्र विजय ने बाँई ओर एक कच्चा मकान देखा। उसमें मुलिया की माँ रसोई बना रही थी। देवेन्द्र विजय एक दम सुर बाँधे रसोई घर के चौखट तक चले गये और सामने खड़े होकर बोले, "काहे हो मुलिया की मां ! का कर रही हो ?"

मुलिया की मां चौंक कर उनकी ओर देखने लगी। और अकचका कर कहने लगी, "के है हो ! के है ?"

देवेन्द्र ने जबाब दिया, "हमें पहचानती नहीं हो हम बंसीतिवारी न हैं।"

मु० मां०। बंसी तिवारी ! होंगे बंसी तिवारी।

देवे०। पहचानती नहीं हो ?

मु० मां०। पहचानी कहां से, बंसी तिवारी तो मोरे पहचान के कोई कहीं नहीं हैं। हमको तो बंसी तिवारी की याद नहीं आती।

देवे०। याद कैसे आवे। देश छोड़ के चली आयी। यहां चार पैसा कमाने से तुम्हारी आँख उलट गयी अब गाँव देश के आदमी को कहां पहचानेगी।

मुलिया की मां झनक कर बोली, "अच्छा जाव--जाव चलो यहां से, आँख उलट जाने दो मैं बंसी ओंसी कोई नहीं जानती।"

देवे०। बड़ी बिपत की बात करती है मुलिया की मां यहां आके तो तू सबको भूलही गई। मैं जानता हूं अब जमनियां के किसी आदमी की याद तुम्हें न होगी? अब शहर में आके शहरही बन गई हो, दिहात की बात कहां याद आवेगी? भला मुलकरमियां की बात याद है कि नहीं।

मु० मां०। वाह रे! कोई अपनी बेटी को भूल जाता है।

देवे०। कौन जाने तुम्हारा भुलना स्वभाव है। तब कौन भरोसा। भूलना कुछ अचरज की बात है? अच्छा तुम अपने यहां के उनको जानती हो अरे—

मु० मां०। कौन गोविन्द पण्डित का?

देवे०। हां, हां! गोविन्द मामा।

मु० मां०। ओ हो! गोविन्दप्रसाद को कौन नहीं जानता? बैठो--बैठो। दादा बैठो मैं अब पहिचानी तुम गोविन्द के भांजा हो?

देवे०। हां, वह हमारे मामा हैं। भला मुलिया की माई यह बगान किसका है? बड़ा बढ़िया मालूम होता है। कैसे-कैसे सुन्दर फूल खिले हैं। यहां तक महक आती है मुलिया की मां! यह बीच में जो कोठा है उसमें क्या होता है?

मु० मां०। उसमें बाबू लोग नाच कराते हैं।

देवे०। घर तो जैसे राजा का महल मालूम होता है मुलिया की माई! तनी देख आवें।

इतना कह देवेन्द्रविजय उस अटारी की ओर चले दरवाजा खुला था। एक दम भीतर चले गये। नीचे के सब कमरों को

घूम के देखा तो कोई आदमी नहीं था। फिर ऊपर गये तो वहां सब कमरों में ताला बन्द था। दक्षिण और के एक कमरे का दरवाज़ा भर बन्द नहीं था। देवेन्द्र ने उस दरवाज़े पर धक्का दिया। दरवाज़ा झट खुल गया। देखा तो उसमें एक आदमी बैठा था। देवेन्द्र ने झट पहचान लिया, वही गाड़ी से उतर कर आया हुआ युवा, पुरुष वेषधारिणी जुमेलिया थी।



अड़तालीसवां बयान

उपसंहार

पुरुषवेषधारिणी जुमेलिया एक पलंग पर बैठ कर अपने आप पंखा कर रही थी। देवेन्द्र को देखते ही चौंक कर खड़ी हो गई। और जेब से एक टुकड़ा जड़ी को निकाल कर झट मुंह में डाल लिया देवेन्द्रविजय ने कहा—"क्यों जुमेला, अच्छी तो हो? भगवान की दया से बड़ी जल्दी हमारी तुम्हारी मुलाकात हो गई।

जुमेलिया दांतों से जड़ी को दबा कर हंस पड़ी। देवेन्द्र ने अकचका कर पूछा, "क्यों जुमेला तुम्हारे मुंह में वह क्या है?"

जुमेलिया बोली, "यह जहर है। अगर तुम एक पांव भी भीतर आये तो झट यह जड़ी जुमेलिया के पेट में चली जायगी।

देवे०। तो इससे हमारा क्या बिगड़ेगा? हम तुमसे सुलह करने थोड़े आये हैं। तुम चाहे मरी मिलो या जीती तुम्हें पकड़ने से हमको मतलब है।

जुमे०। तो हमें तुम मरा हुआ ही पावोगे।

देवे०। यही सही।

इतना कहकर देवेन्द्रविजय ने जेबसे हथकड़ी निकाली और एक फाल भीतर गये। इतने में जुमेलिया ने जड़ी का आधा भाग निगल लिया।

निगलते ही जुमेलिया धरती में गिर गई। कण्ठ बन्द हो गया सांस भी अब नहीं चलती थी।

थोड़ी देर बाद जुमेलिया ने आंख उठाकर देखा और झट सचेत होकर उठ खड़ी हुई। फिर वही हंसी उसके मुँह पर दिखाई दी! देवेन्द्रविजय ने पूछा, "क्यों जुमेला जड़ी ने कुछ फल नहीं दिखाया?"

जुमे०। दिखावेगी।

देवे०। कब?

जुमे०। पांच मिनट में।

देवे०। पांच मिनट में?

जुमे०। हां देवेन्द्र! तुम्हारे ऐसे आदमी के हाथ से मरना जुमेलिया के लिये बड़े कलंक की बात है। जुमेलिया दूसरे को मारना जैसा जानती है वैसे ही आप भी मरने की शक्ति रखती है। पहली बात का सुबूत उस दिन पा चुके हो आज दूसरी बात का सुबूत लो।

देवे०। अच्छा अब कहो मरने से पहले तुमको कुछ कहना है

जुमे०। हां कहना तो है। मैं फूल साहब की विवाहिता स्त्री हूं? फूल साहब मुसलमान थे, इससे मैं मुसलमानिन हुई। मुझे जलाना मत कबर दे देना।

देवे०। अच्छा ऐसा ही होगा जुमेलिया तुम्हारा जन्म कहां है?

जुमे०। कामरूप देश है। कामरूप के उत्तर पूरब ओर जो काचिम राज्य हैं उसी राज्य में मेरा जन्म है। हम लोग जाति के मिस्मी हैं। मिस्मो जाति की स्त्रियों के समान सुन्दर स्त्री संसार में दूसरी नहीं होती

देवे० । हां यह तो हमने सुना है और देखा भी है। भला जुमेलिया तुम्हारी उमर क्या होगी ?

जुमे० । जितनी तुम्हारी है।

देवे० । हमारी तो छतीस बरस की है।

जुमे० । हमारी भी ठीक उतनी ही है।

देवे० । छत्तीस ?

जुमे० । क्यों कुछ अचरज है ?

देवे० । जुमेलिया ! तुम्हारी छत्तीस बरस उमर तो कोई विश्वास नही करेगा, देखने वाला तुमको बहुत कहे तो भी बीस बरस से आगे नहीं कहेगा, तुम तो अभी बिल्कुल जवान हो।

जुमेलिया० । देवेन्द्र तुम्हारे देश की तरह हमारे देश में स्त्री बीस बरस में बूढ़ी नहीं हो जातीं हमारे देश की स्त्रियां जानती हैं कि जवानी को कैसे बांध कर रखना होता है। किस तदबीर से जोबन सदा स्त्रियों के आगे हाथ जोड़े खड़ा रहता है, वह हमारे देश कि स्त्रियों को मालुम है, तुम्हारा गुरु जिससे तुमने जासूसी सीखी है वही अरिन्दम जब फूल साहब की खोज में लगा--वह आज सात बरस की बात है, उसने उस समय मुझको जैसा देखा था आज अगर मुझे फिर देखता तो ठीक वैसाही पाता। यह सात बरस हमारे शरीर से किस तरह अलगही अलग बीत गया है यह बात नही समझ सकता था। आज तुम हमको ऐसा देखते हो, अगर दस बरस बाद देखो तो ठीक ऐसाही देखोगे। कुछ भी फरक नहीं पावोगे। इसी तरह सुन्दर कमल सा मुंह

इसी तरह आंखों की चंचल तिरछी चितवन इसी तरह मीठा कण्ठ स्वर, इसी तरह पक्के कुन्दुरू से लाल ओठ मीठी और भयंकर हँसी, शरीर का ऐसाही तपे सुवर्ण सा रंग सब ऐसाही रहेगा।"

देवे०। तुमने यह सब जड़ी बूटी और दवाइयां कहां पाई थीं?

जुमेलिया०। कुछ मैं पहले से जानती थी और कुछ फूल साहब से मैंने सीखी थीं।

देवे०। तुम अपना देश छोड़कर यहां क्यों आई?

जुमेलिया०। सुनो देवेन्द्र! मैं यहां कुछ सधि करके नहीं आई। केवल प्रेम के पाले पड़कर आना पड़ा था। जब मैं खूब जवान सोलह बरस की चढ़ती जवानी पर थी तब फूल साहब हमारे देश में गये थे। वह वहां दवा और जड़ी बूटी ही के लिये गये थे। अरब देश से बहुत कुछ दवा जान समझ कर हमारे देश में भी बहुत सी दवाइयां यन्त्र मन्त्र उन्होंने सीखा। पहले फूल साहब डाक्टर फूलसाहब नहीं फ़कीर फूलसाहब थे। पीछे हमारे देश से लौट कर यहां डाक्टर फूलसाहब हुए। और जल्दी से उनकी डाक्टरी की यहां शोहरत हो गई जिन रोगियों को छः छ-महींने दवा करके डाक्टर लोग थक के जवाब दे चुके थे उन रोगियों क फूल साहब ने तीन तीन दिन में आराम किया। जिन दिनों फूल साहब हमारे देश में गये थे और मैं पूरी जवानी पर थी उन दिनों देवेन्द्र अगर तुम देखते तो विश्वास करो मानो तुम्हारे ऐसे आदमियों की आखें झुलस जातीं। तुम कभी हमारे साथ

घर नहीं करते वैर क्या सदा हमारे पांव पड़ के कहते—

स्मरगरलखण्डनं, मम शिरसि मण्डनं।

देहि पदपल्लव मुदारम्।

फूल साहब उस समय मेरी नज़रों में पड़े थे, नज़रों में पड़े ही नहीं नज़रों में बसे मन में बसे हृदय में बसे थे। क्या करूं फूल साहब ही थे जिन्होंने हम को अपने रूप में पागल कर दिया। दूसरा आदमी होता तो मैं ही भेंड़ा बना के रखती। जो कोई हमारे देश में जाता है, कैसा ही बहादुर या चालांक हो हम लोगों के फन्दे में पड़कर लौट नही सकता। लेकिन फूल साहब की बहादुरी को क्या कहें उनको ताब करना दूर रहा हमी को ताबे करके अपने देश में ले आये। मेरा नाम पहले पनमतिया था। जब फूल साहब ने हमको ब्याहा तब आदर से कभी फूल बीबी कभी जुमेलिया कहने लगे। जुमेलिया ही कहके बहुत पुकारते थे।

देवे०। फूल साहब के मरने पर तुमने फिर ब्याह किया?

जुमे०। ब्याह तो नहीं किया लेकिन हमसे दया के अनेक लोग फूल साहब के बाद भागी हुए, बहुत से लोग ललाये ही रह गये। बहुतेरे इस रूप की ज्वाला में पतंग की तरह पड़कर जल मरे; उनमें से तुम कई को जानते हो जैसे गोविन्दप्रसाद, तुलसीदास, नवीन डाक्टर याद हैं? और भी बहुत से मरे हैं बहुतेरे मर रहे हैं। इतना कहकर जुमेला चुप हो गई।

देवे०। अच्छा मरने से पहले तुमको और कुछ कहना है जुमेला?

जुमे० । न, हमको और कुछ कहना नहीं है ।

देवे० । और कुछ नहीं ?

जुमे० । हां हां ! हैं, कई बातें हैं ।

देवे० । बोलो ।

जुमे० । मैं तो अभी मरूंगी ।

देवे० । हां यह तो तुम बड़ी देर से कह चुकी हो ।

जुमे० । जिन्दगी भर तुम सब को मैं घृणा करती आती हूं ।

देवे० । हां, तो क्या हुआ ?

जुमे० । मरने पर क्या करूंगी जानते हो ? तुम्हारा पीछा करूंगी ।

देवे० । सच्च ?

देवे० । जुमेला ! भूत पर विश्वास करना तो मैंने ही तुम्हें सिखलाया है ?

जुमे० । तुमने ? कैसे ?

देवे० । मैं ही तो नवीन भूत हूं ।

जुमे० । तुम ?

देवे० । हां मैं ?

जुमे० । अरे ! देवेन्द्र ! क्या सच्च कहते हो ?

देवे० । हां सच्च कहते हैं ।

जुमे० । तो मैंने जो देखा था, वह नवीन की प्रेतात्मा नहीं थी ?

देवे० । नहीं तुमने हमी को नवीन की प्रेतात्मा के रूप में देखा था ।

जुमे० । लेकिन हमारे पिस्तौल का फ़ैर क्यों खाली गया था?

देवेन्द्र ने सब हाल जुमेलिया से बता दिया। जुमेलिया ने कहा, "तब देवेन्द्र! तुमने मुझ पर बड़ी दया की है।"

देवे० । कैसे ?

जुमे० । मैंने सचमुच नवीन को भूत समझा था।

देवे० । तुमको हमने ठगा था।

जुमे० । मैं ठगी गई थी लेकिन तुम नहीं ठगे जावोगे। मैं मरने पर जरूर तुम्हारा पीछा करूंगी।

देवे० । अच्छा कर सको तो करना।

जुमे० । जरूर कर सकूंगी और करूंगी।

देवे० । अच्छा कोशिश करो।

जुमे० । सुनो देवेन्द्र एक बात और है।

देवे० । बोलो सुनते हैं।

जुमे० । अगर मैं जीती रहती तो तुमको चिता पर सुला के तो छोड़ती।

देवे० । अच्छा हमने भी माना तुम सुला देती तो?

जुमे० । तो क्या? मैंने अपनी चीठी में जो कुछ तुमको लिखा था, वह एक एक पूरा करके तो छोड़ती।

देवे० । खैर तो फिर?

जुमे० । फिर तो यही कि मर जाने पर भी मैं अपनी चीठी की लिखी हुई सब बात बिना पूरा किये नहीं छोड़ूंगी; याद रक्खो मेरा नाम जुमेलिया है।

देवे०। अच्छी बात है अगर हो सके तो पूरा करना।

जुमे०। हो सकेगा करूंगी। सब मैं एक एक करके पूरा करूंगी। जुमेलिया का वादा झूठा नहीं होता।*

देवे०। कुछ परवाह नहीं मैं भी तुम्हारी प्रेतात्मा का मुकाबला करने को सदा तैयार रहूंगा।

जुमे०। बहुत ख़ूब तुमको मेरी प्रेतात्मा से जलदी से मुलाकात होगी। घड़ी देख कर देवेन्द्र ने कहा, "क्यों जुमेला! चार मिनट बीत तो गया। मैं तुम्हारा अनोखा मरना देखने ही के वास्ते खड़ा हूं।"

जुमे०। तो क्या हुआ? एक मिनट और है एक ही मिनट बाद मैं मरूंगी। तुमको जो कुछ मैंने कहा सो याद रखना।

देवे०। अच्छा याद रहेगा।

देखते ही देखते जुमेलिया का मुंह एक दम लाल हो आया फिर थोड़े ही देर में पीला पड़ा आंखें दोनों ढंक गई। कुछ सेकण्ड बाद आंखे उघार कर जुमेलिया ने देवेन्द्र की ओर देखा और खिलखिला कर हंस पड़ी। हंसती ही हंसती तलमला कर गिर गई। जुमेलिया का सब शरीर बरफ सा ठण्डा और पत्थर सा कड़ा हो गया, सांस चलना बन्द हो गई आंखें दोनों कुछ खुली रह गई लेकिन अब वह देख नहीं सकती थी।

---

*जुमेलिया का फिर जी उठने और देवेन्द्रविजय का परिवार सहित इसके पंजे में आने का हाल "मायाविनी" में लिखा गया है जो भारतजीवन प्रेस में ।) को मिलती है।

फूल साहब की बात देवेन्द्र को याद थी, इस कारण जुमेलिया की मृत्यु पर उनको विश्वास नहीं हुआ। इसके बाद जब तक कब्र में डाल कर जुमेलिया की लाश पर मिट्टी नहीं डाल दी गई तब तक देवेन्द्र उसकी ओर सावधानी से देखते ही रहे। जब वह कब्र में दफ़न कर दी गई तब निश्चित हुए।

* * *

"१७ क" पुलिन्दे में मनोरमा के स्थावर जंगम सम्पत्ति के विषय अनेक प्रमाण मिले। उसमें गुप्त घटनाओं का सम्यक विविरण भी लिखा हुआ था।

कुमोदिनी ने पहले मनोरमा पर चक्र चलाया फिर संयोग वश उसको जुमेलिया आ मिली। दोनों ने मिल कर चक्र रचा। कुमोदिनी से जुमेलिया अधिक चालाक और बुद्धिमती थी। उसने अपना मतलब साधने के लिये कुमोदिनी के मरने की बात उड़ाई फिर अवसर पाकर उसको मार ही डाला। पाठक इसको पढ़ चुके हैं।

देवेन्द्र ने मनोरमा की जायदाद का उद्धार करके उसको सौंप दिया। मनोरमा ने अधिकार पाते ही आनन्दकुटीर बेंच डाला। आनन्दकुटीर के नाम ही से डर के मारे उसका शरीर कांप जाता था।

इसके आगे जुमेलिया फिर कैसे कब्र से बाहर हुई और किस तरह परिवार सहित देवेन्द्र को फिर पंजे में करके खेल खेलाती

रही, फिर कैसे परिवार सहित देवेन्द्र विजय जासूस का उद्धार हुआ; इसकी कथा जानने के लिये पाठक "मायाविनी" नामक उपन्यास पढ़ें ।

॥ इति ॥

पढ़ने योग्य पुस्तकें

रक्त मंडल

नवयुवकों के एक दल ने स्वदेश को स्वतंत्र करने की ठानी। इसके लिये उन्होंने 'रक्तमंडल' नामक एक संस्था बनाई जिसके रहस्य बड़े ही गुप्त रक्खे जाते थे। एक बड़े भयानक वैज्ञानिक को इन्होंने अपना मुखिया बनाया जिसने एक ऐसी किरण बनाई जो जिस चीज़ पर पड़ जाय तुरंत उसे भस्म कर देती थी। इस किरण का नाम उन्होंने "मृत्युकिरण" रक्खा। उसके बम के गोले बनाए और उनसे किलों और फौजों का नाश करने की ठानी। किस किस तरह के भयानक काम इन लोगों ने किये और सरकार ने भी कैसी चालांकी के साथ इनका मुकाबला किया वह सब बड़े ही रोचक रूप में इस उपन्यास में लिखा गया है। मूल्य— १।।)

नरेन्द्र मोहनी

इस रहस्यपूर्ण उपन्यास में दो प्रकार की स्त्रियों का चरित्र एक साथ दिखाया गया है। एक राजकुमारी रंभा-सती, सच्चरित्रा और लज्जावती थी, दूसरी मोहनी–कुचरित्रा, लज्जाहीन और कुटिल थी, दोनो ही अगाध सुन्दरी थीं, दोनो ही अतुल धनशालिनी थीं दोनों ही राजकुमार नरेन्द्रसिंह पर आसक्त हुईं। परंतु एक का प्रेम सत्य और दूसरे का कामोत्तेजना पर निर्भर था। उस प्रेम का नतीजा क्या निकला, किस तरह दो तरह के चरित्रों की ठोकरों में राजकुमार को आफतें झेलनी पड़ीं, कैसी कैसी धूर्तता और कुटिलता के चक्र में उन्ह पड़ना पड़ा, यह सब पढ़ आप चकित हो जायँगे। बा० देवकीनन्दन खत्री रचित यह प्रसिद्ध उपन्यास है। मूल्य—१।।)

लाल पंजा

एक नवीन ढङ्ग का जासूसी उपन्यास। इसमें एक भयानक डाकू का हाल लिखा गया है जो इतना निडर था कि सूचना दे दे कर डाके मारा करता था। यह जहां जाता वहां खून से रंगे पंजों का निशान छोड़ जाता था। किस दिन कब और कहां वह डाका डालेगा यह वह पहिले से बता देता था फिर भी पुलिस के बड़े से बड़े अफसर और जासूस उसे न तो रोक सकते थे न पकड़ सकते थे। यह डाकू एक सुचतुर वैज्ञानिक भी था जिसने अपने अद्भुत यंत्रों से संसार में तहलका डाल दिया था। ऊपर से तो यह बड़ा भद्र पुरुष बनकर रहता था परन्तु भीतर ही भीतर वह अपनी गुप्त कार्रवाइयों का चक्र चलाता रहता था। अंत में किस तरह अपनी जान पर खेल कर एक दूसरे वैज्ञानिक ने इसका पता लगाया यह पढ़ आप दातों उंगली दबावेंगे। मूल्य—१॥)

कुसुमलता

यह एक ऐयारी और तिलिस्मी उपन्यास है। आप जब इसकी विचित्र ऐयारियां और हैरत में डाल देने वाले तिलिस्मी तमाशों का हाल पढ़ेंगे तो चक्कर में आ जांयगे। इसके नायक कुंअर रणविजय सिंह की बीरता, भीम प्रताप की ऐयारी, राजकुमारी कुसुमलता का प्रेम, तिलिस्म का भेद आदि पढ़कर आप विस्मय में पड़ जांयगे। यह उपन्यास ऐसा रोचक और मनोहर है कि इसकी टक्कर के उपन्यास कम दिखाई पड़ेंगे। मूल्य— ३)

राजस्थान का इतिहास

राजपूतों के संबंध की ऐतिहासिक पुस्तकों में टाड साहब के लिखे "ऐनल्स आफ राजस्थान" का जितना मान है उतना और किसी पुस्तक का नहीं, कारण यह कि जहां और लेखकों ने बिना जांचे अपने मन की अप्रामाणिक बातें लिख दी हैं वहां टाड साहब ने उस बात को खोज कर, उसका प्रमाण ढूंढ़ कर और उसके संबंध की सब बातें विचार कर तब उसे लिखा है। यह उन्हीं की बनाई अंग्रेजी पुस्तक का अनुवाद है। इसमें मेवाड़ तथा संलग्न राजपूत जातियों का इतिहास बड़ी जांच और खोज के साथ लिखा गया है। राजपूत रियासतों का राजनैतिक प्रबन्ध कैसा था, उनकी आर्थिक अवस्था क्या थी, भीतरी और बाहरी शत्रुओं से लड़ने में वे किस तरह का प्रबंध करते थे, गृह प्रबंध कैसा था आदि बातों को यदि आप यथार्थ रूप में पूरी पूरी तौर से जानना चाहते १ तो इस पुस्तक को पढ़ें, ५ भाग का मूल्य— २॥)

महेश्वर विलास

कवि लछिराम जी काव्य के अच्छे ज्ञाता हो गये हैं, उन्हीं का बनाया यह ग्रन्थ रत्न है। इसमें नव रसों तथा नायिका भेद आदि का सविस्तर वर्णन है तथा उनके उदाहरण स्वरूप उत्तम उत्तम कवितायें भी दी गई हैं। जो लोग काव्य के विषय में पूरी जानकारी चाहते तथा उनके भेदों आदि से परिचित होना चाहते हैं वे इस पुस्तक को एक बार अवश्य देखें। प्रत्येक काव्य प्रेमी के लिये यह पुस्तक आवश्यक है और इसकी एक प्रति उसे अवश्य अपने पास रखनी चाहिये। काव्य के विषय की बातें बतलाने वाली ऐसी और कोई पुस्तक न होगी। यदि आप काव्य सागर में गोता लगाना चाहते हैं तो इस ग्रंथ रत्न को देखें— १)

कुसुमकुमारी

कुछ लोगों का कहना है कि बिना ऐयार और तिलिस्मी हाल आये उपन्यास रोचक हो ही नहीं सकता, लेकिन यह खयाल गलत है और इसका सबूत है यह उपन्यास। यह बा० देवकीनंदन खत्री रचित है इसी से आप समझ सकते हैं कि यह कितना रोचक होगा। फिर भी हम अपनी ओर से इतना अवश्य कहेंगे कि यह रोचक से रोचक ऐयारी और तिलिस्मी उपन्यासों से बाजी मार सकता है इसका घटना क्रम भी इतना अनूठा है कि पुस्तक समाप्त किये बिना आप उसे हाथसे रख न सकेंगे। इसमें मित्र की धोखेबाजी, स्त्री का सच्चा प्रेम, वीर की वीरता, स्वार्थी की दगा, डरपोक का कायरपन, डाकुओं की भयानक लीला, सभी दिखाया गया है पर अन्त में ज्योतिष विद्या का ऐसा चमत्कार दिखाया है कि आप दङ्ग के दंग हो जायंगे। मूल्य— १।)

चंद्रभागा

यों तो ऐयारी और तिलिस्मी उपन्यास रोचक होते ही हैं, पर अगर उसमें जादूगरी भी मिल जाय तो सोने में सुगंध का हाल होता है। इस पुस्तक में विचित्र तिलिस्म का हाल है, अनूठी ऐयारियों का वर्णन है और बीच बीच में ऐसी ऐसी जादूगरी की करामातें दिखाई गई हैं कि पुस्तक आरंभ करने पर आप मन्त्र मुग्ध की तरह उसे पढ़ते चले जायंगे और बिना समाप्त किये रुक न सकेंगे। बहुत दिनों से यह पुस्तक अप्राप्य थी, अब मोटे ऐन्टीक कागज पर रंग बिरंगी कई तस्वीरें दे कर छापी गई है। यदि आप अद्भुत घटना-पूर्ण उपन्यासों के प्रेमी हैं तो इसे अभी मंगवा लें और पढ़के अपना दिल खुश करें। बड़े बड़े जादूगरों, दैत्यों और यक्षों के आपस में युद्ध करने का हाल पढ़ आप को आश्चर्य होगा और आप अवश्य प्रसन्न होंगे। मूल्य— ॥)

किले की रानी

यदि आप उपन्यासों के शौकीन हैं तो आप ने प्रसिद्ध औपन्यासिक 'रेनालड साहब' के अनूठे अंग्रेजी उपन्यास "दि यंग फिशरमन" का नाम अवश्य सुना होगा। यह 'किले की रानी' उसी पुस्तक का अनुवाद है। इस में एक शराबी रईस का हाल लिखा है जो अपने रुपयों के जोर से एक सुन्दरी बालिका से विवाह करना चाहता था, पर वह बालिका उसे न चाह एक गरीब मछुये से प्रेम करती थी। उस शराबी रईस की दुर्दशा का हाल पढ़ हंसी आती है और बालिका का सरल सच्चा प्रेम पढ़ कर हृदय गद्गद् हो जाता है। अन्त में कई रोचक और विचित्र घटनाओं के बाद मछुये को एक डूबा हुआ बड़ा भारी खजाना मिल गया और उसकी मदद से उस शराबी रईस को हटा वह मछुआ अपने प्रेमिका से जा मिला और एक बड़े भारी किले का राजा हुआ। मूल्य— ।/।)

साहसी डाकू

हिन्दुस्तान के प्रसिद्ध डाकूराज तांतिया भील का नाम प्रायः सभी जानते होंगे। जिस प्रकार यहां तांतिया भील हो गया है उसी प्रकार विलायत में डिक टर्पिन नाम का एक डाकू हो गया है। यह इतना वीर और निर्भय था कि दिन दहाड़े पुलिस के अफसरों को लूट लिया करता था, खुले आम अमीरों के यहां डाके डालता था और तिस पर भी पुलिस उसका कुछ कर नहीं सकती थी। यह इतना उद्दंड था कि बड़े बड़े चालाक जासूसों को इससे हार माननी पड़ी और देश भर की पुलिस एक साथ यत्न करने पर भी इसे न पकड़ सकी। अन्त में एक ऊंचे ओहदे के पुलिस अफसर ने इसे पकड़ने का बीड़ा उठाया। इस कोशिश में उसे कैसी कैसी ज़िल्लतें उठानी पड़ीं, कैसी आफ़तों में फंसना पड़ा, उसकी कैसी कैसी दुर्दशा हुई यह पढ़ के हंसी आती है। १।)

कालिदान

मनुष्य कितना नीच हो सकता है और पतिव्रता स्त्री अपने अधम, दुर्व्यसनी तथा पतित पति के लिये भी अपने प्राणों का किस प्रकार न्यौछावर कर सकती है यही इस पुस्तक में दिखाया गया है। दुष्ट साधु महंत, रंगे कपड़ों में छिपे पतित उनके लंपट चेले जो दुष्कर्मों में अपने गुरुओं से भी बढ़ चढ़ के होते हैं, ये सब किस तरह व्यभिचार की सृष्टि करते हैं, किस तरह सतियों को चरित्र-हीन बना के अपनी काम-पिपासा शान्त करना चाहते हैं, किस तरह धूर्तता कर के, मीठी बातें बोल के, ढोंग दिखा के पतिव्रताओं को बस में करने की चेष्टा करते हैं और सतियें, स्वच्छहृदया, पुन्याचारिणी कुल-ललनायें किस तरह उनके फंदे से बचती हैं यदि यह सब बातें आप देखना चाहें तो इस पुस्तक को पढ़ें। यह जितनी रोचक है उतनी ही शिक्षाप्रद भी है। मूल्य— १)

गुप्तगोदना

बा० देवकीनंदन खत्री रचित प्रसिद्ध उपन्यास। इसमें कुटिल यवनराज औरंगजेब की चालें और उस समय के दिल्ली राज्य की घटनायें दिखाई गई हैं। उस समय मुसलमान दर्बार में कैसे कैसे गुप्त षड्यन्त्र चला करते थे, औरंगजेब और उसके भाइयों में दिल्ली के तख्त के लिये कैसी कैसी चालें हुईं, मुसलमान महल की उस समय कैसी अवस्था थी, बेगमें पहरेदारों से सुरक्षित, संतरियों से घिरे हुये, खोजों से भरे महल में भी कैसे मजे में अपनी कार्रवाइयें कर डालती थीं, आदि बातें आपको इस उपन्यास के पढ़ने से भली भांति मालूम हो जायंगी। इसका घटनाक्रम बड़ा ही रोचक है और चरित्र चित्रण भी बड़ा ही उत्तम है। यदि आप रोचकता के साथ ही साथ मुसलमानी जमाने के बारे में भी जानकारी चाहते हों तो इस उपन्यास को पढ़ें। आपको यह अवश्य पसन्द आवेगा और आप पढ़ के प्रसन्न होंगे। मूल्य— ३)

सुरसुंदरी

जिस समय यवन गण निरंतर उदयपुर को अधिकार में लाने की चेष्टा में लग हुये थे और बहादुर राजपूत पुत्र, स्त्री और प्राणों की आहुति दे कर अपनी जन्मभूमि को बचाने की चेष्टा कर रहे थे उसी समय की ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर यह उपन्यास लिखा गया है। इसमें आपको सभी बातें देखने को मिलेंगी वीर राजपूत योद्धा प्राणों का कितना मूल्य समझते हैं और किस तरह मरते हैं, वीरता किसे कहते हैं और सच्ची वीरता क्या है, राजपूत कुमारियों में प्रेम की परिभाषा क्या थी और वे उसे किस तरह पालन करती थीं, निःस्वार्थ प्रेम कैसा होता है और उस में कितना हृदय बल, गांभीर्य आदि आवश्यक होता है, ये सभी बातें आप इस पुस्तक को पढ़ने से जान जायंगे। इसमें एक राजपूत युवती का प्रगाढ़ प्रेम और स्वार्थ शून्य स्नेह देख कर आप का हृदय गद्गद हो जायगा और अन्त में आप के मुंह से वाह वाह निकल पड़ेगा। रंगीन चित्रों सहित, मूल्य— १)

महेश्वर विनोद

इस ग्रंथ में भांति भांति के मनोहर छन्दों में कृष्ण जी की लीला का वर्णन है। रुक्मिणी हरण, मथुरा गमन वियोग लीला आदि सभी प्रधान प्रधान बातें आ गई हैं। इन सब के बाद श्रीरामचन्द्र जी की बन गमन लीला का वर्णन है। सभी छन्द बड़ी ललित भाषा में लिखे गये हैं और ऐसे भावमय हैं कि पढ़ कर दृश्य नेत्रों के सामने घूम जाता है। सभी ईश्वर भक्तों के देखने योग्य है मूल्य— १)

मोतियों का खजाना

जैसे अंग्रेज औपन्यासिकों में 'रेनाल्ड साहब' का नाम प्रसिद्ध है वैसे ही फ्रांसीसी लेखकों में "एलेकजेण्डर ड्यूमस" मशहूर होगये हैं। दोनों में कौन बढ़ के है इसके विषय में मतभेद है पर फ्रांसीसी लेखक के भक्तों का कहना है कि "एलेक्जेंण्डर ड्यूमस" अपनी लिखी पुस्तकों में जैसा अद्‌भुत घटना क्रम दिखाते हैं वैसा 'रेनाल्ड' की किताबों में नहीं पाया जाता प्रस्तुत पुस्तक "एलेक्जेण्डर ड्यूमस" के सर्वोत्तम उपन्यास "दि कौंट आफ मान्ट्र क्रिस्टो" का अनुवाद है। प्रायः सभी भाषाओं में इस उपन्यास-रत्न का अनुवाद हो चुका था पर हिन्दी में अभी तक यह पुस्तक प्रकाशित न हुई थी। हिन्दी भाषा-भाषी भी इस रत्न से वंचित न रहें यह सोच के हमने इसका हिंदी अनुवाद प्रकाशित किया है जो चौदह बड़े साइज के भागों में समाप्त हुआ है। यह पुस्तक कैसी है इस के विषय में अधिक कहना व्यर्थ है पर इतना हम जरूर कहेंगे कि मानुषिक भावों का ऐसा अच्छा खाका, घटना-क्रम का ऐसा अद्‌भुत सिलसिला, चरित्र चित्रण का ऐसा सुन्दर और सफल प्रयत्न किसी पुस्तक में आप न पायेंगे। पुस्तक का प्लाट बड़ा ही मनमोहक है और लेखनशैली इतनी अच्छी है कि आप जितना ही पढ़ें, और पढ़ने की आप की इच्छा बनी ही रहेगी। मूल भाषा में इस उपन्यास के सैकड़ों संस्करण हो चुके हैं और हिन्दी प्रेमियों ने भी इसका अच्छा आदर किया है। यदि आप अच्छे उपन्यासों का कुछ भी शौक रखते हैं तो इस को पढ़ें, कम से कम एक ही दो हिस्सा मंगवा कर देखें। हमें विश्वास है कि शुरू कर के इस पुस्तक को आप फिर बिना पढ़े छोड़ न सकेंगे। १४ भाग एक साथ लेने से मूल्य ६), अलग अलग लेने से प्रति भाग— ॥)

नरेन्द्रमोहनी

बा० देवकीनंदन जी खत्री कृत। कुछ लोगों को दुःखांत उपन्यास पसंद होता है और कुछ सुखान्त के प्रेमी होते हैं पर ऐसा होना बड़ाही कठिन है कि एक ही उपन्यास दुःखान्त और सुखान्त दोनों के प्रेमियों को सुख दे। इस पुस्तक की यही खूबी है कि यह दोनों प्रकार के लोगों को आनन्द देगी। इसमें चरित्र चित्रण बड़ा ही अनूठा हुआ है, पात्रों का चरित्र ऐसी सुन्दरता से खींचा गया है कि भावों का विचित्र उतार चढ़ाव उसमें बड़ी खूबी से दिखाई देता है। कुंवर नरेन्द्रसिंह की बहादुरी, रंभा का सच्चा प्रेम जगजीतसिंह का भ्रातृस्नेह, मोहिनी और गुलाब की कुटिलता, उनका धोखा दे के नरेन्द्रसिंह को जहर खिला देना और अन्त में विचित्र रीति से संखिया खा कर उनका अच्छा होना, बहादुरसिंह भंगेड़ी की मसखरी बातें, आदि ऐसे उत्तम रूप से लिखी गई हैं कि पढ़ कर आप अवश्य प्रसन्न होंगे। नया सचित्र संस्करण मूल्य— १॥)

कुसुमलता

आज कल सामाजिक और ऐतिहासिक उपन्यासों की धूम है, पर यदि सच पूछा जाय तो ये उतने रोचक नहीं होते जितने ऐयारी और तिलिस्मी उपन्यास होते हैं। इस पुस्तक में आले दर्जे की ऐयारी और बड़े ही अनूठे तिलिस्म का वर्णन है और ऐसा अद्भुत घटना-क्रम है कि पढ़ने वाले को ताज्जुब पर ताज्जुब होता जाता है और एक घटना का भेद खुलता नहीं कि दूसरी विचित्र घटना फिर मन को अचंभे में डाल देती है। इस ऐयारी और तिलिस्मी उपन्यास की लोगों ने बड़ी ही प्रशंसा की है। यदि आप को इस किस्म के उपन्यासों का शौक हो तो इस पुस्तक को अवश्य पढ़ें। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि इसे पढ़ के आप अवश्य प्रसन्न होंगे। मूल्य— २)

किसान की बेटी

उपन्यास क्षेत्र में 'रेनाल्ड साहब' का नाम खूब अच्छी तरह प्रसिद्ध है। यह कहना अनुचित न होगा कि घटना वैचित्र्य और चरित्र चित्रण में उनका मुकाबला अब तक कोई औपन्यासिक नहीं कर सका है। यह 'किसान की बेटी' उनके बनाये एक प्रसिद्ध उपन्यास 'द मिडिलट्न' का अनुवाद है। इसमें एक सरल हृदया बालिका का ऐसा अच्छा चरित्र खींचा गया है और साथ ही साथ बदमाशों की बदमाशी, जालियों का जाल और लंपटों की विचित्र लीलायें ऐसी अच्छी तरह दिखाई गई हैं कि आप पढ़ कर प्रसन्न हो जायंगे। इस पुस्तक को पढ़ने वाला कभी किसी के धोखे में न पड़ेगा और दिलचस्पी के साथ ही साथ उसे शिक्षा भी मिलेगी। मूल्य— १।)

स्वर्णलता

सुन्दर सोने का घर कलहकारिणी स्त्रियों के कारण किस तरह मट्टी हो जाता है, कर्कशा स्त्रियें भरी पूरी गृहस्थी को किस तरह चौपट कर देती हैं, स्त्री के वचन बाण किस तरह शान्त घर में द्वेष का बीज रोप देते हैं और भाई भाई किस तरह स्त्रियों की बातों में पड़ स्नेह, ममता, दया, सौहार्द्र से शून्य हो एक दूसरे की जान के प्यासे हो जाते हैं यह इस उपन्यास के पढ़ने वाले भली भांति जान जायंगे। यही नहीं, सुशीला और पतिव्रता स्त्रियें उजड़े घर को भी किस तरह बसा देती हैं यह भी आप इस पुस्तक के पढ़ने से जान सकेंगे। आज कल हमारे समाज की दशा बड़ी शोचनीय हो रही है, घर घर कलह, अशान्ति, द्वेष फैला हुआ है, ऐसे समय में यह पुस्तक आप स्वयं पढ़िये और अपनी कुल ललनाओं को भी पढ़ाइये। मूल्य— १)

रामरसायन

कवि पद्माकर कृत यह ग्रंथरत्न एक अनूठी वस्तु है जो आज तक हिन्दी भाषा में कहीं नहीं छपा। कवि गुरु वाल्मीकि जी ने जिस रामायण की रचना की है वह जगत में पूज्य और प्रसिद्ध है परन्तु अभी तक उसका कोई उत्तम हिन्दी अनुवाद उपलब्ध नहीं है इस ग्रंथ के द्वारा कविश्रेष्ठ पद्माकर ने इस कमी को बड़ी खूबी से दूर कर दिया है। अर्थात् उन्होंने बाल्मीकि रामायण का केवल अनुवाद ही नहीं किया है बल्कि उसका ललित पद्यमय अनुवाद किया है। एक तो बाल्मीकि रामायण स्वयं ही ग्रंथों में रत्न और जगत् प्रसिद्ध है उस पर यह हिन्दी के सर्व पूज्य कवि द्वारा अनुवाद, सोने में सुगन्ध का काम हो गया है। जो लोग रामचरित्र के भक्त हैं और साथ ही साथ पद्माकर की काव्य सुधा भी पान किया चाहते हैं वे इसे अवश्य पढ़ें। यह एक पंथ दो काज है। मूल्य बालकांड १) अयोध्या कांड १) आरण्य कांड— ॥।)

भूतों का मकान

इसमें एक विचित्र मकान का हाल लिखा गया है जिसमें बड़ी बड़ी अद्भुत घटनायें हुआ करती थीं। इसके अतिरिक्त धन की लोभ मनुष्य से कैसे कैसे काम करवाता है, मित्र लालच में पड़ के मित्र के साथ कैसा बर्ताव करता है, सच्चा प्रेम करने वाली बालिका किस तरह सच्चे हृदय से अपना तन मन धन अपने प्रेमी को सौंप देती है और बड़े बड़े प्रलोभन भी अटल प्रेम धारा को किस तरह रोकने में असमर्थ होते हैं ये सब बातें आपको इस पुस्तक में देखने को मिलेंगी। पुस्तक का घटनाक्रम अच्छा तथा पात्रों का चरित्र चित्रण उत्तम है। कई रंगीन और सादे चित्रों सहित नवीन संस्करण का मूल्य केवल ॥)

समस्यापूर्ति

इस पुस्तक में बहुत से भिन्न भिन्न कविसमाजों और नवीन कवियों द्वारा रचित कवित्तों का समस्यापूर्ति के रूप में संग्रह किया गया है। आज कल कई तरह की नवीन ढङ्ग की कवितायें देखने में आती हैं जो सामयिक तो होती हैं पर उनमें वह ओज, वह लालित्य, वह अद्भुत शब्दों का चुनाव, वह माधुर्य और वह भाव पूर्णता नहीं रहती जो प्राचीन कविताओं में देखने में आती है यद्यपि नई रोशनी के युवक नवीन ढंग और शैली की कविता ही पसन्द करते हैं पर अब भी प्राचीन कविताओं का कम आदर नहीं है। प्राय कविता की ओर से लोगों की रुचि कम होती जा रही है, ऐसे समय में प्रत्येक का कर्त्तव्य है कि ऐसी पुस्तक की एक प्रति अपने पास रक्खे। इससे हजारों अनूठी कविताओं का ललित संग्रह तो आप के पास रहेहीगा इसके अतिरिक्त पुराने कवियों की लुप्त-प्राय कीर्ति को भी एक आश्रय मिलेगा। ४ भाग। प्रत्येक का मूल्य— ।।।)

महेश्वर चंद्रिका

डा० महेश्वर बक्स सिंह कृत इस ग्रंथ में ब्रज निकुंज विहारी भक्तभय हारी कंसारि श्रीकृष्णचन्द्र जी की लीला का वर्णन काव्य में किया गया है। कंस जन्म से ले कर भगवान की बाल लीला, गोकुल क्रीड़ा, पूतना, अघासुर, धेनुक आदि बध, फिर काली मर्दन, गोवर्धन धारण, इन्द्रमय भंजन, गोपी विरह वर्णन, मथुरा गमन, कंस बध, रुक्मिणी हरण, शिशुपाल बध, आदि वर्णन करते हुए अंत में कुरुक्षेत्र युद्ध, सुभद्रा विवाह, द्वारिका विहार, आदि का वर्णन किया है। यह पुस्तक प्रत्येक कृष्ण भक्त के देखने योग्य है। छन्द ऐसे ललित पद्यों में लिखे गये हैं कि पढ़ कर उस समय के दृश्य आंखों के आगे घूम जाते हैं। बड़े साइज के ४१४ पृष्ठों की बड़ी पुस्तक का मूल्य केवल— १॥)

उपन्यास—सागर

कथा सरित्सागर संस्कृत भाषा का प्रसिद्ध ग्रंथ है । इसमें प्रेम और भावपूर्ण हजारों ही कहानियां हैं । बड़े ही परिश्रम और व्यय से हमने इस विराट ग्रन्थ का सरल हिन्दी अनुवाद प्रकाशित कराया है । यह ग्रंथ हिन्दी अलिफलैला कहा जा सकता है, बल्कि यह उससे भी बढ़ कर है क्योंकि इसमें अश्लीलता की गंध भी नहीं और सभी कोई स्त्री पुरुष या बच्चे इसे बिना संकोच के पढ़ सकते हैं । इसमें पांच सौ से अधिक किस्से हैं जिन में एक से एक अद्भुत कहानियां, विचित्र से विचित्र रहस्य, जादूगरों की जादूगरी, धूर्तों की धूर्तता, कपटियों का कपट, योगियों का योग, सती का सतीत्व, प्रेमी का प्रेम और तेजस्वी का तेज दिखाया गया है जिन्हें पढ़ कर आप एक दम मुग्ध हो जायगे । बड़े २ सोलह सौ से अधिक पृष्ठों की पुस्तक का मूल्य केवल ८) योंही नहीं के बराबर था फिर भी केवल थोड़े समय के लिये हमने इसको और भी घटा कर केवल ६) कर दिया है । शीघ्रता कीजिये और अभी इस पुस्तक की एक प्रति मंगा कर पढ़िये । देर होने से मूल्य बढ़ जायगा और फिर आपको पछताना पड़ेगा यह एक ही पुस्तक आपके लिये महीनों पढ़ने का मसाला होगी । मूल्य— ६)

काजर की कोठरी

यह बाबू देवकीनन्दन खत्री रचित प्रसिद्ध उपन्यास है । रंडियों और उनके आशिकों का जैसा सच्चा खाका इस उपन्यास में उतारा गया है वैसा और किसी जगह आपको नहीं मिलेगा । इसे पढ़ने से आप को यह भी मालूम होगा कि किस तरह धूर्त और होशियार लोग रंडियों के भी कान काटते हैं और उन्हें धोखा दे अपना काम बनाते हैं । मूल्य— ।।।)

अज्ञातवास

सुप्रसिद्ध नाट्यकार बा० आनन्द प्रसाद कपूर रचित । अगर आप उत्तम श्रेणी के नाटकों के शौकीन हैं तो आप बा० आनन्द-प्रसाद कपूर से अवश्य ही सुपरिचित होंगे । उन्हीं ख्यातनामा नाट्यकार का लिखा यह नवीन नाटक अभी अभी छप कर प्रकाशित हुआ है। अगर आप अपने पूर्वजों की वीरता, क्षत्रियों का आत्म-गौरव और वीर क्षत्राणियों के तेज का हाल पढ़ना चाहते हों, अगर आप केवल 'सत्यबल' से बड़े बडे पापियों का नाश देखना चाहते हों, अगर आप ब्रह्मतेज का प्रताप देखना चाहते हों, यदि आप सतीत्व का बल देखना चाहते हों, यदि आप आप नारि का गौरव देखना चाहते हों और यदि आप छोटे छोटे क्षत्रिय बालकों की वीरता देख मुग्ध होना चाहते हों तो इस नवीन नाटक को अवश्य पढ़िये । बहुत ही सुन्दरता से कई रंगीन और सादे चित्रों सहित, मोटे कागज पर बहुवर्ण मुख पृष्ठ सहित छापा गया है। मूल्य १)

अमलावृत्तांत माला

कचहरी के अमलाओं को यदि कलियुग के दर्बारी कहा जाय तो उचित होगा। वर्त्तमान समय की कचहरियों की तरफ से लोगों का विश्वास हटाने और उन्हें बदनाम करने का पूरा श्रेय इन्हीं को प्राप्त है। ये अमले ऐसी धूर्तता, चालाकी और बेईमानी से लोगों से रुपया झसते हैं और गरीबों के साथ भी ऐसी संगदिली से पेश आते हैं कि जिसका बयान नहीं हो सकता। इस पुस्तक में इन अमलाओं की पोल खूब अच्छी तरह खोली गई है और बताया गया है कि इनकी चालाकी का ढंग क्या है,ये धूर्तता की चालें कैसे चलते हैं, है और इनके बेईमानी करने के तरीके क्या क्या हैं, पुस्तक उपन्यास के रूप में लिखी गई है इससे खूब रोचक है और साथ ही शिक्षाप्रद भी है। मूल्य— ।।।)

मधुमालती

एक बहुत ही रोचक भावपूर्ण उपन्यास, इस पुस्तक का घटना क्रम बड़ा ही विचित्र है। इसमें एक वेश्या का चरित्र दिखाया गया है। कैसे वह पहिले वेश्या थी. कैसे एक चरित्रभ्रष्ट युवक ने अपनी सती साध्वी स्त्री को त्याग उस वेश्या के नाम अपनी जायदाद लिख दी, कैसे उस वेश्या को पीछे पश्चात्ताप हुआ और अन्त में उसने अपनी निकृष्ट वृत्ति को त्याग कैसे कैसे उत्तम कार्य किये यह पढ़ आप अवश्य प्रसन्न होंगे। इसके अतिरिक्त लीला का पातिव्रत रक्षण, डाकुओं की बदमाशी, भिखारिनी का नीचों को उत्तम पथ पर लाने का उद्योग और उसका फल आदि बातें पढ़ कर आप अवश्य प्रसन्न होंगे। पुस्तक में पात्रों का चरित्र चित्रण बहुत ही उत्तम हुआ है और यह रोचक होने के साथ ही शिक्षाप्रद भी है। यदि आप उत्तम उपन्यासों के सचमुच शौकीन हैं तो इसको अवश्य पढ़ें। मूल्य— १॥)

भयानक भ्रमण

एक अंग्रेज अफ्रिका के भयानक जंगलों में जा कर गायब हो गया था। उसे खोजने के लिये उसके कई दोस्त एक बड़े भारी गुब्बारे पर बैठ कर चले। रास्ते में उन पर बड़ी बड़ी आफतें आईं आदमी को समूचा निगल जाने वाले दैत्य मिले, सिंह को खाली हाथों मारने वाले राक्षस मिले, नरमुंडों की माला पहिनने वाले जंगली मिले, बड़े बड़े तूफान आये पर उन्होंने हिम्मत न छोड़ी। कई बार तो वे ऐसी हालत में पड़े कि उन्हें अपने मरने का निश्चय हो गया, पर फिर भी ईश्वर ने उनकी रक्षा की और अन्त में अपनी धीरता वीरता और बुद्धि से विघ्न बाधाओं को पार कर वे अपने खोये हुये दोस्त के पास पहुंच गये और बड़ी कारीगरी से उसे छुड़ा लाये। मूल्य— १।)

मायावती

तीन वीर पुरुष घर से उदास हो यात्रा कर के अपना मन वह लाने के लिये बाहर निकले। हिमालय पर्वत श्रेणी को पार करके तिब्बत में प्रवेश करने और फिर बहुत दूर उत्तर की ओर चल जाने पर ये एक विचित्र अग्नि और सूर्यपूजकों के देश में पहुंचे। रास्ते में बड़ी बड़ी घटनायें हुई, डाकुओं से लड़ाई, आग का फौआरा ज्वालामुखी पहाड़, विचित्र जन्तुओं से युद्ध, आदि कई आफतों से पार होने पर जब वे उस देश में पहुँचे तो वहां के विचित्र पुरुषों, अद्भुत रीति रिवाज और आश्चर्य जनक बातों को देख ये घबड़ा गये। वहां भी इन्हें कई चक्करों में फंसना पड़ा रानियों में गृहयुद्ध, सूर्यपूजकों का अन्ध विश्वास, बलिदान की प्रथा आदि से इन्हें बड़ी तकलीफ उठानी पड़ी। अन्त में सब आफतों को पार कर ये उस देश में राजा हो गये। बड़ी रोचक पुस्तक है मूल्य-- २।

अर्थ का अनर्थ

आज कल इटली स्वतंत्र है और अच्छे सभ्य राष्ट्रों में गिना जाता है। पर दो ही तीन सौ वर्ष पहिले उसकी दूसरी ही अवस्था थी। उस समय पादड़ियों का प्राधान्य था, उनका दबदबा सब फैला हुआ था, धर्म के नाम पर बड़े २ अत्याचार होते थे, राजा रानियें और राजकुमारियें बिलासिनी और चरित्रहीना थीं, प्रजा मूर्ख थी और डाकू इतने प्रबल थे कि वे मौका पाकर राजा को भी लूट लिया करते थे। इस उपन्यास में इटली की उसी समय की अवस्था का हाल है। इसमें धर्म के नाम पर पादड़ियों की करतूतें, राजमहलों के गुप्त षड्यंत्र, राजकुमारियों की प्रेम लीला, और डाकुओं के जाल का रोचक हाल ऐसी सुन्दरता और अनूठेपन से लिखा ग कि किताब शुरू करने पर फिर छोड़ने का मन नहीं करेगा। मूल्य— १॥=)

हवाई डाकू

एक रोचक वैज्ञानिक और जासूसी उपन्यास। इस पुस्तक में एक डाकू दल का हाल लिखा गया है जो एक विचित्र प्रकार के नये आविष्कृत हवाई जहाज पर चढ़ कर जगह जगह डाके डाला करता था। कोई नहीं जानता था यह कहां रहता है कहां से आकर डाका डालता और फिर कहां चला जाता है। गुप्त रह कर इसने सैकड़ों वायुयान तोड़े, पचासों बड़े बड़े जहाज डुबाये और अपने विचित्र और भयानक वैज्ञानिक यंत्रों की सहायता से हर कईबर्बाद कर हजारों आदमियों की जानें मारीं। अन्त में, एक औरत ने बड़ी चालाकी से इसके रहने की जगह का पता लगाया और स्वयं एक विचित्र यंत्र बना कर उसकी मदद से इसका नाश किया। बड़ा ही रोचक उपन्यास है। कई रंगीन और सादे चित्रा सहित। मूल्य केवल— १॥)

जीवन संध्या

प्रसिद्ध बंगाली लेखक श्रीयुत आर० सी० दत्त महाशय का नाम प्रायः अधिकांश उपन्यास प्रेमियों ने सुना होगा। यह उपन्यास उन्हीं ख्यातनामा लेखक की लेखनी से निकली मूल पुस्तक का अनुवाद है। उपन्यास उस समय की घटनाओं के आधार पर है जब कि राणा प्रताप सिंह अपना सुख, राज्य और प्राणों का मोह त्याग यवनों से अपनी जन्म भूमि के उद्धारार्थ युद्ध कर रहे और प्रबल यवन गण राजपूतों का मान मर्दन कर उनका सिर नीचे झुकाना चाहते थे। इस पुस्तक में स्त्री का अटल स्नेह, भील बाला का स्वार्थ त्याग प्रेम को विजय संतोष के फल का मूल्य क्या होता है यह भी आप देखेंगे। करीब ३०० पृष्ठ की मोटी पुस्तक का मूल्य केवल— १॥)